© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad

Course : Master of Arts

Edition : 2021

प्रकाशक	:	रजिस्ट्रार, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
प्रकाशन	:	2021
मूल्य	:	
प्रतियां	:	
कम्पोजिंग	:	एस पी हाई-टेक प्रिंटर्स प्राइवेट. लिमिटेड. हैदराबाद
डिजाइनिंग एंड सटिंग	:	डॉ. मो. अकमल ख़ान, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू युनिवर्सिटी, हैदराबाद
मुद्रक	:	एम्/एस. प्रिंट टाइम & बिज़नेस इंटरप्राइसेस, हैदराबाद

आधुनिक हिंदी काव्य (भाग- 1-1936 तक)

(Modern Hindi Poetry (Part – 1 to 1936))

For M.A. 1st Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

Director: dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

इकाई 3: द्विवेदी युगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मूल पाठ : द्विवेदी युगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

3.3.1 द्विवेदी युग का आविर्भाव

3.3.2 द्विवेदी युग, नामकरण, समय सीमा

3.3.3 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

3.3.4 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

3.3.5 द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

3.4 पाठ सार

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

3.6 शब्द संपदा

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल एक तरह से जागरण का संदेश लेकर आया। सन् 1857 ई. में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने नवजागरण का बिगुल बजा दिया और भारतीयों में देशभक्ति, स्वतंत्रता एवं राष्ट्रीय उत्थान की भावनाएँ जागृत होने लगीं। भारतेंदु युग के काव्य में इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ, वहीं द्विवेदी युग में इनहें बढ़ने का मौका मिला। इस नवजागरण को जन-जन तक पहुँचाने में 'सरस्वती' पत्रिका का बहुत योगदान रहा है। 'सरस्वती' का प्रकाशन 1900 ई. से प्रारंभ हुआ तथा 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसका संपादन भार संभाला। इस पत्रिका ने भाषा और साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में परिष्कार किया। द्विवेदी जी के 'सरस्वती' के संपादन का कार्य संभालने से लेकर 1918 तक के समय को 'द्विवेदी युग' की संज्ञा दी जाती है। द्विवेदी युग का यह नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के गरिमा मंडित व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया है।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के प्श्चात आप -

- द्विवेदी युगीन काव्य धारा की प्रवृत्तियों से परिचित हो सकेंगे।
- द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के बारे में जान सकेंगे।
- द्विवेदी युग के कवियों के वण्र्य विषयों को जान सकेंगे।
- खड़ी बोली कविता के विकास में द्विवेदी युग के महत्व को समझ सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : द्विवेदी युगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

3.3.1 द्विवेदी युग का आविर्भाव

उन्नीसवीं शताब्दी का अंत होते-होते साहित्य की हवा बदलने लगी। जनता ने भक्ति और शृंगार जैसी प्रवृत्तियों से परिपूर्ण कविताओं में रुचि लेना बंद कर दिया। समस्यापूर्तियों एवं नीरस तुकबंदियों से हृदय ऊब गया था तथा काव्य की भाषा के रूप में ब्रजभाषा का आकर्षण भी अब खत्म होने लगा था। धीरे-धीरे ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली हिंदी ने ले लिया।

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल एक तरह से जागरण का संदेश लेकर आया था। सन 1857 ई. में हुए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने नवजागरण का एलान कर दिया था। परिणामस्वरूप भारतीय जनता में देशभक्ति, स्वतंत्रता, राष्ट्र का उत्थान, स्वदेशाभिमान की भावनाएँ जागृत होने लगीं। भारतेंदु युग में जहाँ इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ, वहीं द्विवेदी युग में ये पल्लवित एवं विकसित हो गईं। नवजागरण की लहर को जन-जन तक पहुँचाने में 'सरस्वती' पत्रिका का बहुत अधिक योगदान है।

आप जानते ही हैं कि, 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन 1900 ई. से प्रारंभ हुआ। सन् 1903 ई. में महावीर प्रसाद द्विवेदी इस पत्रिका के संपादक बने। द्विवेदी जी ने इस पत्रिका के माध्यम से ऐसे साहित्य को प्रकाशित किया जिसने नवजागरण की लहर को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। द्विवेदी युग का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया है। उन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में हिंदी जगत की बहुत सेवा की और हिंदी साहित्य की दिशा को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने इस पत्रिका के माध्यम से कवियों को पुराने विषयों जैसे नायिका भेद आदि को छोड़कर नए विषयों पर कविता लिखने को प्रेरित किया। काव्यभाषा के रूप में ब्रजभाषा को छोड़कर उन्होंने खड़ी बोली का प्रयोग करने का सुझाव दिया। इसके पीछे कारण यह था कि गद्य और पद्य दोनों की भाषा एक हो। द्विवेदी जी ने कवियों को उनके कर्तव्य का बोध कराया तथा यह बताने की कोशिश की कि काव्य में किस प्रकार विषय-वस्तु, भाषा-शैली तथा छंद योजना आदि के द्वारा

नवीनता लाई जा सकती है। उन्होंने भाषा संस्कार, व्याकरण की शुद्धि तथा हिंदी में विराम चिह्नों के प्रयोग पर भी बन दिया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी का हिंदी साहित्य में बहुत ही अतुलनीय योगदान रहा। उनका हिंदी साहित्य में योगदान एक विचारक, दिशा निर्देशक तथा चिंतक के रूप में देखा जा सकता है। उनकी प्रेरणा से हिंदी के अनेक कवि सामने आए जो उनके आदर्शों को लेकर आगे बढ़े। उन्होंने एक ओर तो भारतेंदुकालीन समस्यापूर्ति, रीति निरूपण तथा श्रृंगारिकता से हिंदी कविता को मुक्त किया तथा दूसरी ओर 'खड़ी बोली' को कविता की भाषा बना दिया।

द्विवेदी युग में भाषा के साथ-साथ छंदों में भी परिवर्तन देखा गया। अब कवि संस्कृत के वर्ण वृत्तों का प्रयोग करने लगे। 'सरस्वती' पत्रिका ने भाषा और साहित्य दोनों में अपना योगदान दिया। खड़ी बोली का विकास तो इस युग की सबसे महत्वपूर्ण देन है ही। खड़ी बोली को परिमार्जित करने तथा उसे व्याकरणिक शुद्धता प्रदान करने में 'सरस्वती' पत्रिका का बहुत अधिक योगदान रहा है। द्विवेदी जी के भाषा विषयक योगदान पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है, "खड़ी बोली के पद्य विधान पर द्विवेदी जी का पूरा-पूरा असर पड़ा। बहुत से कवियों की भाषा शिथिल और अव्यवस्थित होती थी। द्विवेदी जी ऐसे कवियों की भेजी हुई कविताओं की भाषा दुरुस्त करके 'सरस्वती' में छापा करते थे। इस प्रकार कवियों की भाषा साफ होती गई और द्विवेदी जी के अनुकरण में अन्य लेखक भी शुद्ध भाषा लिखने लगे।" 'सरस्वती' पत्रिका ने कई नए कवियों को जन्म दिया। उनकी प्रेरणा से अनेक कवियों ने नए-नए विषयों पर कविताएँ लिखीं जिनका प्रभाव समाज पर भी पड़ा।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरणा लेकर आगे बढ़ने वाले अनेक कवि इस युग में हुए। जैसे मैथिलीशरण गुप्त, गोपालशरण सिंह, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तथा लोचनप्रसाद पांडेय आदि। इनके अलावा कुछ कवि ऐसे भी इस युग में हुए जो पहले ब्रजभाषा में कविता कर रहे थे तथा उनकी कविता का विषय भी प्राचीन हुआ करता था। ऐसे कवियों ने भी 'सरस्वती' पत्रिका और द्विवेदी जी के नवीन विचारों से प्रभावित होकर अपनी कविता में नवीनता का समावेश किया। इससे खड़ी बोली में कविता लिखने को प्रोत्साहन मिला। ऐसे कवियों में मुख्य हैं - अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक, नाथुराम शर्मा 'शंकर' आदि। इन कवियों की कविताओं में नवजागरण, राष्ट्रीयता और स्वदेशानुराग जैसे गुण पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न

- महावीर प्रसाद द्विवेदी काव्यभाषा के रूप में खड़ी बोली का प्रयोग क्यों करना चाहते थे?

3.3.2 द्विवेदी युग, नामकरण, समय सीमा

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस युग को प्रकरण 3 गद्य साहित्य का प्रसार द्वितीय उत्थान नाम दिया है। जिसमें गद्य विद्या का विवेचन किया है और ये लिखते हैं कि "इस द्वितीय उत्थान के आरम्भ काल में हम पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी जी को ही पद्य रचना की एक प्रणाली के

प्रवर्तक के रूप में पाते हैं। गद्य पर जो शुभ प्रभाव द्विवेदी जी का पड़ा है उसका उल्लेख गद्य के प्रकरण में हो चुका है।"

इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस युग के गद्य-पद्य दोनों विधाओं में द्विवेदी जी का प्रमुख स्थान था। 'द्विवेदी युग' को शुक्ल जी ने 'द्वितीय उत्थान' नाम दिया है, क्योंकि आधुनिक काल का विभाजन उन्होंने प्रकरण तथा उत्थानों के आधार पर किया है। डॉ. नगेन्द्र ने इस काल खंड का नया नाम 'जागरण-सुधार' देना चाहकर भी 'द्वितीय युग' को उचित कहा है। नगेन्द्र जी की मन की अभिव्यक्ति इसी से स्पष्ट हो जाती है कि उन्होंने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में भी द्विवेदी युग के नीचे लघु कोष्ठक के मध्य (जागरण सुधार काल) भी लिखा है। अतः इस काल खंड के पथ-प्रदर्शक विचारक और सर्वस्वीकृत साहित्य नेता आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर इसका नाम 'द्विवेदी युग' उचित ही है। अतः इस काल खंड का सर्वमान्य नाम 'द्विवेदी युग' है।

समय सीमा:- डॉ. नगेन्द्र ने इस काल खंड का प्रारंभ सरस्वती पत्रिका के संपादन काल से माना है। यह बहुत सौभाग्य की बात है कि जनता की रूचि एवं आकांक्षाओं के पारखी तथा साहित्य के दिशा-निर्देशक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप सन् 1900 ई. में सरस्वती का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। कालावधि 18 वर्ष मानते हुए सन् 1900-1918 ई. तक द्विवेदी युग की सीमा मानी गई है।

3.3.3 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल कब से शुरू हुआ इसके संबंध में विद्वानों में मतभेद है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सन् 1900 से आधुनिक युग का आरंभ माना है। जबकि कुछ विद्वाद सन् 1850 से ही आधुनिक काल का प्रारम्भ बताते हैं। इसी समय से आधुनिक काल की प्रवृत्तियों के संकेत दिखाई पड़ने लगे थे। पहले के तीनों युगों की अपेक्षा आधुनिक युग कई कारणों से भिन्न है। हम देखते हैं कि आधुनिक काल में आकर कविता की भाषा खड़ी बोली बन गई। पहले साहित्य केवल पद्यबद्ध था, लेकिन आधुनिक काल में आकर पद्य के साथ-साथ गद्य के विभिन्न रूपों का भी विकास हुआ। भिन्न भिन्न विषयों पर कविताएं लिखी जाने लगी। जनता में देशव्यापी जागरण का संदेश फैलाना इस समय के साहित्यकारों का लक्ष्य रहा। अतः विषय और शैली की दृष्टि से हिंदी साहित्य परंपरा के बन्धन से मुक्त होकर एक नए युग में कदम रख रहा था इस समय के साहित्य पर स्वाभाविक तौर पर तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा। अन्य विधाओं के समान हिंदी कविता का भी विकास इन बदली हुई परिस्थितियों के आलोक में हुआ।

आधुनिक कालीन कविता का आरंभ किन किन परिस्थितियों में हुआ? आधुनिक काल की कविता उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों से प्रभावित है।

राजनीतिक परिस्थितियाँ:- सन् 1757 ई. में सिराजुद्दौला को प्लासी के युद्ध में पराजित करके अंग्रेज़ों ने बंगाल पर अधिकार जमाया 1857 तक आते दिल्ली को जीतकर उनका क्रमशः भारत में फैलता गया। अपने अधीनस्थ प्रदेशों में उन्होंने अपने ढंग की शासन व्यवस्था लागु की। अंग्रेज़ी नीति के विरुद्ध देसी राजाओं सिपाहियों और किसानों ने मिलकर 1857 में व्यापक तौर पर विद्रोह किया। इस संघर्ष के बाद ईस्ट इन्डिया कम्पनी का शासन समाप्त हुआ और भारत ब्रिटिश साम्राज्य का उपनिवेश बन गया। अंग्रेज़ों ने अपनी आर्थिक, शैक्षणिक तथा प्रशासनिक नीतियों को परिवर्तित किया। 1885 में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई। जिस कारण अंग्रेज़ शासन से मुक्ति की इच्छा तीव्र होने लगी। उस समय जो सांस्कृतिक और राष्ट्रीय नवजागरण हुआ उसका प्रभाव उस समय की हिंदी कविता में दिखाई पड़ता है।

सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थिति:- जैसा कि हम जानते हैं सन् 1800 ई. में कलकत्ते में फोर्ट विलयम कॉलेज की स्थापना हुई। इससे भारतीय बहुत सारे साहित्य से परिचित हुए। इसने जनता में स्वतंत्र चिन्तन की क्षमता दी। इस समय कई सुधारवादी आन्दोलन हुए जो समाज में व्याप्त बुराइयों और अंधविश्वासों को दूर करके जनता में सांस्कृतिक जागरण पैदा करने के लक्ष्य में हुए थे। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसफिकल सोसाइटी आदि के द्वारा नए भारतीय समाज के निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। जाति प्रथा, सती प्रथा जैसी कुप्रथाओं का विरोध हुआ तथा विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा, स्त्री को पुरूष के बराबर का अधिकार आदि विषयों पर इस संस्थाओं ने बहुत जोर दिया। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के प्रसार में भी इन संस्थाओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। इन संस्थाओं ने धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में बहुत अधिक प्रगति की।

आर्थिक परिस्थिति:- अंग्रेज़ों ने भारत को अपना बाज़ार बनाने के लिए यहाँ के कुटीर धंधों को समाप्त करने लगे। जमीन्दारी प्रथा लागु कर दी गई खेत को व्यक्तिगत संपत्ति बना दिया गया। कृषि का उत्पाध जो पहले केवल गाँवों तक सीमित था, अब बाज़ारों में जाने लगा। महंगाई, अकाल, टैक्स आदि से गरीबी बढ़ती गई। इस समय के गरीबी की आवाज़ तत्कालीन कविता में सुनाई पड़ने लगी थी।

साहित्यिक परिस्थिति:- आधुनिक काल में साहित्य जनसाधारण के लिए लिखा जाने लगा। इस युग में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक नवजागरण हुआ उससे प्रेरणा पाकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त आदि साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के द्वारा लोगों में नयी चेतना जगाने की कोशिश की। गद्य का आविर्भाव हुआ तथा गद्य और पद्य दोनों के लिए खड़ी बोली का प्रयोग आदि इस युग साहित्यिक विशेषताएं है। अतः हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक कविता इन बदली हुई परिस्थितियों की उपज है।

बोध-प्रश्न

- द्विवेदी युग में कौन कौन से सुधारवादी आन्दोलन चलाए गए?

3.3.4 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

द्विवेदी युगीन साहित्य समाजोन्मुखी साहित्य है किंतु व्यक्ति की भी पूर्णतः उपेक्षा नहीं करता। इस युग के सभी साहित्यकारों को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली में काव्य रचना करने के लिए प्रेरित किया। अतः 1900 से लेकर 1918 तक के युग को 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है। इस काल की सभी परिस्थितियाँ - राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इस समय के लेखकों की संवेदना और बौद्धिकता के मिश्रण को दर्शाती हैं। इस युग की प्रवृत्तियाँ निम्न प्रकार से हैं-

देशप्रेम की भावना

द्विवेदी युग के कवियों ने आम जनता के बीच राष्ट्रप्रेम की लहर चलाई। कवियों ने स्वतंत्रता के प्रति जनमानस को जागरूक किया। इस युग के रचनाकारों का राष्ट्रप्रेम समस्याओं के कारणों पर विचार करने के साथ-साथ उनके समाधान ढूँढ़ने का भी प्रयास करता है। मैथिलीशरण गुप्त की रचना 'भारत-भारती' को राष्ट्रप्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। 'भारत भारती' के कारण ही मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' कहा गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में पहले पहल हिंदी प्रेमियों का सबसे अधिक ध्यान खींचने वाली पुस्तक भी यही है। इसकी लोकप्रियता का आलम यह रहा है कि इसकी प्रतियाँ रातोंरात खरीदी गईं। प्रभात फेरियों, राष्ट्रीय आंदोलनों, शिक्षा संस्थानों, प्रातःकालीन प्रार्थनाओं में 'भारत भारती' के पद गांवों-नगरों में गाए जाने लगे।

सामाजिक समस्याओं का चित्रण

द्विवेदी युग के कवियों ने सामाजिक समस्याओं, जैसे दहेज प्रथा, नारी उत्पीड़न, छुआछूत, बाल विवाह आदि को कविता का विषय बनाया। इस काव्यधारा में उपेक्षित नारियों को कविता में स्थान दिया गया। 'यशोधरा' में मैथिलीशरण गुप्त ने गौतम बुद्ध की पत्नी, 'साकेत' में उर्मिला, 'विष्णुप्रिया' में चैतन्य महाप्रभु की पत्नी के दुख-दर्द को अभिव्यक्त किया है। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'वैदेही वनवास' और 'प्रियप्रवास' के माध्यम से सीता और राधा के चरित्रों को आधुनिक संदर्भ में नया रूप दिया। यह युग इसी कारण से सुधारवादी युग कहालाता है।

नैतिकता एवं आदर्शवाद

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी नैतिकता एवं आदर्श पुजारी माने जाते हैं। द्विवेदी युगीन काव्य आदर्शवादी एवं नीति पर आधारित काव्य है। इस युग के साहित्य में शृंगारिकता दिखाई नहीं पड़ती। हरिऔध कृत 'प्रियप्रवास', मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत', 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वध' आदि आदर्शवादी कृतियाँ हैं। रीतिकाल में राधा-कृष्ण शृंगार के आलंबन हैं, जबकि द्विवेदी युग की राधा जगत में सरोकार रखने वाली तथा समाज सेविका के रूप में दिखाई देती है।

सामान्य मानवता

द्विवेदी युग में सामान्यतः मानव-मात्र के सुख-दुःख का बहुत ही सहज एवं सजीव चित्रण किया गया है। पहले के काव्य में ईश्वर, अवतार, राजा, सामंत, योद्धा तथा नायिकाओं को केंद्रीय स्थान मिलता था। द्विवेदी युग में सामान्य मानव को यह स्थान मिला। इस काल की कविताओं में दीन हीन कृषक तथा विधवा के दुख का चित्रण किया गया है। अशिक्षित नारियों की दशा का भी वर्णन इस युग के काव्य में मिलता है। साथ ही, उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के प्रति किए गए अन्याय को कविताओं का विषय बनाया गया।

वर्ण्य विषय का विस्तार

द्विवेदी युग में वण्र्य विषय का बहुत अधिक विस्तार देखा गया। इसमें जीवन तथा जगत के सभी दृश्य और पदार्थ कविता के विषय बनाए गए। छोटे-छोटे विषयों पर कविता लिखी जाने लगी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'कवि कर्तव्य' निबंध में लिखा था- "चींटी से लेकर हाथी पर्यंत पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यंत, बिंदु से लेकर समुद्र पर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पर्वत - सभी पर कविता हो सकती है।" इस युग के वैश्य वैविध्य अनुमान कुछ तत्कालीन कविताओं के शीर्षकों से सहज ही लगाया जा सकता है। जैसे परोपकार, मुरली, कृषक, सत्य, लड़कपन, ग्रंथ-गुण-गान, ईर्ष्या, निद्रा, कलियुगी साधु, पुस्तकें, प्रेम, ब्रह्मचर्य, हिंदी की अपील, बालक, हिंदी-साहित्य सम्मेलन, मूढ़ मानव, मेंहदी, नैकटाई, मनोव्यथा, कामना, विद्या, कुलीनता, पौरुष, शिशु-स्नेह, सुखमय जीवन, भारतीय छात्रों से नम्र निवेदन, लक्ष्मी-लीला, सपूत, ग्राम गौरव, सज्जनों का स्वभाव, समालोचक-लक्षण, दरिद्र विद्यार्थी। इस विषय विस्तार का एक परिणाम यह हुआ कि कविता अभिधा प्रधान वर्णनों से बाधिक और इतिवृत्तात्मक बनने लगी। यही इतिवृत्तात्मकता ही द्विवेदी युग की बड़ी सीमा है।

हास्य-व्यंग्य

द्विवेदी युग में हास्य-व्यंग्य से परिपूर्ण काव्य बहुत कम लिखे गए। भारतेंदु युग जैसी ज़िंदादिली, चुहलबाजी और फक्कड़पन इस युग के कविता में नहीं पाई जाती। जितना भी साहित्य इस समय रचा गया वह उच्च कोटि का और मर्यादित है। इस युग के साहित्य में सामाजिक कुरीतियाँ, धर्माडंबर, राजनीतिक गिरावट तथा व्यभिचार आदि को हास्य-व्यंग्य का लक्ष्य बनाया गया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं' में गाँव को छोड़कर शहर जाने वाले और विदेशी सभ्यता का आँख मूँदकर अनुकरण करने वाले लोगों पर व्यंग्य किया। इस युग के सबसे सशक्त व्यंग्यकार बालमुकुंद गुप्त माने जाते हैं। इन्होंने लार्ड कर्ज़न को आलंबन बनाकर हास्य-व्यंग्य कविताएँ रचीं। नाथुराम शर्मा शंकर, ईश्वरी प्रसाद शर्मा तथा जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी की कविताओं में भी हास्य-व्यंग्य दिखाई देता है।

सभी काव्य रूपों का प्रयोग

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने खड़ी बोली के प्रथम महाकाव्य 'प्रियप्रवास' रचना की तो मैथिलीशरण गुप्त ने अपने महाकाव्य 'साकेत' में उर्मिला की दृष्टि से रामकथा का पुनर्पाठ प्रस्तुत किया। इस युग के खंड काव्यों में प्रमुख हैं - मैथिलीशरण गुप्त रचित 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वध' और 'किसान', जयशंकर प्रसाद रचित 'प्रेमपथिक', सियारांशरण गुप्त रचित 'मौर्य विजय' और रामनरेश त्रिपाठी रचित 'मिलन'। इनके अलावा इस काल में अनेक पद्य कथाएँ भी रची गईं। जैसे विकत भट, शकुंतला जन्म, सती सीता आदि। मुक्तक रचना औयर प्रगीतों की दृष्टि से भी यह युग काफी समृद्ध है। मैथिलीशरण गुप्त, मुकुटधर पांडेय और माखनलाल चतुर्वेदी ने इस युग में काफी प्रगीत रचे।

भाषा परिवर्तन

इस युग में काव्य की मुख्य भाषा ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। यद्यपि आरंभ में खड़ी बोली कविता नीरस तुकबंदी के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं थी, लेकिन बाद में इसमें निखार आता गया तथा पाठक को यह सरलतापूर्वक समझ में आने लगी। 'जयद्रथ वध' की प्रसिद्धि ने ब्रजभाषा के मोह का वध कर दिया तो 'भारत भारती' की लोकप्रियता खड़ी बोली की विजय भारती सिद्ध हुई। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के मार्गदर्शन में इस युग की काव्य भाषा सरल, सुबोध, शुद्ध एवं रसों के अनुरूप ढलती गई।

नारी के प्रति दृष्टिकोण

द्विवेदी युग के कवियों में आधुनिकता के कारण नारी के प्रति प्रगतिशील दृष्टि दिखाई देती है। उर्मिला, हिडिंबा, कैकेयी, यशोधरा जैसे जिन ऐतिहासिक-पौराणिक नारी पात्रों को हाशिये पर छोड़ दिया था, उन्हें द्विवेदी युगीन कवियों ने केंद्र में लाकर अपने काव्य में नायिका का स्थान दिया है। उन नारी पात्रों का चित्रण आज के संदर्भ में करना एक महत्वपूर्ण बात है। 'साकेत' की उर्मिला केवल एक पौराणिक पात्र नहीं, बल्कि आज के युग की विशेषताओं से युक्त नारी है।

इस चर्चा से स्पष्ट है कि द्विवेदी युग के कवियों ने हिंदी काव्य को शृंगारिकता से आधुनिकता की ओर ले जाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया साथ ही इन्होंने खड़ी बोली को कविता की भाषा के रूप में मान्यता दिलवाई। द्विवेदी युगीन चेतना राष्ट्रीय प्रेम, सामाजिक सरोकार, प्रकृति और भाषा शैली सभी स्तरों पर प्रखर दिखाई देती है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग 'सुधारवादी युग' क्यों कहलाता है?
- द्विवेदी युग की कविताओं में नारी के प्रति किस प्रकार की दृष्टि दिखाई देती है?

3.2.5 द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

द्विवेदी मंडल के कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही', गोपालशरण सिंह, लोचन प्रसाद पाण्डेय और महावीर प्रसाद द्विवेदी आते हैं। उस समय बहुत सारे ऐसे कवि जो ब्रजभाषा में कविता लिख रहे थे तथा उनकी विषय वस्तु एवं शैली भी परम्परागत थी, वैसे कवियों ने भी द्विवेदी जी एवं सरस्वती पत्रिका से प्रभावित होकर खड़ी बोली तथा नवीन विषयों पर कविता लिखने लगे। इन कवियों में मुख्य रूप से अयोध्या सिंह उपाध्याय, 'हरिऔध', श्रीधर पाठक, नाथूराम शर्मा 'शंकर' और राय देवी प्रसाद पूर्ण आदि हैं।

द्विवेगी युग में ब्रजभाषा के प्रमुख कवि:-

इन कवियों में प्रमुख हैं, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', सत्यनारायण 'कविरत्न', शिव सम्पत्ति, किशोरीलाल गोस्वामी, सुधाकर द्विवेदी, जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' आदि।

राष्ट्रीय काव्य धारा के प्रमुख कवि:-

द्विवेदी - युग में राष्ट्रीय काव्य धारा के अंतर्गत प्रमुख कवि - मैथिलीशरण गुप्त, नाथुराम शर्मा 'शंकर', गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही', राम नरेश त्रिपाठी तथा राय देवी प्रसाद 'पूर्ण' आदि हैं। इन कवियों की रचनाओं में राष्ट्रीयता, स्वदेश प्रेम तथा भारत के अतीत गौरव का गान मिलता है।

स्वच्छंद काव्य धारा के प्रमुख कवि:-

स्वच्छंदतावादी कवि उन कवियों के लिए प्रयोग किया गया जिनके काव्य में रोमानी भाव बोध व्याप्त था। स्वच्छंदतावादी कवियों ने प्रकृति प्रेम, स्वच्छंद प्रेम एवं वैयक्तिक स्वातन्त्रय को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। इन कवियों की कविताओं का विषय बहुत नवीन हुआ करता था और दूसरी बात यह कि ये रचनाएँ युगीन चेतना से हटकर है। द्विवेदी मंडल के स्वच्छंद काव्य धारा के कवियों में श्रीधर पाठक, नाथूराम शर्मा शंकर, बालमुकुंद गुप्त, लाला भगवानदीन, राय देवी प्रसाद 'पूर्ण', सैयद अमीर अली 'मीर', कामता प्रसाद गुरु, गया प्रसाद शुक्ल स्नेही रूप नारायण पांडेय, लोचन प्रसाद पांडेय, राम नरेश त्रिपाठी, ठाकुर गोपाल शरण सिंह, मुकुटधर पाण्डेय आदि प्रमुख हैं। इन कवियों की प्रमुख विशेषताएँ - प्रकृति का पर्यवेक्षण, उसकी स्वच्छंद मगिमाओं का चित्रण, देशभक्ति, काव्य भाषा के रूप में खड़ी बोली का प्रयोग आदि है। स्वच्छंदता वादी काव्य की यही धारा आगे चलकर 'छायावाद' में बदल जाती है।

श्रीधर पाठक (1857 ई. - 1928 ई.)

श्रीधर पाठक खड़ी बोली के प्रथम कवि हैं। पहले वे ब्रजभाषा में कविता करते थे। लेकिन महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा 'सरस्वती' का संपादन संभालने से पूर्व ही इन्होंने खड़ी बोली में कविता लिखकर अपनी स्वच्छंद वृत्ति का परिचय दे दिया था। इनकी कविताओं का मुख्य विषय देशप्रेम, समाज सुधार तथा प्रकृति चित्रण है। एक तरफ इन्होंने 'भारतोत्थान', 'भारत प्रशंसा' आदि देशभक्तिपूर्ण कविताएँ लिखी तो दूसरी ओर उनकी 'जार्ज वंदना' जैसी कविताओं में राजभक्ति भी दिखाई देती है। जैसे 'बाल विधवा' में विधवाओं की दशा का वर्णन किया गया है।

इन्हें प्रकृति चित्रण वाली कविताओं में अधिक सफता प्राप्त हुई। 1900 में उन्होंने 'गुणवंत हेमंत' नाम की कविता लिखी। इसमें प्रकृति का बहुत ही वास्तविक रूप से वर्णन किया गया है। इसमें ज्वार, बाजरा, खरीफ, रबी, सौंफ, पालक आदि का वर्णन किया गया है। उन्हें हिंदी कविता में स्वच्छंदतावादी धारा के प्रथम उत्थान का कवि माना जाता है।

पाठक जी कुशल अनुवादक भी थे। उन्होंने गोल्डस्मिथ की तीन रचनाओं का अनुवाद किया है - जैसे 'हरमिट' का 'एकांतवासी योगी' नाम से तथा 'डेजर्टेड विलेज' का 'ऊजड़ ग्राम' नाम से तथा 'ट्रेवलर' का 'श्रांत पथिक' नाम से। इनकी मौलिक कृतियों में 'वनाष्टक', 'कश्मीर सुषमा' (1904), 'देहरादून' (1915) और 'भारतगीत' (1928) आदि विशेष उल्लेखनीय है। 'आराध्य शोकांजलि' नामक शोक गीत उन्होंने 1906 ई. में अपने पिता की मृत्यु पर लिखा था।

श्रीधर पाठक ने छंदों को नए ढाँचे में ढाला। 'एकांतवासी योगी' की रचना खड़ी बोली में लावणी या ख्याल के ढंग पर की गई है। इसमें खड़ी बोली कविता के लिए रोला छंद की उपयुक्तता दिखाई गई है। यही नहीं उन्होंने सवैया छंद में भी खड़ी बोली का मधुरता के साथ प्रयोग करके दिखाया।

बोध प्रश्न

- श्रीधर पाठक की कविताओं का मुख्य विषय क्या था?

महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864 ई. - 1903 ई.)

द्विवेदी युग के प्रवर्तक कवि महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म रायबरेली के दौलतपुर नामक गाँव में 1864 ई. में हुआ। 1903 ई. में ये 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक बने तथा 1920 तक इसी पद पर रहे। उन्होंने गद्य तथा पद्य दोनों तरह की रचनाएँ की हैं। इनकी दोनों तरह की रचनाओं की कुल संख्या लगभग 80 हैं। भारतेंदु युग में गद्य की भाषा के रूप में खड़ी बोली को अपनाया जा चुका था, लेकिन उसे काव्यभाषा के रूप में द्विवेदीजी ने ही स्वीकृति दिलाई। 'सरस्वती' के संपादक के रूप में इन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के उत्थान के लिए जो कार्य किया, उसे कभी भूला नहीं जा सकता। इनके प्रोत्साहन और प्रयास से कवियों और लेखकों की एक पीढ़ी का निर्माण हुआ। खड़ी बोली को परिष्कार तथा स्थिरता प्रदान करने वालों में द्विवेदी जी का नाम अग्रगण्य है। ये कवि, आलोचक, निबंधकार, अनुवादक तथा संपादकाचार्य थे। काव्यमंजूषा, सुमन, कान्यकुब्ज, अबला विलाप, गंगालहरी, ऋतु तरंगिणी, कुमारसंभवसार (अनूदित) आदि द्विवेदी जी की मुख्य रचनाएँ हैं। इनकी कविता की भाषा सहज, सरल तथा प्रायः उपदेशपूर्ण होती थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भाषा के प्रति समन्वयकारी दृष्टि अपनाई, जिससे खड़ी बोली समृद्ध हो सकी। उन्होंने आगरा सम्मेलन में साहित्यकारों को संबोधित करते हुए कहा था कि "जो अपने आपको ब्रज क्षेत्र का मानते हों, वे ब्रज भाषा का प्रयोग कर सकते हैं; परंतु जो अपना जुड़ाव अखंड भारत से मानते हों, उनकी भाषा निश्चिततः खड़ी बोली होनी चाहिए।" उन्होंने रीतिकाल के गिने चुने विषयों के बंधन से कविता को मुक्त करते हुए कहा कि

"चींटी से लेकर हाथी पर्यंत जीव, रंक से लेकर राजा पर्यंत, बिंदु से लेकर सिंधु पर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी, अनंत पर्वत सभी काव्य के विषय हो सकते है।"

यद्यपि द्विवेदी जी ने अनेक स्थानों पर तत्सम प्रधान भाषा का प्रयोग किया है, लेकिन वे आम एवं सरल शब्दावली के प्रयोग में भी सिद्धहस्त थे। जैसे-

तुम्हीं अन्नदाता भारत के सचमुच बैलराज महाराज।
बिना तुम्हारे हो जाते हम दाना-दाना को मोहताज।।
तुम्हें षंड कर देते हैं जो महा निर्दयी जन सिरताज
धिक उनको, उन पर हँसता है, बुरी तरह, यह सकल समाज

वस्तुतः आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का हिंदी साहित्य में योगदान एक विचारक तथा दिशा निर्देशक के रूप में जाना जाता है। उनकी विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए इस युग के कवियों ने एक नवीन काव्यधारा का श्रीगणेश किया तथा खड़ी बोली को काव्य की भाषा बनाया। भाषा के इस नए रूप के प्रयोग के लिए द्विवेदी जी का नाम हमेशा हिंदी साहित्य में याद किया जाएगा।

बोध प्रश्न

- कविता की भाषा के बारे में महावीर प्रसाद द्विवेदी की क्या धारणा थी?
- कविता की विषयवस्तु के बारे में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने क्या कहा?

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865 ई. - 1947 ई.)

हरिऔध जी द्विवेदी युग के प्रख्यात कवि होने के साथ-साथ उपन्यासकार, आलोचक एवं इतिहासकार भी थे। उन्हें 'खड़ी बोली के प्रथम महाकवि' होने का गौरव प्राप्त है। श्रीधर पाठक के बाद हरिऔध जी ही हैं जिन्होंने खड़ी बोली में सरस व मधुर रचनाएँ कीं। उनका जन्म निजामाबाद, जिला आजमगढ़, में सन् 1865 ई. में हुआ। हरिऔध जी ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों ही रचनाएँ की। इन्हें उर्दू, फारसी एवं संस्कृत तीनों भाषाओं का ज्ञान था। उनकी मुख्य रचनाएँ हैं - प्रियप्रवास (1914), पद्मप्रसून (1925), चुभते चैपदे, चैखे चैपदे (1932), बोलचाल, रसकलश तथा वैदेही वनवास (1940)।

हरिऔध जी ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में रचनाएँ की हैं। उन्होंने 'रसकलश' की रचना ब्रजभाषा में की, जबकि उनके द्वारा रचित 'प्रियप्रवास' खड़ी बोली का 'पहला महाकाव्य' है। यह उनकी स्वायत्त रचना है। 'प्रियप्रवास' में राधा और कृष्ण को सामान्य नायक-नायिका के स्तर से ऊपर उठाकर विश्वसेवी तथा विश्वप्रेमी के रूप में चित्रित किया है। हरिऔध जी ने इसमें अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। 'प्रियप्रवास' की राधा को केवल एक विरहिणी के जैसा ही नहीं दिखाया गया है बल्कि वह लोक व समाज सेविका की भूमिका भी निभाती है। इसमें कृष्ण को जननायक के रूप में दिखाया गया है। 'वैदेही वनवास' भी उनका एक श्रेष्ठ महाकाव्य

है। इसका कथानक अपेक्षाकृत छोटा है, इस कारण इसमें राम का शक्ति, सौंदर्य और शील समन्वित चरित्र नहीं उभर सका है, फिर भी इसका ऐतिहासिक महत्व है।

हरिऔध के काव्य में एक ओर सरल तथा प्रांजल हिंदी का अलंकार रहित सौंदर्य है, तो दूसरी ओर संस्कृत के अलंकारों से युक्त पदावली भी पाई जाती है। इनकी रचनाओं में कहीं-कहीं मुहावरों और बोलचाल के शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है, तो दूसरी जगह वैसे शब्दों को छोड़ दिया गया है। द्विवेदी युग की भाषा में जो कर्कशता थी, उसमें हरिऔध जी ने सरसता दिखाई। अतः कहा जा सकता है कि खड़ी बोली को काव्य के उपयुक्त बनाने में हरिऔध जी का मुख्य हाथ है। इन्होंने दोहा, कवित्त, सवैया आदि के साथ ही संस्कृत के वर्णवृत्तों में काव्य रचना की है और इनको सभी में समान रूप से सफलता मिली है। इन्हें 'कवि सम्राट' के रूप में भी जाना जाता है। 'प्रियाप्रवास' पर इन्हें हिंदी का उस काल का सर्वोत्तम पुरस्कार 'मंगलप्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया गया था। इनकी काव्यशैली बड़ी ही भावपूर्ण है। जैसे-

प्रिय पति, वह मेरा प्राणप्यारा कहाँ है?
दुख-जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका मैं आज लौ जो सकी हूँ,
वह हृदय हमारा नैन-तारा कहाँ है?
पल-पल जिसके मैं पंथ को देखती थी,
निशिदिन जिसके ही ध्यान में भी बिताती,
उर पर जिसके है सोहती मुक्तमाला,
वह नवनलिनी से नैनवाला कहाँ है?

बोध प्रश्न

- अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की सर्वोत्तम रचना कौन सी है?
- 'प्रियप्रवास' की क्या विशेषताएँ हैं?

मैथिलीशरण गुप्त (1886 ई. - 1964 ई.)

मैथिलीशरण गुप्त, द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनका जन्म चिरगाँव, झांसी में सन् 1886 ई. में हुआ था। प्रारंभ में इनकी रचनाएँ कलकत्ता से निकलने वाले पत्र 'वैश्योपकारक' में छपती थीं। बाद में इनका परिचय महावीर प्रसाद द्विवेदी से हुआ और इनकी रचनाएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित होने लगीं। द्विवेदी जी गुप्त जी के गुरु के समान थे। भारतीय संस्कृति के प्रवक्ता होने के साथ-साथ गुप्त जी आधुनिक भारत के राष्ट्रीय कवि भी थे। इनकी प्रायः सभी रचनाएँ राष्ट्रीयता से ओतप्रोत हैं। इनकी प्रथम पुस्तक 'रंग में भंग' 1909 ई. प्रकाशित हुई किंतु इन्हें प्रसिद्धि 'भारत भारती' से मिली जिसका प्रकाशन 1912 ई. में हुआ। 'भारत भारती' ने जनता में देश के प्रति गर्व और गौरवपूर्ण भावनाएँ जागृत कीं। इसी से यह 'राष्ट्रकवि' के रूप में प्रसिद्ध हुए। यह उपाधि इन्हें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्रदान की थी। देश

के स्वतंत्र होने पर गुप्त जी को राज्यसभा का सदस्य भी नियुक्त किया गया था। गुप्त जी मातृभूमि को केवल भूमिखंड नहीं, अपितु 'सगुण मूर्ति सर्वेश की' मानते हैं-

नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है।
सूर्य चंद्र युग मुकुट-मेखला रत्नाकर है।।
नदियाँ प्रेम प्रवाह फूल-तारे मंडल है।
बंदीजन खगवृंद शेष-फन सिंहासन है।।
हे मातृभूमि! तु सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की।।

मैथिलीशरण गुप्त रामभक्त कवि थे। मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत' को 'मानस' के पश्चात हिंदी में रामकाव्य का दूसरा स्तंभ माना जाता है। आधुनिक युग में प्रबंध काव्य की परंपरा को कायम रखने वालों में मैथिलीशरण गुप्त का नाम लिया जाता है। इन्होंने दो महाकाव्यों और उन्नीस खंडकाव्यों की रचना की। कविता और निजी जीवन में उन्होंने अंग्रेजी और संस्कृत को कभी अपने ऊपर हावी होने नहीं दिया और न हीं उसका कभी विरोध किया। साधारण बोलचाल की खड़ी बोली का इन्होंने प्रयोग किया। गुप्त जी ने 'तिलोत्तमा', 'चंद्रहास' और 'अनध' नामक तीन नाटक, प्रायः सभी प्रकार के प्रगीत और मुक्तक भी लिखे हैं। किंतु नाटकों, प्रगीतों और मुक्तकों में ये वैसी भाव सृष्टि नहीं कर पाए जैसे कि प्रबंधकाव्यों में। अतः कहा जा सकता है कि गुप्त जी मूलतः प्रबंधकार थे, अन्य साहित्य रूपों में इनकी पकड़ नहीं थी।

गुप्तजी के प्रमुख काव्यग्रंथ हैं - जयद्रथ वध (1910), भारत भारती (1912), पंचवटी (1925), झंकार (1929), साकेत (1931), यशोधरा (1932), द्वापर (1936), जयभारत (1952), विष्णुप्रिया (1957) आदि।

गुप्त जी के काव्य के संबंध में यह स्मरणीय है कि उन्होंने अपने सभी काव्यों में मानवतावाद को दर्शाया है। वे निष्काम कर्म, विश्वबंधुत्व, सामाजिक समता, राष्ट्रीय चेतना एवं हिंदू-मुस्लिम एकता पर विशेष बल देते थे। उनकी कविता अपने युग का स्वच्छ दर्पण है।

बोध प्रश्न

- 'भारत भारती' का प्रकाशन कब हुआ था?
- मैथिलीशरण गुप्त की कविता अपने युग का स्वच्छ दर्पण क्यों है?

रामनरेश त्रिपाठी (1889 ई. - 1962 ई.)

रामनरेश त्रिपाठी का जन्म जिला जौनपुर के कोइरीपुर ग्राम में हुआ था। इन्होंने प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में ही पाई। रामनरेश त्रिपाठी के काव्य में श्रीधर पाठक की तरह स्वच्छंदता की प्रवृत्ति मिलती है। इन्होंने बहुत सारे प्रबंध काव्य लिखे हैं। विशेष बात यह है कि इनके प्रबंध काव्य पौराणिक या ऐतिहासिक आख्यानों पर आधारित नहीं है। इन्होंने भी, 'सरस्वती' पत्रिका के प्रभाव से खड़ी बोली को कविता के भाषा के रूप में अपनाया। त्रिपाठी जी के चार काव्यग्रंथ प्रसिद्ध हैं - मिलन (1977), पथिक (1920), मानसी (1927) और स्वप्न

(1929)। इनमें से मानसी इनकी फुटकर कविताओं का संग्रह है, जिसमें मुख्यतः देशभक्ति, प्रकृति और नीति का चित्रण है। मिलन, पथिक तथा स्वप्न काल्पनिक कथा पर आधारित प्रेमाख्यानक खंड काव्य हैं। इन तीनों में व्यक्तिगत सुख और स्वार्थ को छोड़कर देश के लिए सब कुछ न्यौछावर करने की प्रेरणा दी गई है। त्रिपाठी जी ने अपनी कथावस्तु की कल्पना देश के राजनैतिक वातावरण के अनुसार की है। इस तरह की कथा की कल्पना स्वच्छंदता को दर्शाती है। इन काव्यों में नर-नारी का मनोविज्ञान, उस युग का भावबोध एवं प्रकृति की सुंदरता का वर्णन प्रभावशाली वर्णन मिलता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में "देशभक्ति को रसात्मक रूप त्रिपाठी जी द्वारा प्राप्त हुआ।" वस्तुतः वे एक साहित्यकार के साथ-साथ स्वतंत्रता सेनानी भी थे। उन्होंने देश के प्रायः सभी भागों में भ्रमण किया था। वे ग्राम गीतों (लोक गीतों) का संकलन करने वाले हिंदी के प्रथम कवि थे। उनकी रचनाओं में भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है। उनके काव्य 'पथिक' और 'स्वप्न' में दक्षिण एवं उत्तर भारत की प्रकृति का सुंदर वर्णन मिलता है। साथ ही वहाँ की स्थानीय विशेषताओं को भी उभारा गया है। इनके तीनों प्रबंध काव्य भारतीयों की नैतिकता, त्याग एवं बलिदान भावना को प्रदर्शित करने वाले काव्य हैं।

रामनरेश त्रिपाठी ने सरल सुबोध खड़ी बोली में काव्यरचना की। इससे उन्हें अपार लोकप्रियता मिली। उनकी एक प्रसिद्ध रचना का अंश देखिए-

हे प्रभों! आनंददाता! ज्ञान हमको दीजिए।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।।
लीजिए हमको शरण में, हम सदाचारी बने।
ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बने।।

बोध प्रश्न

- रामनरेश त्रिपाठी के खंड काव्यों की क्या विशेषता है?

नाथूराम शर्मा शंकर (1959 ई. - 1932 ई.)

नाथुराम शर्मा शंकर का जन्म अलीगढ़ जिले के हरदुआगंज नामक स्थान पर सन् 1859 ई. में हुआ। ये हिंदी उर्दू तथा अंग्रेज़ी भाषाओं के अच्छे जानकार हैं। ये बचपन से ही कविता लिखा करते थे। आरम्भ में इनकी रचनाएँ भारतेन्दु युग की 'ब्राह्मण पत्रिका' में छपती थी, फिर 'सरस्वती पत्रिका' में छपने लगी। प्रारम्भ में ये ब्रजभाषा के कवि थे, किन्तु बाद में खड़ी बोली में लिखने लगे। शंकर जी ने देशप्रेम स्वदेशी प्रयोग, समाज सुधार, हिंदी अनुराग, विधवाओं तथा अछूतों को अपने काव्य का विषय बनाया इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं - अनुरागरत्न, 'शंकर-सरोज' 'गर्भखडा रहस्य' तथा शंकर सर्वस्व। उन्हें 'भारतेन्दु प्रज्ञेन्दु' 'साहित्य सुधाकर' आदि उपाधियों से विभूषित किया गया।

बोध प्रश्न

- नाथुराम शर्मा शंकर की रचनाएँ आरम्भ में किस पत्रिका में छपती थी?

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' (1868 ई. - 1915 ई.)

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' का जन्म जबलपूर में सन् 1868 ई. में हुआ। वे संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे तथा वेदान्त में उनकी विशेष रूचि थे। वे साहित्य के अध्ययन में दत्ताचित रहे। उनकी कविताएँ बड़ी सरस एवं भावपूर्ण है। उपका ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों पर समान अधिकार था। उन्होंने श्रृंगार आदि परम्परागत विषयों पर ब्रजभाषा में तथा देशभक्ति आदि नवीन विषयों पर खड़ी बोली में काव्य रचना की है। उन्होंने प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन भी किया है। उनके प्रकृति चित्रण भी सरल और स्वाभाविक है। उन्होंने कालिदास के 'मेघदूत' का अनुवाद 'धारा धरधावन' नाम से (1902 ई.) में किया है। उनकी अन्य काव्य कृतियाँ है। 'स्वदेशी कुण्डल' (1910 ई.), मृत्युंजन (1904 ई.), रामरावण विरोध (1906 ई.) तथा वसन्त-वियोग (1912 ई.) आदि।

रामचरित उपाध्याय:-

रामचरित उपाध्याय गाज़ीपुर के रहने वाले थे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत में हुई, बाद में उन्होंने ब्रजभाषा और खड़ी बोली पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया उन्होंने पहले प्राचीन विषयों पर ही कविताएँ लिखी, किन्तु आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पर्क में आने पर खड़ी बोली तथा नवीर विषयों पर कविताएँ लिखनी आरम्भ की।

उनकी प्रमुख कृतियों में - 'राष्ट्रभारती', 'देवदूत', 'देवसमा' तथा 'विचित्र विवाद' आदि है। इसके अतिरिक्त उपाध्याय जी ने 'रामचरित चिन्तामणि' नामक प्रबन्धकाव्य की भी रचना की।

गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' (1883 ई. - 1972 ई.)

गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही' का जनम उन्नाव जिले के हड़हा ग्राम में सन् 1883 में हुआ। वे उर्दू के विद्वान थे। अतः हिंदी के साथ-साथ उर्दू में भी अच्छी कविता लिखा करते थे। हिंदी में उन्होंने प्राचीन और नवीन शैलियों की कविता लिखी है।

शृंगार आदि परम्परागत विषयों पर वे 'सनेही' उपनाम से तथा राष्ट्रीय भावनाओं की कविता को 'त्रिशुल' उपनाम से लिखते थे। उनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं:- 'कृषक - क्रंदन', 'प्रेम पचीसी', 'राष्ट्रीय वीणा', 'त्रिशुल' आदि।

माखनलाल चतुर्वेदी (1889 ई. - 1968 ई.)

माखनलाल चतुर्वेदी का नाम राष्ट्रीय काव्य धारा के प्रमुख कवियों में लिखा जाता है। राष्ट्रीय धारा के कवियों ने जनमानस में देश के प्रति प्रेम आत्मविशस व स्वतन्त्रता की चेतना को जगाने का कार्य किया। माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं 'हिमकिरीटनी', 'हिमतरंगिनी', 'माता', 'युगचरण', 'समर्पण' आदि काव्य कृतियों के माध्यम से उनकी राष्ट्रीय भाव धारा से अवगत हो सकते हैं।

माखनलाल चतुर्वेदी ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'पुष्प् की अभिलाषा' में पुष्प् को अपना बलिदान उनके लिए देने को कहा है जो पथ बलिदान के लिए जा रहे वीरों का है। पुष्प् उस मार्ग में बलिदानी वीरों के चरणों के नीचे आना चाहता है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (1897 ई. - 1960 ई.)

बालककृष्ण शर्मा नवीन अपनी कविताओं में भारत की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए भारतवासियों को जागृत होने के लिए प्रेरित करते हैं। इनकी कविताओं में राष्ट्रीयता, श्रृंगारिकता एवं रहस्यात्मकता तीनों प्रवृत्तियाँ मिलती है।

> ओ भिखमंगे, ओ पराजित, ओ मज़लुम, अरे चिरदोहिता।
> तु अखण्ड भण्डार शक्ति का, जाग अरे निद्रा सम्मोहित।।

बालकृष्ण 'शर्मा' ने अपनी अधिकांश रचनाएँ जेल में लिखी।

सियाराम शरण गुप्त (1895 ई. - 1963 ई.)

सियाराम शरण गुप्त मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे। गाँधीवाद में उनकी अटूट आस्था थी। उनकी सभी रचनाओं पर अहिंसा, सत्य, करूणा, विश्वबन्धुत्व शान्ति आदि गांधीवादी मूल्यों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं - 'नौर्याविजय', 'अनाथ', 'पूर्वादल', 'विषाद' आदि।

सोहनलाल द्विवेदी (1906 ई. - 1988 ई.)

मोहनलाल द्विवेदी ने राष्ट्रप्रेम की भावनाओं से अभिभूत कई काव्य संग्रह लिखे हैं जिनमें 'भैरवी', 'पूजागीत', 'वासवदता', 'विषपान' आदि प्रमुख हैं। इनपर गांधीवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

सुभद्राकुमारी चैहान (1905 ई. - 1948 ई.)

राष्ट्रीय काव्यधारा से युक्त कविताएँ लिखने में सुभद्राकुमारी चैहान का महत्वपूर्ण योगदान है। उनकी 'झाँसी की रानी' कविता बहुत ही प्रसिद्ध है। 'त्रिधारा', 'मुकुल', 'वीरों का कैसा हो वसन्त' आदि कविताओं में तीखे भावों की पूर्ण भावना मुखरित है। उन्होंने असहयोग आन्दोलन में बहुत ही सक्रिय भूमिका निभाई। 'जलियाँवाला बाग में वसन्त' कविता में इस नृशंस हत्याकाण्ड पर कवयित्री के करूण क्रन्दन से उसकी मूक वेदना मूर्तिमान हो उठी है।

रामधारी सिंह दिनकर (1908 ई. - 1974 ई.)

रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी काव्य कृतियों 'हुँकार', 'रेणुका', 'विपधगा' में साम्राज्यवादी सभ्यता और ब्रिटिश सरकार के प्रति अपनी प्रखर ध्वंसात्मक दृष्टि का परिचय देते

हुए क्रान्ति का आह्वान किया है। स्वतन्त्रता की प्रथम शर्त कुर्बानी तथा समर्पण को काव्य का विषय बनाकर क्रान्ति व ध्वंस के स्वर से मुखरित उनकी कविताएँ नौजवानों के शरीर में उत्साह का संचार करती है।

श्यामनारायण पाण्डेय (1907 ई. - 1991 ई.)

श्यामनाराययण पाण्डेय जी ने 'हल्दीघाटी' तथा 'जौहर' जैसे प्रबन्ध काव्यों की रचना की। 'हल्दीघाटी' महाराणा प्रताप के जीवन पर तथा जौहर रानी पद्मिनी की जौहर कथा पर आधारित काव्य है। इन काव्यों में अद्भूत प्रवाह, ओज और सादगी है।

बोध प्रश्न

- जौहर किस कथा पर आधारित काव्य है?

3.4 पाठ सार

भारतेन्दु युग के काव्य के विकास का दूसरा चरण द्विवेदी युग से आरम्भ हुआ। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के नाम पर इस युग का नाम द्विवेदी युग पड़ा।

हिंदी नवजागरण को तीन चरणों में बाँटा गया है - (1) 1857 का स्वतंत्रता संग्राम, (2) हिंदी साहित्य में भारतेंदु का आगमन और (3) महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा हिंदी भाषा के लिए किया गया कार्य। कहा जा सकता है कि हिंदी नवजागरण की जो परंपरा भारतेंदु युग से प्रारंभ हुई, उसे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने दृढ़ता प्रदान की। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वत' पत्रिका के माध्यम से हिंदी भाषा के विकास के लिए बहुत अधिक कार्य किया। उन्होंने कवियों को भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखने की प्रेरणा दी और लेखकों को उनकी कमियों से अवगत कराया। उन्होंने भाषा की व्याकरणिक भूलों पर ध्यान दिया तथा उसमें सुधार किया। काव्यभाषा में ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली को अपनाने का सुझाव दिया जिससे गद्य और पद्य की भाषा एक हो। द्विवेदी युग का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया। इन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में हिंदी जगत की महान सेवा की। उनसे प्रेरणा लेकर तथा उनके आदर्शों को लेकर आगे बढ़ने वाले अनेक कवि सामने आए। बहुत से ऐसे कवि भी हुए जो पहले ब्रजभाषा में कविता लिख रहे थे, वे द्विवेदी जी तथा 'सरस्वती' पत्रिका से प्रेरित होकर नए विषयों पर खड़ी बोली में कविता लिखने लगे। ऐसे कवियों में अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक और रामनरेश त्रिपाठी प्रमुख हैं। इन कवियों की कविताएँ नवजागरण, राष्ट्रीयता, स्वदेशानुराग एवं स्वदेशी भावना से परिपूर्ण हैं। आगे चलकर द्विवेदी जी के प्रभाव से मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत भारती' तथा 'साकेत' जैसी उत्कृष्ट रचनाओं का प्रणयन किया।

इस प्रकार द्विवेदी युग में भाषा और साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में बहुत उन्नति हुई। बहुत से नए कवि प्रकाश में आए। कविताओं के माध्यम से समाज सुधार, देशप्रेम, चरित्र निर्माण आदि भावनाओं का प्रचार-प्रसार हुआ।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. द्विवेदी युग के कवियोत्र को मुख्य रूप से 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी से काव्य प्रेरणा प्राप्त हुई।
2. द्विवेदी युग की कविता मुख्य रूप से समाज सुधार, राष्ट्रीय चेतना और नैतिक मूल्यों की स्थापना करने वाली कविता है।
3. द्विवेदी युग की कविता में साधारण स्त्री-पुरुष को काव्य की केंद्रित वस्तु में जगह मिली जिससे मानवतावाद पुष्ट होता है।
4. द्विवेदी युग के कवियों ने स्त्री को काम भावना का आलंबन और भोग विलास की वस्तु मानने की परिपाटी को तोड़ा। इन्होंने स्त्री की वेदना और उसकी सामाजिक भूमिका को खास तौर से उभारा।
5. द्विवेदी युग के कवियों ने इस धारणा का खंडन किया कि खड़ी बोली काव्य रचना के लिए उपयुक्त नहीं है।
6. इस काल में एक ओर तो खड़ी बोली का पहला महाकाव्य 'प्रियप्रवास' (अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध') रचा गया तथा दूसरी ओर 'भारत भारती' (मैथिलीशरण गुप्त) जैसी राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत काव्य कृति की रचना की गई।

3.6 परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'द्विवेदी युग खड़ी बोली के विकास का युग था।' स्पष्ट कीजिए।
2. द्विवेदी युग की कविता की मुख्य प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए।
3. हिंदी भाषा और साहित्य को द्विवेदी जी की देन का वर्णन कीजिए।

खण्ड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के काव्य पर प्रकाश डालिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
3. श्रीधर पाठक के कृतित्व की चर्चा कीजिए।
4. रामनरेश त्रिपाठी की साहित्यिक देन पर प्रकाश डालिए।

खण्ड (स)

। सही विकल्प चुनिए

1. हिंदी कविता में स्वच्छंदतावादी धारा के प्रथम उत्थान के कवि कौन हैं? ( )

(क) मैथिलीशरण गुप्त (ख) श्रीधर पाठक

(ग) हरिऔध (घ) रामनरेश त्रिपाठी

2. खड़ी बोली के प्रथम महाकवि कौन हैं? ( )

(क) मैथिलीशरण गुप्त (ख) श्रीधर पाठक

(ग)हरिऔध (घ) रामनरेश त्रिपाठी

।। रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त को .... कहा जाता है।
2. 'साकेत' में .... के दुख-दर्द को अभिव्यक्त किया गया ह।
3. खड़ी बोली हिंदी का पहला महाकाव्य .... है।

।।। सुमेल कीजिए

(1) मैथिलीशरण गुप्त	(क) पथिक
(2) हरिऔध	(ख) आराध्य शोकांजलि
(3) रामनरेश त्रिपाठी	(ग) भारत भारती
(4) श्रीधर पाठक	(घ) प्रियप्रवास

3.7 शब्द संपदा

1. उपेक्षित	-	जिसका समुचित आदर सम्मान न किया गया हो
2. गरिमा मंडित	-	गर्व, गुरुत्व
3. जागृत	-	जागा हुआ या जो जाग रहा है
4. पल्लवित	-	जो हरा भरा एवं लहराता हुआ हो या विकसित
5. प्रवृत्तियाँ	-	स्वभाव, आदत
6. प्रेरणा	-	मन में उत्पन्न होने वाला प्रोत्साहन परक भाव-विचार
7. योगदान	-	सहयोग देना
8. वर्ण्य विषय	-	जिस विषय का वर्णन हो रहा हो
9. सूत्रपात	-	किसी कार्य का आरंभ
10. स्वदेशानुराग	-	अपने देश से प्रेम करना

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, (सं) नगेंद्र और हरदयाल

2. हिंदी का गद्य साहित्य, रामचंद्र तिवारी

3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी

4. हिंदी साहित्य का नवीन इतिहास, लाल साहब सिंह

5. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, बच्चन सिंह

इकाई 5 : भारतेंदु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व और कृतित्व

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूलपाठ : भारतेन्दु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व और कृतित्व
5.3.1 जीवन परिचय
5.3.1.1 भारतेन्दु की उपाधि
5.3.1.2 भारतेन्दु मंडल
5.3.1.3 विभिन्न सभाओं, संस्थाओं की स्थापना
5.3.2 रचना यात्रा
5.3.3 रचना का परिचय
5.3.3.1 नाटक
5.3.3.2 कविता
5.3.3.3 उपन्यास
5.3.3.4 कहानी
5.3.3.5 यात्रावृत्तान्त
5.3.3.6 आलोचना
5.3.3.7 पत्रकारिता
5.3.3.8 अनुवाद
5.3.3.9 उर्दू रचनाएँ
5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
5.4 पाठसार
5.5 पाठ की उपलब्धियां
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक परिस्थितियाँ साहित्य को भी प्रभावित करती हैं। किसी देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों ने अवश्य ही वहाँ के साहित्य को प्रभावित किया है। इसी तरह इस भारत भूमि ने अवश्य ही हिन्दी साहित्य को प्रभावित किया है। इस भारत भूमि ने ऐसे-ऐसे वीर सपूतों को जन्म दिया है जिन्होंने इसकी सेवा में अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। भारतभूमि और हिन्दी के विभिन्न सेवकों में 'लल्लू लाल', 'सदल मिश्र', 'इंशा अल्लाह खाँ', सदासुख लाल, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, आचार्य महावीर

प्रसाद द्विवेदी आदि हैं। इनमें भारतेन्दु हरिश्चंद्र का अपना विशिष्ट महत्व है। इन्हीं के नाम पर हिन्दी साहित्य में एक काल (युग) 'भारतेंदु युग' के नाम से जाना जाता है।

5.2 उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों ! इस इकाई में हम आधुनिक काल के प्रणेता भारतेन्दु हरिश्चंद्र पर विचार करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- भारतेंदु के व्यक्तित्व से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु के कृतित्व से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु मंडल के विषय में जान सकेंगे।
- हिन्दी साहित्य में भारतेंदु के स्थान एवं महत्व को जन सकेंगे।
- भारतेंदु की भाषा-शैली आदि पर विचार कर सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : भारतेन्दु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व और कृतित्व

भारतेन्दु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व और कृतित्व को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझने का प्रयास करेंगे-

5.3.1 जीवन परिचय

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म वाराणसी के एक संपन्न अग्रवाल परिवार में हुआ था। उस ज़माने में उनके परिवार की तूती बोलती थी। उनके परिवार का बड़ा मान-सम्मान था। इनके परिवार के कद का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि महाराज बनारस (काशीराज) के यहाँ इनके परिवार का उठना-बैठना था।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र का जन्म 9 सितम्बर सन् 1850 ई. (भाद्रपद शुक्ल 5 ऋर्षि पंचमी, सोमवार सं. 1907) को प्रात:काल, शिवाला, वाराणसी में हुआ था। दरअसल, भारतेन्दु से पूर्व के पुत्रों के न बचने के कारण गर्भावस्था के समय उनकी माता शिवाले (भारतेन्दु का ननिहाल) चली गईं। भारतेन्दु जब पाँच वर्ष के थे तब उनकी माता का देहांत हो गया। 9 वर्ष की अवस्था में पिता की भी मृत्यु हो गई। इनकी पढ़ाई-लिखाई के संबंध में ओमप्रकाश सिंह ने श्रीब्रजरत्न दास के कथन को उद्धृत किया है। श्री ब्रजरत्नदास लिखते हैं- 'पं. ईश्वरीदत्त ही शुरू में इन्हें पढ़ाते थे। मौलवी ताज अली से कुछ उर्दू पढ़ी थी और अंगरेजी की प्रारम्भिक शिक्षा इन्हें पं. नन्दकिशोरजी से मिली थी। कुछ दिन इन्होंने ठठेरी बाजार वाले स्कूल में तथा कुछ दिन राजा शिवप्रसाद जी से शिक्षा प्राप्त की थी।' लगभग चौदह वर्ष की अवस्था में सन् 1863 में अगहन माह में इनका विवाह मन्नो देवी के साथ हुआ।

बोध प्रश्न

- श्री ब्रजरत्नदास के कथनानुसार भारतेन्दु के बारे में बताइये।

भारतेन्दु के व्यक्तित्व का एक पहलू यह भी है कि वे अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करते थे। बहुत ही खर्चीले स्वभाव के थे। लंबी-लंबी यात्राएँ भी किया करते थे। वे वैष्णव भक्त थे परन्तु कट्टर न थे। उन्होंने रसखान आदि मुस्लिम कवियों की प्रशंसा करते हुए लिखा है-

इन मुसलमान हरि जनन पै कोटिन हिन्दुन वारियै।
अलीखान पाठान सुता यह ब्रज रखवारे।
सेख नबी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे।।
निरमलदास कबीर ताजखां बेगम बारी।
तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुलारी ।।
पिरजादी बीबी रास्ती पद रज नित सिर धारिये।
इन मुसलमान हरिजन पै कोटिन हिन्दू वारिये।।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु ने किन-किन मुसलमान कवियों की प्रशंसा की है?

उन्होंने शिक्षा को बहुत महत्व दिया था। इन्होंने 'चौखम्भा विद्यालय' की स्थापना की थी। पहले यह प्राइमरी स्कूल था, फिर मिडिल स्कूल हुआ, फिर हरिश्चन्द्र इण्टरमीडिएट कॉलेज कहलाया। वर्तमान में इसे हरिश्चन्द्र पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज के नाम से जाना जाता है। उनकी कद काठी का वर्णन करते हुए श्रीब्रजरत्नदास ने लिखा है- भारतेन्दु जी कद के कुछ लम्बे और शरीर से एकहरे थे, न अतयंत कृश और न मोटे ही। आंखें कुछ छोटी और धंसी हुई सी थीं तथा नाक बहुत सुडौल थी। कान कुछ बड़े थे, जिन पर घुंघराले बालों की लटें लटकती रहती थीं। ऊंचा ललाट इनके भाग्य का द्योतक था। इनका रंग सांवलापन लिए हुए था। शरीर की कुल बनावट सुडौल थी।' भारतेन्दु जी बनारस के रहने वाले थे, इसलिए उनमें बनारसीपन का होना स्वाभाविक था। उनके विषय में ओमप्रकाश सिंह ने बड़ी ही मज़ेदार बात बताई है। वे लिखते हैं- 'छोटी अवस्था में ही भारतेन्दु बनारसी रंग में रंग गए थे। 'बुढ़वा मंगल' के अवसर पर गंगा में बजरे पर बाईजी को देखकर भारतेन्दु के मन में जो विचार उठे थे, सुंदरता का उन पर जो प्रभाव पड़ा था, उससे संकेत मिल जाता है कि आगे चलकर बालक का स्वभाव कैसा होगा। इसी तरह जल से तर्पण करते हुए पिता से भारतेन्दु का यह पूछना कि "जल में जल मिलाने से क्या होता है?" उनकी मानसिकता को स्पष्ट कर देता है। अनायास नहीं है कि आगे चलकर यही हरिश्चन्द्र तर्पण के लिए जल्दी करने और माधो जी द्वारा पुकारे जाने पर लघुशंका करने बैठ जाता है और पुकारने वाले के पुरखों का नाम ले-लेकर 'तृप्यंताम' जोड़ता जाता है। लावनी बाजों के दल में शामिल होकर लावनी गाने या काशिराज की सभा में व्याकरणाचार्य को चुनौती देते हुए 'झंपोका' शब्द का अर्थ पूछना भारतेन्दु के बनारसी फक्कड़पन को स्पष्ट करता है। इसी तरह यूरोपीय विद्वान द्वारा पृथ्वी पर सूर्य और चंद्र को उतारे जाने या मेम द्वारा खड़ाऊं पर गंगा पार करने की घोषणा करके भीड़ इकट्ठा कर देना और बाद में पहली अप्रैल की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित करा देना, भारतेन्दु की बनारसी मस्ती के अंदाज थे।' इस तरह की घटनाओं को देखकर यह बात

तो साफ है कि वे हृदय से प्रेमी, मस्तिष्क से तार्किक थे। कभी-कभी जी में आया तो हुल्लड़बाजी भी कर लिया करते थे।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु जी के बनारसीपन और फक्कडपन की चर्चा कीजिये।

5.3.1.1 'भारतेन्दु' की उपाधि

उनके स्वभाव में तीखापन, तार्किकता तो पहले से विद्यमान थी। इसके साथ-साथ साहित्यिक स्तर पर उनका अपना एक गुट था। भारतेन्दु जी ने राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' से अंग्रेजी सीखी थी यह सच है लेकिन यह भी सच है कि कई सारे मुद्दों पर विशेष रूप से भाषा के मुद्दे पर उनमें मतभिन्नता थी। इस विषय में दो बातें आती हैं कि इनके द्वारा कई बार काशी के ब्राह्मणों पर तल्ख टिप्पणी की गई।। इससे नाराज़ ब्राह्मणों ने एक बैठक बुलाई उसमें ये स्वयं उपस्थित हुए। उसमें इनसे कहा गया कि आप तो सज्जन पुरुष हैं फिर आप हमारे विषय में इतने बुरे विचार क्यों रखते हैं? सारे ब्राह्मण बुरे नहीं हैं। उस बैठक में किसी बुजुर्ग ब्राह्मण ने इन्हें भारतेन्दु कहकर संबोधित किया। सबने इस नाम पर सहमति दी। स्वयं भारतेंदु ने भी अपनी सहमति दे दी।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु को 'भारतेन्दु' नाम मिलने की पहली घटना बताइये।

दूसरी बात यह पता चलती है कि इन्हें भारतेन्दु की उपाधि राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के विरोध स्वरूप मिली। राजा शिव प्रसाद को अंग्रेजों द्वारा 'सितारे हिन्द' (हिन्द का सितारा) कहा तो जनता ने इन्हें 'भारतेंदु' (भारत का चाँद) कहा। इस विषय में राधाकृष्ण दास लिखते हैं- 'सन् 1880 ई. के 'सारसुधानिधि' में एक लेख छपा कि इन्हें 'भारतेन्दु' की पदवी देनी चाहिए, इसको एक स्वर से सारे देश ने स्वीकार कर लिया और सब लोग इन्हें भारतेन्दु लिखने लगे, यहाँ तक कि भारतेन्दु जी इनका उपनाम ही हो गया । इस पदवी को न केवल इस देश के लोगों ने स्वीकार किया, वरन् युरोप के लोग भी बराबर इन्हें भारतेन्दु लिखने लगे। विलायत के विद्वान इन्हें मुक्तकंठ से Poet Laureate of Northern India (उत्तरीय भारत के राजकवि) मानते और लिखते थे। एज्यूकेशन कमीशन के साक्षी नियुक्त हुए। लार्ड रिपन के समय में राजा शिवप्रसाद से बिगड़ने पर हजारों हस्ताक्षर से गवर्नमेंट की सेवा में मेमोरियल गया था कि इनको लेजिस्लेटिव काउंसिल का मेम्बर चुनना चाहिए।' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली के संपादक ओमप्रकाश सिंह ने बताया है कि 'पं. सुधाकर जी द्विवेदी अपनी राम कहानी की भूमिका में लिखते हैं कि "यह मेरे सामने की बात है कि लाहौर के जटला पंडित के वंश के पंडित रघुनाथ जंबू के महाराज श्री रणबीर सिंह की नाराज़ी से जंबू छोड़कर बनारस चले आए थे। उनसे और बाबू हरिश्चन्द्र जी से बहुत मेल था। बनारस के अति प्रसिद्ध विद्वान पंडित बाल शास्त्री ने जब अपनी व्यवस्था से कायस्थों को क्षत्री बनाया, उस समय बाबू साहब ने अपनी मैगजीन में 'सबै जाति गोपाल की' इस सिरनामे से काशी के पंडितों की बड़ी धूल उड़ाई। इस पर पंडित रघुनाथ जी बहुत नाराज

होकर बाबू साहब से बोले कि “आप को कुछ ध्यान नहीं रहता कि कौन आदमी कैसा है, सभी का अपमान किया करते हो। जैसे आप अपने सुयश से जाहिर हो उसी तरह भोगविलास और बड़ों के असम्मान करने से आप कलंकी भी हो, इसलिए आज से मैं आपको भारतेन्दु नाम से पुकारा करूंगा।'' उस समय मैं और भरतपुर के राव श्रीकृष्ण, देशवरण सिंह मौजूद थे। हम लोग भी हँसी से कहने लगे कि बस बाबू साहब सचमुच भारतेंदु हैं। बाबू साहब ने भी हँसकर कहा कि ''मैं नाराज़ नहीं हूँ आप लोग खुशी से मुझे भारतेन्दु कहिए।'' मैंने कहा कि ''पूरे चांद में कलंक देख पड़ता है आप दूइज के चांद हैं जिसके दर्शन से लोग पुण्य समझते हैं।'' यह उपाधि आज भी प्रयोग में लाई जाती है और इसी उपाधि को आधार बनाकर 'भारतेन्दु युग' नामक एक समयावधि निर्धारित की गई है। भारत का यह चाँद (भारतेन्दु) सन् 1885 ई. में हमेशा-हमेशा के लिए अस्त हो गया।

बोध प्रश्न

- पंडित सुधाकर जी द्विव्दि ने भारतेन्दु नाम दिये जाने की क्या घटना बताई है?

5.3.1.2 भारतेन्दु मण्डल

पूर्व में ही विदित है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की विचारधारा एक नवीन विचारधारा रही है। इस विचारधारा में प्रेम, व्यंग्य, देशभक्ति, राजभक्ति आदि दृष्टिगोचर होते हैं। भारतेन्दु की विचारधारा से सहमत लोगों का अपना एक समूह बन गया जो भारतेन्दु की विचारधारा को दृष्टिगत रखते हुए अपना लेखन करता था। इस समूह को हिन्दी साहित्य में 'भारतेन्दु मण्डल' के नाम से जाना जाता है। भारतेन्दु मण्डल के कवियों-साहित्यकारों पर टिप्पणी करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं- 'सहज-चटुल शैली के पुरस्कर्ता पं. प्रतापनारायण मिश्र (1856-94 ई.), तीखी और झनझना देने वाली भाषा में खरी-खरी सुना देने वाले पं. बालकृष्ण भट्ट (1844-1914 ई.) अनुप्रास युक्त शैली की कविजनोचित भाषा लिखने वाले ठाकुर जगमोहन सिंह (1857-99 ई.) और बद्रीनारायण चौधरी (1855-1922 ई.), नाटकों और उपन्यासों के क्षेत्र में नए मार्ग का प्रदर्शन करने वाले लाला श्रीनिवास दास (1851-87 ई.) शास्त्रीय विचार-परंपरा के धनी संस्कृत के उत्कृष्ट विद्वान और लेखक पंडित अंबिका दत्त व्यास (1858-1900 ई.) अपने अगाध पांडित्य की छाया में सहज ठेठ शैली के पुरस्कर्ता महामहोपाध्याय पं. सुधाकर द्विवेदी (1850-1911 ई.), संस्कृत के विद्वान और भक्त साहित्यिक पं. राधाचरण गोस्वामी (1808-1925 ई.) तथा सुप्रसिद्ध नाटककार और प्राचीन साहित्योद्धारक बाबू राधाकृष्णदास (1865-1907 ई.) आदि अनेक सुलेखक उनसे प्रेरणा ग्रहण करके हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि करने लगे।' इनके अतिरिक्त अन्य विद्वान बाबू तोताराम, पं. मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, पं. भीमसेन शर्मा, बालमुकुन्द गुप्त आदि प्रमुख हैं जिन्होंने भारतेन्दु से प्रेरणा लेकर भारतेन्दु युग के अंतर्गत लेखन किया। आगे चलकर इसी पैटर्न पर 'द्विवेदी मण्डल' भी बना जिसमें आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरणा लेकर लेखन किया गया।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु मण्डल में शामिल प्रमुख साहित्यकारों के नाम बताइये।

5.3.1.3 विभिन्न सभाओं, संस्थाओं की स्थापना

भारतेन्दु हरिश्चंद्र का जीवन काल बहुत ही कम था परन्तु उन्होंने बहुत कुछ किया। कई सारे ऐसे कार्य थे जो उन्होंने शुरू किए परन्तु पूरे न कर सके। ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं- 'हरिश्चन्द्र अपने जीवन में बहुत कुछ करना चाहते थे। वे कार्य आरंभ कर देते पर पूरा न कर पाते। यह अनायास नहीं है कि 'चन्द्रावली नाटिका' में उन्होंने अपने को 'आरम्भशूर' कहलवाया है।' उन्होंने काशी में 'पेनीरीडिंग क्लब', 'तदीय समाज', 'वैश्यहितैषिणी सभा' की स्थापना की थी। वे समस्यापूर्ति भी करवाया करते थे।

पेनीरीडिंग क्लब में लेखकों को आमंत्रित किया जाता था। वे अपने लेख पढ़ते इनमें से अच्छे लेखों को 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' में छापा जाता। इस क्लब में गाने बजाने का भी कार्यक्रम होता था। सन् 1873 ई. में काशी में 'तदीय समाज' नामक संस्था की स्थापना की गई। इस संस्था द्वारा धर्म तथा ईश्वर भक्ति के साथ समाज सुधार का कार्य भी किया जाता था। हरिश्चन्द्र को 'तदीय नामांकित अनन्य वीरवैष्णव' की पदवी मिली थी। गोरक्षा प्रयास के तहत इसी संस्था के बैनर तले 1877 ई. में दिल्ली दरबार के अवसर पर गोरक्षा के संदर्भ में 60000 लोगों द्वारा हस्ताक्षरित पत्र भेजा गया था।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु को आरंभशूर क्यों माना जाना चाहिए?

बनारस में ही 'वैश्यहितैषिणी सभा' की स्थापना वैश्य समुदाय को दृष्टिगत रखते हुए की गई थी। होमियोपैथिक चिकित्सा का आरंभ होने पर भारतेन्दु ने सन् 1868 ई. में 'होमियोपैथिक दातव्य चिकित्सालय' भी शुरू करवाया। वे लड़कियाँ जो परीक्षा में सफल होती थीं वे उन्हें पुरस्कार देते थे। बम्बई, मद्रास, बंगाल आदि विश्वविद्यालयों से जो लड़कियाँ परीक्षा में सफल होतीं वे उनके लिए बनारसी साड़ी भेजते थे।

उन्होंने अपने पुश्तैनी व्यवसाय यानी व्यापार में भी प्रयास किया था। उन्होंने व्यापार के लिए 'हरिश्चन्द्र ऐंड ब्रदर्स' नाम से एक फर्म (प्रतिष्ठान) बनाया था। इसका उद्देश्य वास्तविक दाम पर तमाम वस्तुएँ उपलब्ध करवाना था। इस फर्म के विज्ञापन 'कविवचन सुधा' और हरिश्चन्द्र चंद्रिका आदि पत्रिकाओं में निकलते थे। उनका यह प्रयास सफल नहीं हुआ।

5.3.2 रचना यात्रा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को एक नाटककार के रूप में विशेष रूप से प्रसिद्धि मिली है। इनके नाटकों में देश प्रेम, राज प्रेम, स्त्री शिक्षा, व्यंग्य, सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार, धार्मिकता आदि के दर्शन होते हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कविताएँ भी खूब लिखी हैं। इनकी कविताओं से इनके प्रकृति प्रेमी होने का पता चलता है। इनकी कई रचनाओं के नाम में 'प्रेम'

शब्द मिलता है। इनकी कविताओं से ही देश प्रेम, राजभक्ति, प्रेमी हृदय की अनुभूति आदि का पता चलता है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र उपन्यास के प्रति भी बहुत उत्सुकता का भाव रखते थे।

वर्तमान में कहानियाँ जिस रूप में मिलती हैं उस रूप में तो उन्होंने कोई कहानी नहीं लिखी हालांकि उनकी कुछ रचनाओं में कहानी के तत्व अवश्य ही विद्यमान हैं। उन्होंने कई जगहों की यात्रा की थी और उसे यात्रा वृतांत के रूप में लिखा भी था। उनका 'नाटक' नामक निबंध भले ही निबंध के रूप में है लेकिन उससे उनकी आलोचनात्मक दृष्टि का पता चलता है। उन्होंने कविवाचन सुधा और बालाबोधिनी जैसी पत्रिकाओं का प्रकाशन भी किया था। उन्होंने अनुवाद का भी प्रयास किया था। कुछ आर्थिक मजबूरियों के कारण वे अनुवाद करके उसका प्रकाशन नहीं करवा पाये। बहुत कम लोग जानते हैं कि वे उर्दू में भी रचनाएँ करते थे। उन्होने ग़ज़लें भी लिखी हैं। उन्होने इस्लाम व मुसलमानों से सबंधित रचनाएँ भी की हैं जैसे- 'पंच पवित्रात्मा'। इसके अंतर्गत इस्लाम के 5 महानुभावों पर हरिश्चन्द्र ने अपने विचार प्रकट किए हैं। इनमें ये शीर्षक हैं- 'मुसलमानी मत के मूलाचार्य्य अर्थात महात्मा मुहम्मद, आदरणीय अली, बीबी फातिमा, इमाम हसन और इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी।' इसके अलावा 'बादशाह दर्पण अर्थात् हिन्दुस्तान के मुसलमान बादशाहों के समय और जन्म आदि के मुख्य बातों के वर्णन का चक्र', 'मुसलमान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास' अकबर और औरंगजेब आदि पर लिखा गया है।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु ने अपनी रचना 'पंच पवित्रात्मा' में किसके-किसके बारे में लिखा हैं?

5.3.3 रचना का परिचय

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की रचनाएँ विभिना विधाओं में हैं। उन्हें हम अलग-अलग शीर्षकों में बांटकर देख सकते हैं।

5.3.3.1 नाटक

उनके द्वारा कई नाटक लिखे गए जैसे- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवित, पांचवें पैगंबर, प्रेमजोगिनी, भारत दुर्दशा, श्री चन्द्रावली (नाटिका), विषस्यविषमौषधम्, सत्यहरिश्चन्द्र, अंधेर नगरी चौपट्ट राजा, नील देवी, सती प्रताप। इनके मौलिक नाटकों की संख्या 10 है। 'भारत जननी' भारतेन्दु का नाटक नहीं है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी जीवनकाल में कुछ नाटकों का संशोधन-परिवर्द्धन भी किया था। नाटक किसी और ने लिखा था उसमें कुछ जोड़-घटाव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने किया था। ऐसे नाटक भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाम से ही छप गए। 'भारत जननी' ऐसा ही नाटक है।

बोध प्रश्न

- भारतेन्दु हरिश्चंद्र के 10 नाटकों के नाम लिखिए।

5.3.3.2 कविता

इनकी कविताओं को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली – 3 तथा 4 (सं. ओमप्रकाश सिंह) में स्थान मिला है। ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं 'उनकी कविताओं का विश्लेषण कथ्य के आधार पर करें तो उसमें सबसे अधिक ईश्वर और धर्म संबंधी कविताएँ होंगी। भारतेन्दु के काव्य साहित्य का लगभग दो तिहाई स्थान ऐसी ही कविताएँ घेरती हैं। .... भारतेन्दु की ऐसी कविताओं की एक और विशेषता है – प्रेम के महत्व की स्वीकृति। इसीलिए अपने अधिकांश संकलनों के नाम में उन्होंने इस शब्द (प्रेम) को स्थान दिया है। .... आप देखेंगे, इस खण्ड (खण्ड-3) में जितनी कविताएँ दी गई हैं, लगभग सबके शीर्षक में प्रेम शब्द विद्यमान है। यदि किसी शीर्षक में प्रेम शब्द नहीं है तो कविता के केंद्रीय भाव में प्रेम की मजबूत सत्ता अवश्य है। इसीलिए इस खण्ड का नामकरण 'प्रेम अर्पण की कविताएँ' किया गया है।' इनके नाम इस प्रकार हैं- प्रेम मालिका, प्रेमाश्रु वर्षण, प्रेम सरोवर, प्रेम तरंग, सतसई सिंगार, प्रेम प्रलाप, होली, राग संग्रह, वर्षा विनोद, प्रेम माधुरी, मधु मुकुल, फूलों का गुच्छा, प्रेम पुलवारी, कृष्ण चरित्र। इनकी राजभक्तिपरक कविताएं भी इसी खण्ड में दी गई हैं। इस खण्ड का नाम प्रेम अर्पण की कविताएँ, राजभक्ति की कविताएँ, अन्य कविताएँ, भारतीय भाषा की अन्य कविताएँ रखा गया है। 'प्रेम अर्पण की कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत वैशाख माहात्म्य, दानलीला, प्रबोधिनी, उत्तरार्द्ध भक्तमाल आदि है। 'राजभक्तिपरक कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत श्री राजकुमार सुस्वागत, भारत भिक्षा, भारत वीरत्व, विजय वल्लरी, विजयिनी विजय पताका या वैजयंती, रिपनाष्टक आदि। 'अन्य कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत बकरी विलाप, बन्दर सभा, दशरथ विलाप आदि हैं। 'भारतीय भाषा की अन्य कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत गुजराती भाषा की कविता, पंजाबी भाषा की कविता, मारवाड़ी भाषा की कविता – धमार देश और बंगभाषा की कविता संकलित है।

बोध प्रश्न

- भरेत्न्दु की कविताओं पर अपने विचार लिखिए।

5.3.3.3 उपन्यास

एक पत्र में वे लिखते हैं- 'जैसे भाषा में अब कुछ नाटक बन गये हैं, अब तक उपन्यास नहीं बने हैं। आप या हमारे पत्र के योग्य सहकारी सम्पादक जैसे बाबू काशीनाथ व गोस्वामी राधाचरण जी कोई भी उपन्यास लिखें तो उत्तम हैं। यदि ऐसी इच्छा हो तो 'दीपनिर्वाण' नामक उपन्यास का अनुवाद हो। यह उपन्यास केवल उपन्यास ही नहीं है। भारतवर्ष से इससे एक बड़ा संबंध है।' उन्होंने अपने सहयोगियों को उपन्यासों के अनुवाद के लिए भी प्रेरित किया। वे स्वयं बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यास 'राजसिंह' का अनुवाद करने लगे थे परन्तु उसे पूरा न कर सके।

5.3.3.4 कहानी

आज कहानी का जो रूप दिखता है वैसी कहानी तो उन्होने नहीं लिखी। रामविलास शर्मा ने लिखा है- ' 'कलिराज की सभा', 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न', 'राजा भोज का सपना',

स्वर्ग में विचार सभा का अधिवेशन', 'यमलोक की यात्रा' आदि रचनाओं में कहानी के अनेक तत्व विद्यमान हैं।' कहानी के संदर्भ में भी उन्हें याद किया जाना चाहिए।

5.3.3.5 यात्रावृत्तान्त

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने जीवन में कई यात्राएँ की थीं। उनकी प्रमुख यात्राओं में हरिद्वार, लखनऊ, जबलपुर, सरयूपार की यात्रा, वैद्यनाथ की यात्रा, जनकपुर की यात्रा शामिल है। उनकी यात्रा के संबंध में रामविलास शर्मा लिखते हैं- 'बीस साल की अवस्था में उन्होंने कानपुर, लखनऊ, सहारनपुर, मसूरी, लाहौर, अमृतसर, दिल्ली, आगरा आदि स्थानों की यात्रा की जिसमें तैंतीस दिन लगे। छ: साल बाद वह अजमेर गये और इसके दो साल बाद अयोध्या आये। अयोध्या से उन्होंने बस्ती और गोरखपुर का भ्रमण किया ..... सन् 1884 में उन्हें व्याख्यान देने के लिए बुलाया गया। इसके सिवा उन्होंने कलकत्ता की यात्रा भी की थी।' वर्तमान में यात्रा करना एक शौक समझा जाता है। जहाँ इंसान सुकून और सुख-सुविधा की आकांक्षा रखता है परन्तु भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के लिए ऐसा नहीं था। रामविलास शर्मा लिखते हैं- 'भारतेन्दु की यात्रा सिर्फ शौकीनों की यात्रा न थी। यह उनकी शिक्षा का आवश्यक अंग था। यात्रा में उन्हें काफी कष्ट उठाने पड़ते थ।' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी यात्राओं से भी काफी कुछ सीखा था। बीस वर्ष की अवस्था में वे तैंतीस दिनों की लम्बी यात्रा पर गए। उन तैंतीस दिनों में उन्होंने जो यात्रा की उसकी सूची इस प्रकार है-

प्रथम गए चरणाद्रि कान्हपुर को पग धारे।
बहुरि लखनऊ होइ सहारनपुर सिधारे।।
तहं मन्सूरी होइ जाइ हरिद्वार नहाए।
फेर गए लाहौर सुपुनि बरसर आए।।
दिल्ली दै ब्रज बसि आगरा देखत पहुंचे आप घर।
तैंतीस दिवस में यातरा यह कीन्हीं हरिचन्द्र बर।।

5.3.3.6 आलोचना

जहाँ तक आलोचना का प्रश्न है तो उन्होंने 'नाटक' शीर्षक रचना को भले ही निबंध कहा है परन्तु इसमें उनकी आलोचनात्मक दृष्टि साफ तौर पर दिखती है। उन्होंने नाटकों को समझने के लिए ही नाटक (निबंध) लिखा था। 'नाटक' तथा 'संगीतसार' भले ही निबंध हैं परन्तु इससे हमें उनकी आलोचनात्मक दृष्टि का पता चलता है। उनके नाटक (निबंध) से ही हिन्दी साहित्य में तुलनात्मक और ऐतिहासिक समालोचना की नींव पड़ी।

5.3.3.7 पत्रकारिता

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने छोटे से जीवनकाल में पत्रकारिता का भी काम किया। उन्होंने कई पत्रिकाओं को प्रकाशित कराया। उन्होंने कविवचन सुधा, हरिश्चन्द्र मैगजीन, बालाबोधिनी, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका जैसी पत्रिकाओं का संपादन किया। उन्होंने 'भगवद्भक्तितोषिणी' जैसे धार्मिक पत्रिका के एक-दो अंक निकाले थे। 'कविवचन सुधा' पहले पद्य में छपती थी बाद में इसमें गद्य भी छापा जाने लगा। यह मासिक से पाक्षिक और फिर पाक्षिक से साप्ताहिक हो गई। 'कविवचन सुधा' के पाँच साल बाद 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का

प्रकाशन हुआ। बाद में इसी का नाम बदलकर 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' रखा गया। उन्होंने स्त्रियों के लिए 'बालाबोधिनी' नामक पत्रिका भी चार साल तक निकाली। 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' छः साल तक निकली।

5.3.3.8 अनुवाद

उन्होंने अनुवाद के क्षेत्र भी प्रयास किया। कुरआन शरीफ का हिन्दी में अनुवाद करना प्रारंभ किया परन्तु पूरा नहीं कर पाए। इसी तरह वे बंकिमचन्द्र चटर्जी के उपन्यास 'राज सिंह' का अनुवाद स्वयं करना चाहते थे। वह काम अधूरा ही रह गया। उनकी मृत्यु के बाद राधाकृष्णदास ने इस अधूरे कार्य को पूरा किया। उन्होने कुरान शरीफ के कुछ पारह (अध्याय) का अनुवाद भी किया है।

5.3.3.9 उर्दू रचनाएँ

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की निगाह में उर्दू किसी धर्म विशेष के लोगों की भाषा नहीं थी। उन्होंने उर्दू में भी लेखन किया है। वे 'कासिद' नाम से एक उर्दू साप्ताहिक पत्र निकालना चाहते थे लेकिन आर्थिक कारणों से नहीं निकाल पाये। भारतेन्दु ने उर्दू पद्य तथा गद्य दोनों में लिखा है। वे गज़लें भी पढ़ते थे। उनकी कई ग़ज़लें हैं। इन्होंने गजलों में अपना तखल्लुस (उपनाम) 'रसा' (पहुँचा हुआ) रखा है। उन्होंने उर्दू ग़ज़लों का संग्रह करके 'गुलजारे पुरबहार' नामक पुस्तक (ग़ज़ल संग्रह) छपवाई। इनकी ग़ज़लें कानपुर से प्रकाशित 'बहार गुलशन' नामक संग्रह में भी पाई जाती हैं। उन्होंने 'खुशी' शीर्षक निबंध तथा 'कानूनताज़ीरात' शीर्षक से व्यंग्य रचना उर्दू में लिखी। उनकी ग़ज़ल के कुछ शे'र द्रष्टव्य हैं-

1. बाद मुर्दन कौन आता है खबर को ऐ 'रसा'।
   खत्म बस कुंजे लहद तक दोस्ताना हो गया।।

2. कब्र में सोए हैं महशर का नहीं खटका 'रसा'।
   चौंकने वाले हैं कब हम सूर की आवाज़ से।।

यहाँ 'लहद' का अर्थ कब्र तथा 'सूर' का अर्थ प्रलय (क़यामत) के समय बजने वाला 'नरसिंहा बाजा' है।

5.3.4 हिन्दी साहित्य में स्थान एवं महत्व

हिन्दी के आधुनिक काल का काल विभाजन करने पर पहला काल 'भारतेन्दु युग' आता है। यह नाम हिन्दी साहित्य की एक महान् शख्सियत भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम पर पड़ा है। हिंदी साहित्य में भारतेन्दु युग के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चंद्र हैं। इसे ही नवीन प्रवत्तियों आदि के आधार पर 'नवजागरण काल' या 'जागरण काल' भी कहा जाता है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के काव्य की महत्ता को स्पष्ट करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है 'भारतेन्दु का पूर्ववर्ती काव्य-साहित्य संतों की कुटिया से निकलकर राजाओं और रईसों के दरबार में पहुँच गया था, उसमें मनुष्य को प्रत्याहिक सुख-सुविधाओं के जंगल से मुक्त करके शाश्वत देवत्व के पवित्र लोक में ले जाने की महत्वाकांक्षा लुप्त हो

चुकी थी। वह मनुष्य को देवता बनाने के पवित्र आसन से च्युत होकर मनोविनोद का साधन हो गया था। ऐसा होना वांछनीय नहीं था। जिन संतों और महात्माओं ने काव्य में मनुष्य को देवता बनाने की शक्ति संचारित की थी, उनके चेलों ने उनके नाम पर संप्रदाय स्थापित किए, काव्य को देवता बनाने की शक्ति लुप्त हो गई, उसकी सांप्रदायिक अद्‌भुत व्याख्याएँ शुरू हो गईं और दूसरी ओर कवियों की दुनिया राजदरबारों की ओर खिंच गई। भारतेन्दु ने कविता को इन दोनों ही प्रकार की अधोगतियों के पंथ से उबारा। उन्होंने एक तरफ तो काव्य को फिर से भक्ति की मंदाकिनी में स्नान कराया और दूसरी तरफ उसे दरबारीपन से निकालकर लोक जीवन के आमने-सामने खड़ा कर दिया।' आचार्य द्विवेदी के इस कथन से ही भारतेन्दु के काव्य की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

भाषा के संदर्भ में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का कहना था 'जिन भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल'। भारतेन्दु जी का प्रादुर्भाव जिस काल में हुआ था वह काल हिन्दी साहित्य में ब्रजभाषा का काल था। उनकी भाषा के संदर्भ में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली के संपादक ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं- 'उनकी ज्यादातर कविताएँ ब्रजभाषा में हैं। कुछ कविताएँ उर्दू और खड़ी बोली में हैं। एक-दो कविताएँ अन्य भारतीय भाषाओं में भी हैं।' वह शुरूआती काल था जब खड़ी बोली में कविताएँ लिखने का प्रयास हो रहा था, साथ ही साथ गद्य में भी लेखन के प्रयास जारी थे। हिन्दी गद्य के प्रारंभिक लेखकों में लल्लू लाल, सदासुख लाल, सदल मिश्र, मुंशी इंशा अल्लाह खाँ आदि थे परन्तु उनकी भी अपनी सीमाएँ थीं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की भाषा पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है- 'उनकी भाषा में न तो लल्लू लाल का ब्रजभाषापन आने पाया, न मुंशी सदासुख का पंडिताऊपन, न सदल मिश्र का पूरबीपन, न राजा शिवप्रसाद का उर्दूपन और न राजा लक्ष्मण सिंह का खालिसपन और आगरापन। इतने 'पनों' से एक साथ पीछा छुड़ाना भाषा के संबंध में बहुत ही परिष्कृत रुचि का परिचय देता है। संस्कृत शब्दों के रहने पर भी भाषा का सुबोध बना रहना, फारसी-अरबी के शब्द आने पर भी साथ-साथ उर्दूपन न आना, हिंदी के स्वतंत्र सत्ता का प्रमाण था। उनका भाषा संस्कार शब्दों की काट-छाँट तक ही नहीं रहा। वाक्य-विन्यास में भी वे सफाई लाए। उनकी लिखावट में एक साथ न जुड़ सकने वाले वाक्य एक में गुँथे हुए प्राय: नहीं पाए जाते।' भाषा के संदर्भ में सन् 1873 ई. में उन्होंने अवश्य ही 'हिन्दी नये चाल में ढली' की घोषणा कर दी।

उन्होंने मुख्यत: मुक्तक एवं गीति-शैली का प्रयोग किया है। इन मुक्तकों में भावात्मकता के साथ मार्मिकता विद्यमान है। व्यंग्यात्मक शैली भी विद्यमान है। उनके काव्य में विविध रस यथा- श्रृंगार रस, करुण रस, भक्ति रस, रौद्र रस, वीर रस आदि। इन्होंने कवित्त, सवैया एवं दोहा छंद का प्रयोग किया है। अलंकार में इन्होंने अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा आदि का प्रयोग किया है। इनके यहाँ प्रसाद, ओज, माधुर्य गुण का प्रयोग है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का भाषा संबंधी दृष्टिकोण सुधारात्मक था।

5.4 पाठ सार

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतेन्दु के व्यक्तित्व में बनारसी फक्कडपन है। वे ख़र्चीले स्वभाव के थे। उनकी रचनाएँ तत्कालीन परिस्थितियों का पूरा आभास दिलाती है। उनमें भक्ति के साथ तत्कालीन समाज व देश कि राजनीतिक स्थिति को भी देखा जा सकता है।

इन्होंने अपनी रचनाओं में यदि एक तरफ राधा- कृष्ण की भक्ति ई है तो दूसरी तरफ मुहम्मद साहब आदि मुस्लिम महानुभावों पर भी लिखा है। एक तरफ वे देशभक्तिपरक कवितायें लिखते हैं तो दूसरी तरफ राजभक्ति फरक कवितायें भी लिखते है। ये उनके व्यक्तित्व की विशेषता है।

5.5 पाठ की उपलब्धियां

इस इकाई के अध्ययन से हमें निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. भारतेन्दु के व्यक्तित्व में हमें देशभक्ति के साथ राजभक्ति और बनारसी फक्कड़पन भी नज़र आता है। ये हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी के विद्वान थे। वे बराबर हिन्दू-मुस्लिम एकता के पक्षधर बने रहे। इसका प्रमाण उनका साहित्य है।

2. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाम में भारतेंदु (भारत का चाँद) एक उपाधि या पदवी है। उनके मौलिक नाटकों की संख्या दस है। कुछ अनूदित नाटक भी हैं। उनकी कविता में प्रेम, भक्ति, व्यंग्य आदि साफ तौर पर दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने कई पत्रिकाओं का संपादन कार्य किया। उर्दू रचनाएँ भी हैं। वे ग़ज़ल भी पढ़ते थे और 'रसा' तखल्लुस (उपनाम) लगाया करते थे। उन्होंने कई सारी संस्थाएँ बनाई, विद्यालय स्थापित करवाया, पढ़ने-लिखने का माहौल बनाने का प्रयास किया।

3. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का एक महान् व्यक्तित्व है। उनकी विचारधारा को दृष्टिगत रखकर लेखन करने वालों का साहित्यिक स्तर पर एक समूह बन गया जिसे 'भारतेन्दु मण्डल' के नाम से जाना जाता है।

4. यदि हम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की भाषा पर विचार करें तो उनकी भाषा मुख्यत: ब्रज है परन्तु उन्होंने खड़ी बोली में भी कविताएँ लिखी हैं। इसके साथ-साथ उर्दू, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओं में भी इन्होंने कविताएँ लिखी हैं। इनकी अंग्रेजी में भी लिखी हुई कविता मिलती है। भाषा के स्तर पर वे मातृभाषा के पक्षधर थे।

5. इन्होंने मुख्यत: मुक्तक तथा गीति शैली का प्रयोग किया है। इनकी रचनाओं में व्यंग्यात्मक शैली के भी दर्शन होते हैं। इनकी रचनाओं में श्रृंगार, करुण, भक्ति, वीर, रौद्र आदि मिलते हैं। इन्होंने मुख्यत: कवित्त, सवैया एवं दोहा छंद अपनाया है। इन्होंने अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा अलंकार के साथ प्रसाद, ओज तथा माधुर्य गुण का प्रयोग है।

5.6 शब्द संपदा

1. उर्दूपन = उर्दू से युक्त
2. तखल्लुस = उपनाम
3. फक्कडपन = निश्चिंत रहने वाला
4. भारतेन्दु = भारत का चाँद
5. सितारेहिंद = हिन्द या भारत का सितारा

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए.

1. भारतेन्दु मण्डल पर अपने विचार लिखिए।

2. भारतेन्दु हरिश्चंद्र के कृतित्व पर प्रकाश डालिए।

3. हिंदी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चंद्र के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए.

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र को 'भारतेन्दु' की उपाधि कैसे मिली ?

2. भारतेन्दु हरिश्चंद्र की कविताओं के विषय में लिखिए।

3. भारतेन्दु हरिश्चंद्र की उर्दू रचनाओं की चर्चा कीजिये।

(इ) बहुविकल्पीय प्रश्न

(i) 'भारतेन्दु युग' के प्रवर्तक कौन हैं? ( )

(क) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ख) प्रतापनारायण मिश्र

(ग) महावीर प्रसाद द्विवेदी (घ) सुधाकर द्विवेदी

(ii) 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' किसका नाटक है? ( )

(क) लाला लक्ष्मीनारायण लाल (ख) उपेन्द्रनाथ अश्क

(ग) जगदीशचंद्र माथुर (घ) भारतेंदु हरिश्चन्द्र

(iii) भारतेंदु हरिश्चन्द्र का जन्म वर्ष है? ( )

(क) 1885 ई. (ख) 1857 ई. (ग) 1850 ई. (घ) 1843 ई.

(ii) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1-'बालाबोधिनी' पत्रिका का प्रकाशन ....करते थे।

2- 'हिन्दी नये चाल में ढली' की घोषणा वर्ष ....में भारतेन्दु ने की।

3-भारतेन्दु अपनी ग़ज़लों में अपना तखल्लुस या उपनाम ....रखते थे।

(iii) सुमेल प्रश्न

(क) अग्रवाल परिवार	(i) पंचपवित्रात्मा
(ख) सरयूपार की यात्रा	(ii) सबै जाति गोपाल की
(ग) मुहम्मद साहब आदि	(iii) यात्रा वृतांत
(घ)भारतेन्दु हरिश्चंद्र	(iv) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. सत्यदेव मिश्र
2. चिंतामणि भाग-1 – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
3. भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जीवन चरित्र – राधाकृष्ण दास
4. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली – 1-6 सं. ओमप्रकाश सिंह
5. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्याएँ – रामविलास शर्मा
6. भारतेन्दु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा- रामविलस शर्मा
7. हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास – हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 7 : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठ : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

7.3.1 जीवन परिचय

7.3.2 रचना यात्रा

7.3.3 रचनाओं का परिचय

7.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्त्व

7.4 पाठ सार

7.5 पाठ की उपलब्धियां

7.6 शब्द सम्पदा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल में खड़ी बोली हिंदी के प्रसिध्द कवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्यिक साधना की प्रतिमूर्ति के रूप में जाने जाते हैं। द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य के सभी मानकों पर खरे उतरने वाले कवि गुप्त जी पर उनके गुरु महावीर प्रसाद द्विवेदी का विशेष आशीष था, क्योंकि साहित्य में खड़ी बोली हिंदी के शुद्ध रूप, नैतिकता, देशप्रेम, परंपरागत मानवीय औदात्य की प्रतिष्ठा तथा भारतीय संस्कृति के महान धरोहर आदि को प्रतिष्ठित करने में गुप्त जी का विशेष योगदान है। हिंदी साहित्य के आधुनिककाल के सुप्रसिध्द कवि मैथिलीशरण गुप्त का लेखन संसार राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत है। उनका जन्म 1886 ई. में झाँसी के चिरगांव नामक स्थान पर हुआ। इनके पिता सेठ रामचरण गुप्त तथा माता काशीबाई थीं। लेखन प्रतिभा उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। राष्ट्रप्रेम धारा सिक्त कविता 'भारत भारती' की रचना के बाद महात्मा गांधी द्वारा मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दी गई। खड़ीबोली हिंदी को काव्य के क्षेत्र में अवधी तथा ब्रज भाषा के स्थान पर प्रतिष्ठापित करने में गुप्त जी का अनन्य स्थान है। हिंदी साहित्य के द्विवेदी युग के जनक महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा एवं कुशल मार्गदर्शन में मैथिलीशरण गुप्त ने काव्य में विषय एवं भाषा की शुद्धता,

नैतिकता, परम्परागत मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में महारथ पायी। प्रस्तुत पाठ में मैथिलीशरण गुप्त की जीवन यात्रा एवं साहित्यिक यात्रा का सुरूचिपूर्ण परिचय विद्यार्थियों को दिया जाएगा।

7.2 उद्देश्य

हिंदी साहित्य की काव्य विधा को उच्चतम मानवीय धरातल पर स्थापित करने वाले कवि मैथिलीशरण गुप्त के बारे में जानने के लिए उनके व्यक्तित्व तथा कृतित्व पक्ष को जानना अत्यंत आवश्यक है। प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं -

- मैथिलीशरण गुप्त के विराट व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- हिंदी साहित्य के राष्ट्रकवि की रचना यात्रा के विकास को जान सकेंगे।
- मैथिलीशरण गुप्त की रचनायात्रा एवं मुख्य कृतियों का परिचय दिया जाएगा।
- मैथिलीशरण गुप्त की काव्यगत विशेषताओं को जानेंगे।
- हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त के स्थान एवं महत्त्व से परिचित हो सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

प्रस्तुत पाठ में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तिगत जीवन परिचय तथा साहित्यिक जीवन का अध्ययन किया जाएगा।

7.3.1 जीवन परिचय

साहित्य सामाजिक घटनाओं तथा परिस्थितियों की साक्षी बनकर युगगत चेतना को जागृत करती है। जब भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन के समय देश का हर वर्ग अपने स्तर पर देश के स्वतंत्रता अभियान में निमग्न था, तब साहित्यकार अपनी लेखनी को हथियार बना कर जन जागृति का राग छेड़ रहे थे। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से हिंदी के साहित्यिक जगत जुड़कर लोगों में विदेशी शासन द्वारा हीनभावना की ग्रंथि को हटाने का प्रयत्न कर रहे थे। खड़ीबोली हिंदी के ऐसे साहित्यकारों में प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त का नाम उल्लेखनीय है। मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, 1886 में उत्तर प्रदेश में झाँसी के चिरगांव नामक स्थान पर हुआ। गुप्त जी के पिता सेठ रामचरण कनकने एवं माता काशीबाई थीं। वे बचपन में अत्यंत खिलंदड़े स्वभाव के थे। जिसके कारण वे शिक्षा की ओर अधिक ध्यान नहीं देते थे। उन्होंने स्वाध्याय से हिंदी, संस्कृत तथा बंगला भाषा सीखा। उन्होंने प्राथमिक शिक्षा चिरगांव से तथा माध्यमिक शिक्षा झाँसी से प्राप्त की। गुप्त जी का मूल नाम 'मिथिलाधिपनंदिनीशरण' था , जिसे उनके अध्यापक ने मैथिलीशरण गुप्त कर दिया। इनका वैवाहिक जीवन अधिक सुखद न रहा। प्रथम पत्नी का देहावसान प्रसव के समय हुआ तो परिजनों के आग्रह पर दूसरा विवाह किया, जो विवाह के बाद आठ वर्ष तक ही कवि का साथ दे सकी और उनकी अकाल मृत्यु हो गयी। अंत में अपने छोटे काका के अत्यधिक आग्रह करने पर

सरयू देवी से विवाह किया, जिनसे उन्हें नौ संतानें हुई, किन्तु अंततः एक ही पुत्र जीवित रहा। व्यक्तिगत जीवन के ऐसे उतार-चढाव ने गुप्त जी को भारतीय जीवन परंपरा के गौरवपूर्ण विषयों की ओर उन्मुख किया। उन्होंने अपने देश की संस्कृति के व्यापक धरातल को जन-जन तक अपनी रचनाओं के माध्यम से पहुँचाया। मानवीयता की उच्च भावधारा को मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं में सर्वत्र देखा जा सकता है। भारतीय जीवन दृष्टि में आमूल परिवर्तन का श्रेय गुप्त जी को दिया जा सकता है। परंपरागत रूप से खल पात्रों के रूप में अवस्थित चरित्र को लेकर उन्होंने आम जनता की धारणाओं में व्यापक परिवर्तन लाने के क्रम में कैकेयी, यशोधरा, उर्मिला आदि के उज्जवल पक्ष से लोगों को अवगत कराया। हिंदी साहित्य की स्वर्णिम धारा के प्रवाह में आपका अन्यतम योगदान है।

7.3.2 रचना यात्रा

खड़ीबोली हिंदी के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्यिक क्षेत्र में दद्दा के नाम से जाने जाते हैं। रामस्वरूप शास्त्री, दुर्गादास पन्त तथा मुंशी अजमेरी जैसे विद्वतजनों के सान्निध्य में रहकर 12 वर्ष की अल्पायु से ही वे ब्रजभाषा में रचनाएं करने लगे थे। आरम्भ में वे 'रसिकेंद्र' के नाम से दोहा, चौपाई आदि लिखते थे। इनकी ब्रज तथा खड़ीबोली में अनुदित रचनाएँ कलकत्ता से प्रकाशित पत्रिका 'वैश्योपकारक', बम्बई से प्रकाशित पत्रिका 'वेंकटेश्वर', कन्नौज से प्रकाशित पत्रिका 'मोहिनी' आदि में प्रकाशित होती थी। जबकि हिंदी की रचनाएँ 'इंदु', 'प्रताप', 'प्रभा' तथा 'सरस्वती' आदि में प्रकाशित होती थी। वे 'प्रताप' पत्रिका में 'विदग्ध हृदय' के नाम से अपनी रचनाएँ प्रकाशित करवाते थे। द्विवेदी युग के मूल स्तम्भ महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से वे खड़ीबोली हिंदी में लिखने लगे। इसके बाद तो निरंतर इन्हें सरस्वती का प्रसाद मिलता रहा। गुप्त की रचना 'भारत भारती' ने तद्युगीन जनता में देशप्रेम की ऐसी धारा बहाई कि महात्मा गांधी ने उन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दे दिया। हिंदी साहित्य जगत में उनके जन्मदिवस 3 अगस्त को 'कवि दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मैथिलीशरण गुप्त के साहित्यिक अवदान को देखते हुए भारत सरकार ने इन्हें 1954 ई. में 'पद्मभूषण' उपाधि से सम्मानित किया । उनकी प्रमुख रचनाओं में 'रंग में भंग' (1909 ई.), 'जयद्रथ वध' (1910 ई.), 'साकेत' (1932 ई.), 'भारत भारती' (1912-13 ई.), 'यशोधरा' (1933 ई.) आदि है। उन्होंने बंगला भाषा के काव्यग्रंथ 'मेघनाथ वध', 'ब्रजांगना' तथा संस्कृत के 'स्वप्नवासवदत्ता' का अनुवाद हिंदी में किया। साहित्य सेवा को बढ़ावा देने के लिए उन्होंने अपना प्रेस चिरगाँव में 1911 ई. में 'साहित्य सदन' नाम से तथा 1954-55 ई. में 'मानस मुद्रण' प्रेस की स्थापना की। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान 1941 ई. में व्यक्तिगत सत्याग्रह करने के कारण इन्हें सात माह तक जेल में भी रहना पड़ा। आगरा विश्वविद्यालय द्वारा तथा हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा इन्हें डी.लिट्.से सम्मानित किया गया। उनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए भारत सरकार ने 1952 ई. से 1964 ई. तक उन्हें राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया। 12 दिसंबर 1964 ई. को 78 वर्ष की आयु में राष्ट्रकवि की वाणी ने सदा के लिए विराम ले लिया।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त जी के जन्मस्थान का नाम क्या है ?
- मैथिलीशरण गुप्त को राष्ट्रकवि की उपाधि किसने प्रदान की ?

हिंदी साहित्य की रचना यात्रा में स्वर्णिम पड़ाव का आगमन राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त से होता है। साहित्यकार की अपने युग के प्रति प्रतिबध्दता एवं संवेदनशीलता जितनी ही अधिक होती है उनकी रचनाओं की उपादेयता भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है। कवि गुप्त के स्वभाव में साहित्य का लोकतत्व समाहित होने के कारण वे सदैव लोककल्याण के राहों का अन्वेषण साहित्य के माध्यम से करते रहते थे। कवि का काव्य संस्कार व्यक्तिगत जीवन में वैष्णव भाव से भरा हुआ था, जबकि युगगत परिवेश उन्हें राष्ट्रीय भावना की ओर बहाए जा रहा था। जिस काल में कवि गुप्त ने कलम पकड़ी थी, वह काल देश में व्यापक जागरण का काल था तथा सामाजिक विचारों के सुधार के लिए कई स्वनामधन्य, सजग वर्ग भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आहूत थे। देशप्रेम की उद्दाम चेतना के वशीभूत होकर कवि ने क्रांति पथ का चयन किया तो उनके विचार 'जयद्रथ वध' (1910 ई.) तथा 'भारत भारती' के रूप में प्रचंड अभिव्यक्ति पाकर जन-जन में प्रवाहमान हो उठे, किन्तु शीघ्र ही उनकी विचार शृंखला को एक नया आयाम मिला। महात्मा गांधी, विनोबा भावे एवं राजेन्द्र बाबू के सुधारवादी दृष्टिकोण को जीवन में गहरे उतारते हुए उन्होंने भारत के गौरवपूर्ण अतीत को निराश, हताश जनता के सामने अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए मानववाद की भावना को ओजस्वी स्वर प्रदान किया। उन्होंने समाज की सबके छोटी इकाई परिवार से लेकर इतिहास के उपेक्षित पात्रों तक को प्रतिष्ठित स्थान अपनी कविताओं के माध्यम से प्रदान किया। समाज का विकास स्त्री एवं पुरुष दोनों के सम्यक सहयोग एवं सहकारिता पर आधारित होता है। ऐसे में उनकी कविताओं में स्त्री के औदात्य पक्ष को वाणी दी गयी है। स्त्री का यह रूप उनके महाकाव्य 'साकेत', यशोधरा के माध्यम से व्यक्त हुआ है। कवि का मानववादी दृष्टिकोण उनकी रचनाओं को शाश्वतता प्रदान करती है।

बोध प्रश्न

- कवि गुप्त के काव्य में साहित्य का कौन सा तत्व प्रमुख रूप से समाया हुआ था ?
- कवि गुप्त की रचनाओं में स्त्री के किस पक्ष को सर्वाधिक चित्रित किया गया है ?

खड़ीबोली के सौन्दर्य को निखारने में कवि मैथिलीशरण गुप्त का अन्यतम स्थान है। काव्य के प्रबंध एवं मुक्तक दोनों ही रूप में उनकी रचनाओं की छटा निराली बन पड़ी है। उन्होंने महाकाव्यों में 'साकेत' तथा 'यशोधरा' एवं खंडकाव्य के रूप में दर्जनों काव्य रचनाएँ करते हुए हिंदी के साहित्य भंडार में अभिवृध्दि की, यथा - 'पंचवटी' (1931 ई.), 'द्वापर' (1936 ई.), 'सिध्दराज' (1931 ई.), 'अंजलि', 'नहुष', 'गुरु तेग बहादुर', 'गुरुकुल', 'जय भारत', 'झंकार', 'युद्ध', 'पृथ्वीपुत्र', 'वक संहार', 'शकुंतला', 'विश्व वेदना', 'राजा प्रजा', 'उर्मिला', 'लीला',

'विष्णुप्रिया', 'दिवोदास', 'प्रदक्षिणा', 'भूमिभाग' आदि। कवि मैथिलीशरण गुप्त के मौलिक नाटकों में 'रंग में भंग', 'वन-वैभव', 'विकट भट', 'विरहिणी', 'वैतालिक', 'शक्ति', 'सैरंध्री', 'हिडिम्बा', 'स्वदेश संगीत', 'चन्द्रहास', 'हिन्दू', 'अनघ', 'चरणदास', 'तिलोत्तमा' आदि है। कवि के आरंभिक नाटक 'मधुप' के नाम से प्राप्त होते हैं, जो संस्कृत, बंगला तथा फारसी भाषा से खड़ीबोली हिंदी में अनुदित किए गए हैं। संस्कृत के 'स्वप्नवासवदत्ता', 'प्रतिमा', 'अभिषेक', 'अविमारक', 'रत्नावली' तथा बंगाली नाटक 'मेघनाथ वध', 'व्रजांगना', 'विरहिणी', 'पलासी का युद्ध' आदि के साथ ही मैथिलीशरण गुप्त जी ने फारसी से उमर खय्याम की रूबाइयत का हिंदी में अनुवाद किया। कवि के वृहद् रचना संसार में उनकी फुटकर रचनाएँ भी हैं, जैसे - 'केशों की कथा', 'स्वर्गारोहण' जो 'मंगल घट' में संग्रहित है। 'पत्रावली' उनके पत्रों का संग्रह है तथा 'उच्छ्वास' कवि की फुटकर कविताओं का संग्रह है।

बोध प्रश्न

- कवि मैथिलीशरण गुप्त के किसी एक महाकाव्य का नाम लिखिए?
- 'अविमारक' गुप्त जी की किस विधा की रचना है ?

7.3.3 रचनाओं का परिचय

साहित्यकार से परिचित होने के लिए हमें उनके साहित्यिक धरातल की पड़ताल करनी ही होती है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की विविध रचनाओं का संक्षेप में परिचय प्राप्त करने हेतु उनकी कृतियों की विविध भावधारा को आधार बनाया जा सकता है। द्विवेदीयुगीन कवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रतिभा महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे गुरु के सान्निध्य में रहकर निखर उठी थी। द्विवेदी जी ने उनकी पहली खड़ीबोली की कविता 1907 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका में 'हेमंत' नाम से प्रकाशित किया था। उनकी राष्ट्रप्रेम से आवेष्टित रचना 'भारत भारती' में भारत के गौरवपूर्ण अतीत, वर्त्तमान और भविष्य को केंद्र में रखते हुए तथा भारत की सांस्कृतिक सम्पन्नता को चित्रित करते हुए तद्युगीन भारतीयों के दीन-हीन विचारशैली पर क्षोभ व्यक्त किया है। भारत एक कृषक संस्कृति प्रधान देश है, अतः वे धरतीपुत्रों से देश को विदेशी शासन की गुलामी को तोड़ने हेतु आन्दोलन करने के लिए 'किसान' कविता में आह्वान करते हैं।

भारतीय संस्कृति में स्त्रियों को पूजनीय स्थान प्रदान किये जाने के उपरांत भी जब कवि समाज में स्त्रियों को द्वितीयक स्थान पर देखते है तो उनका संवेदनशील हृदय इतिहास की उपेक्षित स्त्री पात्रों के माध्यम से उन्हें प्रतिष्ठित करने हेतु सन्नद्ध हो उठता है। चूंकि कवि की विचारधारा द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता से आबध्द थी, इसलिए वे स्त्री के माँ, पत्नी, बहन आदि रूपों को अपने काव्य में प्रतिष्ठापित करते हैं, प्रेयसी रूप को नहीं। यशोधरा, उर्मिला , कैकेयी आदि की उदात छबि को गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। 'पंचवटी' नामक कृति में मानो प्रकृति साक्षात् पाठकों को अपने सम्मोहन में बाँध लेती है, उदाहरणस्वरूप कवि की निम्न पंक्तियों का अवलोकन किया जा सकता है -

चारू चन्द्र की चंचल किरणें, खेल रही हैं जल-थल में।
स्वच्छ चांदनी बिछी हुई है, अवनि और अंबर तल में॥

कवि के आध्यात्मिक स्वरूप का परिचय उनके ही इस वाक्य से प्राप्त होता है -

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है॥

कवि मैथिलीशरण गुप्त 'श्री सम्प्रदाय' में दीक्षित होते हुए भी अपनी कविताओं के माध्यम से वे सदैव सभी धर्मो के प्रति सद्भाव स्थापना का प्रयत्न अपनी कृतियों में करते रहें। वे 'साकेत' में रामभक्ति, 'द्वापर' में कृष्णभक्ति, 'गुरुकुल' में सिख धर्म, 'काबा', 'कर्बला' में इस्लाम धर्म के मानववादी पक्ष को चित्रित करते हैं। कवि सभी धर्मों की सार्थकता को उसके मानववादी गुणों में देखते हैं। उनकी काव्यात्मक विचारधारा पर गाँधी दर्शन का अन्यतम स्थान है, यही कारण है कि उनकी रचनाओं में सत्य, अहिंसा, अछूतोध्दार आदि को विशेष स्थान प्राप्त होता है। उनकी गाँधीवादी रचनाएँ मुक्तक के रूप में अधिक प्राप्त होती हैं।

काव्य के भाव एवं कला पक्ष के निखार को कवि का अन्यतम देन माना जा सकता है। खड़ीबोली को सरल किन्तु सौष्ठव स्वरूप में उन्होंने अपनी कविताओं में प्रयुक्त किया है। हिंदी के सभी शब्दों को वे अपनी कृतियों में सजाते हैं, यथा - तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज आदि। काव्य के प्रबंध, मुक्तक दोनों क्षेत्रों में उनकी लेखनी बराबर चली है। लोक के साथ, लोक के लिए जब लोक की भाषा में रचनाएँ प्रवाहित हो तो रचनाएँ स्वतः ही लोक कल्याणकारी बन जाती हैं। भारत के गौरवपूर्ण इतिहास की झांकी प्रस्तुत करते हुए उन्होंने 'सैरंध्री', 'वक संहार', 'नहुष', 'जयभारत', 'हिडिम्बा', 'विष्णुप्रिया' एवं 'रत्नावली' आदि की रचना की। जब वे अपनी रचनाओं के माध्यम से अंतर्बाह्य सामंजस्य को स्थापित करते हैं, तो कर्मवाद को दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत करने लगते हैं। 'साकेत' महाकाव्य में धरती को स्वर्ग बनाने की भावना को वे राम के माध्यम से प्रकट करते हैं -

संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया
इस भूतल को स्वर्ग बनाने आया॥

वे 'साकेत' में उर्मिला को केंद्र में रखते हुए भी सभी पात्रों को पूर्णतः गरिमामय स्थान प्रदान करते हैं। स्त्रियों के अंतर्मन को टटोलते हुए वे परित्यक्ता, पति वियोगिनी स्त्रियों की पीड़ा को मर्मस्पर्शी प्रस्तुति देते हैं। कवि की वियोगिनी स्त्रियाँ विरह की ताप में स्वर्ण सी निखर उठती हैं। वे प्रमाद के स्थान पर सतत सक्रियता का पथ चुनती हैं।

मैथिलीशरण गुप्त को देश के नवयुवकों से बड़ी आशा थी। वे देश के उत्थान में नवयुवकों के योगदान को अत्यंत आवश्यक मानते थे। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से नवयुवकों को अद्यतन ज्ञान से जुड़कर देश के विकास में सहयोगी बनाने का आह्वान भी किया करते थे।

देशा के विकास में राष्ट्रभाषा की भूमिका को स्पष्टतः स्वीकार करते हुए वे कहते हैं -

है राष्ट्रभाषा भी अभी तक देश में कोई नहीं,
हम निज विचार जान सकें जिससे परस्पर सब कही।
इस योग्य हिंदी है तदापि अब तक न निज पद पा सकी,
भाषा बिना भावैकता अब तक न हममें आ सकी?
कवि देश की सुरक्षा तथा एकता के लिए राष्ट्रभाषा को अपरिहार्य मानते थे।

भारत की कृषक संस्कृति को गरिमामय स्थान पर रखते हुए उनके जीवन में खुशहाली आने की आकांक्षा करते रहते थे। उनका मानना था की जब तक हमारे देश के अन्नदाता सुखी न होंगे, देश में खुशहाली नहीं आ सकती है। वे अपनी एक रचना में कहते हैं -

जब अन्य देश के कृषक संपत्ति में भरपूर हैं
लाते कि जिनसे आठ रूपया रोज के मजदूर हैं,
तब चार पैसे रोज ही पाते यहाँ कृषक कहो।
कैसे चले संसार उनका किस तरह निर्वाह हो?

बोध प्रश्न

- भारत का गौरव सर्वप्रथम गुप्त जी की किस रचना में चित्रित हुआ है?
- कवि गुप्त की विरहिणी स्त्री पात्र प्रमाद के स्थान पर कौन से पथ का चयन करती हैं?

मैथिलीशरण गुप्त जातिभेद को देश के लिए अभिशाप मानते थे। उनका मानना था कि इससे देश का मात्र विनाश ही होता है। उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करने के स्थान पर अपनी संस्कृति में सामंजस्य बिठाने की प्रेरणा दी है। वे अपने समय के भारतीयों को पतन की ओर जाते हुए देख कर तिलमिला उठते हैं, इसलिए अपनी रचनाओं के माध्यम से जनता में अपने देश की संस्कृति के प्रति गौरव भावना का जयघोष कर रहे थे। उन्होंने भारतवर्ष की भूमि को भगवद्भूमि कहते हुए भारत में जन्म लेने वाले महापुरुषों को पुण्यात्मा माना है। भारत की जनता को अपने देश के गौरव का स्मरण दिलाते हुए कहते हैं -

'फिर अपने को याद करो,
उठो, अलौकिक भाव धरों।'

कवि मैथिलीशरण गुप्त के कृतित्व में शिक्षा को विशेष स्थान दिया गया है। जिस देश में गुरु-शिष्य परंपरा का प्रचलन हो, उस देश में शिक्षा के नाम पर रटंत विद्या को देख कर कवि का हृदय द्रवित हो उठता है। इसलिए वे अपनी रचनाओं में इस पीड़ा को व्यक्त करते हैं। वे कहते हैं-

सबसे प्रथम है शिक्षा बढ़ाना देश में,
शिक्षा बिना ही पड़ रहे हैं आज हम सब क्लेश में।
शिक्षा बिना कोई कभी बनता नहीं सत्पात्र है,
शिक्षा बिना कल्याण की आशा दुराशा मात्र है।

देशभक्ति की भावना से भरा हुआ स्वर उनकी 'मंगलघट' रचना में देखी जा सकती है। 'मंगलघट' में संग्रहित कविता का एक उदाहरण यहाँ देखा जा सकता है -

उठ, ओ वृहद्, विराट, विशाल।
उठ अमिताभ, लाभ कर निज पद
लुटा, लक्ष्य पर लाल।

भारतीय संस्कृति की समन्वयात्मकता के पोषक कवि मैथिलीशरण गुप्त अपनी रचनाओं में सामाजिक समरसता को स्थापित करने के उद्देश्य से कहते हैं -

जैन बौद्ध फारसी यहूदी मुसलमान सिक्ख ईसाई
कोटि कंठ से मिलकर कह दें हम सब भाई-भाई।

'रंग में भंग' जैसे मौलिक खंड काव्य में मैथिलीशरण गुप्त देशभक्ति, त्याग तथा आदर्श चरित्र की स्थापना का प्रयत्न करते हैं। उनकी स्वतंत्रता की तीव्र आकांक्षा को 'हिन्दू' काव्य में देखा जा सकता है। काव्य का नाम भले ही हिन्दू हो, किन्तु समस्त काव्य सांप्रदायिक सौहार्द्र की भावना से भरी हुई है। उनकी 'सिद्धराज' काव्य में क्षत्रिय ओज की ज्वाला को अनुभूत किया जा सकता है। थके-हारे, निराश भारतीयों में उर्जा भरने के लिए वे 'जयद्रथ वध' की रचना करते हैं। वे कहते हैं -

अन्यत्र दुर्लभ है भुवन में बात यो उत्कर्ष की।
सचमुच कहीं समता नहीं है, भव्य भारतवर्ष की।

अग्रेजों की नीति भारतीयों को आपस में बाँट कर अपने शासन की नींव मजबूत करने की थी, जिसे कवि ने 'काबा और कर्बला' खंडकाव्य में उध्दृत करते हुए भारत की मजबूती के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को आवश्यक बताया है। वे इस कृति में हजरत साहब से कहलवाते हैं -

भारत का सद्भाव सुन चुका हूँ मैं पहले
वह है ऐसी भूमि विभिन्न मतों को सहले।
चाहा था इसलिए वहीं जाकर रह जाऊँ,
किन्तु विरोधी नहीं चाहते मैं जी पाऊँ।

मैथिलीशरण गुप्त शासन की लोकतांत्रिक प्रणाली के पोषक थे। 'नहुष' काव्य का नायक नक्षत्र लोक को भी मातृभूमि पर न्यौछावर करने के लिए सन्नध्द दिखाई देता है। वे अपने कारावास काल के अनुभव को 'कारावास' नामक रचना में प्रस्तुत करते हैं। उनकी भक्तिपरक रचनाओं में कवि की द्वैत-अद्वैत भक्ति भावना के सामंजस्यपूर्ण चित्रण को देखा जा सकता है। 'यशोधरा' में कवि की गीत, नाटक, तुकांत, अतुकांत आदि भावनाओं की समन्विति को देखा जा सकता है। 'विष्णुप्रिया' में भगवान को भक्त की भक्ति के अधीन बताया गया है। 'साकेत' में कवि की रामभक्ति की पराकाष्ठा को देखते हुए भी लक्ष्मण और उर्मिला के चरित्र की उदात्तता को देखा जा सकता है। 'वकसंहार' में मन्त्र तथा यज्ञ की महत्ता को देखा जा सकता है।

कवि के प्रकृति प्रेम को 'पंचवटी' में प्रमुख रूप से अनुभूत किया जा सकता है। कवि की इन पंक्तियों में प्रकृति मानों खिलखिला रही हो -

चारू चन्द्र की चंचल किरणें
खेल रही है जल थल में
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है
अवनि और अंबरतल में।

'साकेत', 'यशोधरा', 'चन्द्रहास', 'सिद्धराज' आदि में भी कवि के प्रकृति प्रेम के दर्शन होते हैं।

बोध प्रश्न

- गुप्त की सांप्रदायिक सद्भावयुक्त रचना का नाम बताइए?
- 'मंगलघट' किस प्रकार की रचना है?
- 'नहुष' काव्य रचना में नायक मातृभूमि पर किसे न्यौछावर करता है?
- गुप्त जी ने अपने कारावास के अनुभव को किस रचना में चित्रित किया है?

7.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्त्व

हिंदी साहित्य कई ऐसे साहित्यकारों की प्रतिभा से पुष्ट हुई है, जिन्होंने सरस्वती के भंडार को अपनी कलम की धार से सतत पुष्ट किया है। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल को गद्यकाल के नाम से जाना जाता है। आधुनिक हिंदी की खड़ीबोली के परिमार्जित स्वरूप को साहित्य की प्रमुख भाषा के रूप में स्थापित करने में मैथिलीशरण गुप्त का विशेष स्थान है। हिंदी के हिन्दुस्तानी रूप को लेकर प्रेमचंद गद्य साहित्य रचकर 'कथासम्राट' बने, तो पद्य के क्षेत्र में कवि मैथिलीशरण गुप्त खड़ीबोली हिंदी में काव्य रचना करते हुए उच्च मानवीय मूल्यों, राष्ट्रप्रेम की धारा को बहाते हुए राष्ट्रकवि के पद पर सुशोभित हुए। अपने राष्ट्रप्रेम की भावधारा को उन्होंने विविध रचनाओं का केंद्र बनाते हुए भारतीय संस्कृति एवं इतिहास के उज्जवल पक्ष को सर्वसाधारण के मध्य स्थापित किया। पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से उन्होंने भारतीय संस्कृति के नए स्वरूप की परिकल्पना को अपनी कृतियों में स्थान दिया। उन्होंने देश के विकास का सबसे बड़ा अवरोध आम जनता में प्रचलित रूढ़ियों, अंधविश्वासों को मानते हुए जनता को जागरूक बनाया। अपनि कृतियों 'भारत भारती', 'साकेत', 'यशोधरा' आदि के माध्यम से इतिहास को देखने की नयी दृष्टि का विकास किया। उनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए 1952 ई. में भारत सरकार की ओर से राज्यसभा की सदस्यता प्रदान की गयी। 1954 ई. में उन्हें पद्मभूषण सम्मान से आभूषित किया गया। हिंदी साहित्य के क्षेत्र में सतत योगदान हेतु हिन्दुस्तानी अकादमी पुरस्कार, साहित्य वाचस्पति पुरस्कार तथा 'साकेत' कृति पर मंगला प्रसाद पारितोषिक सम्मान से सम्मानित किया गया। उन्होंने अपने 78 वर्ष तक की आयु में 2 महाकाव्य, 19 खंडकाव्य, नाटिकाएं, काव्यगीत आदि की रचना करते हुए हिंदी

साहित्य की खड़ीबोली को गरिमामय स्थान प्रदान किया। हिंदी साहित्य में ऐसे युगपुरुष का आविर्भाव युग को बदलने वाला सिध्द होता है। ऐसे रचनाकारों का साहित्य सबके हित साधन का माध्यम बनकर कालातीत बन जाती है। जब साहित्य सर्वमंगल की साधना के महत्वपूर्ण उद्देश्यों से सम्बध्द हो, तो ऐसा साहित्य एक नए युग के उद्घोष का प्रतीक बन जाता है। कवि मैथिलीशरण गुप्त की साहित्यिक यात्रा ही उनके भारतीय राष्ट्रीय भावधारा का पर्याय बन जाता है।

बोध प्रश्न

- हिंदी साहित्य के आधुनिक काल को और किस नाम से जाना जाता है?
- मैथिलीशरण गुप्त को पद्मभूषण सम्मान किस वर्ष प्रदान किया गया?

7.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के क्षेत्र में सर्वसाधारण की भाषा खड़ीबोली को साहित्य की भाषा बनाकर जन-जन तक पहुँचाने का महत्वपूर्ण कार्य भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था, किन्तु उस भाषा को स्तरीयता प्रदान करने में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का अन्यतम स्थान है। तद्युगीन साम्राज्यवादी विचारों को दरकिनार करते हुए कवि ने इतिहास के पन्नों से स्वर्णिम भारत की झांकी दृढ़तापूर्वक अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया। द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि मैथिलीशरणगुप्त जी को पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी का विशेष आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। भारत के नवजागरण को विषय, भाषा, विचार दृष्टि की नवीनता की अत्यंत अवश्यकता थी, जिसे गुप्त जी ने पूर्णता प्रदान की। भारतीय स्वंत्रता आन्दोलन के समय में जन्मे गुप्त जी का अन्तर्वाह्य व्यक्तित्व अपने घर के वैष्णवी संस्कारों एवं देशप्रेम के उद्गारों ने गढ़ा। गुप्त जी का लेखन 1901 ई. से लेकर भारत की स्वतंत्रता के बाद तक चलता रहा। खड़ीबोली हिंदी में संस्कृत, बंगला, उर्दू के साहित्य, रूबाइयों के अनुवाद कार्य से लेकर इतिहास के उपेक्षित पात्रों को उन्होंने जन-जन में प्रतिष्ठित किया। उन्होंने 50 से भी अधिक रचनाओं का प्रणयन करते हुए हिंदी साहित्य भण्डार को पुष्ट किया। भारतीय संस्कृति के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व एवं क्षणों को सबके सामने प्रस्तुत करते हुए उन्होंने भारतीयों के आत्मगौरव को जगाया। कवि गुप्त के स्वभाव में साहित्य का लोकतत्व समाहित होने के कारण वे सदैव लोककल्याण के राहों का अन्वेषण साहित्य के माध्यम से करते रहते थे। प्रबंध काव्य, मुक्तक काव्य, खंड काव्य, पद्य नाटक, रूपक कविताओं आदि के सृजन द्वारा जन मन को आंदोलित करते हुए उन्होंने आज़ादी की राह को आसान बनाया। हिंदी साहित्य भारती अपने ऐसे सुपुत्र को पाकर सदैव अपने भाग्य को सराहती रहेगी। उनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए 1952 ई. में भारत सरकार की ओर से राज्यसभा की सदस्यता प्रदान की गयी। 1954 ई. में पद्मभूषण सम्मान तथा अन्य कई सम्मान से सम्मानित किया गया। हिंदी साहित्य ऐसे यशस्वी पुत्र को पाकर धन्य हो गयी। कवि मैथिलीशरण गुप्त की समग्र रचनाओं पर दृष्टिपात करने पर स्वतः ज्ञात होता है कि उनकी

रचनाओं में धर्म, जाति तथा लिंग भेद को मिटाने का सर्वदा प्रयत्न किया गया है। कवि को यह भलीभाति पता था कि कृषक संस्कृति प्रधान भारत वर्ष की आध्यात्मिकता को देशवासियों में अपने गौरवपूर्ण अतीत की जानकारी होनी आवश्यक है। यही कारण है कि हताशा को भारतीय जनता के मन से निकालने के लिए उन्होंने इतिहास तथा पुराणों के उपेक्षित पात्रों को अपनी रचनाओं के नायक-नायिका के रूप में प्रस्तुत करते हुए उन्हें गरिमामयी छबि के साथ स्थापित किया। कवि ने अपने समय के साथ जोड़ते हुए साहित्य को प्रासंगिकता का फलक प्रदान किया। समग्रतः मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि साहित्य सृजन के माध्यम भारतीय सपूतों के मन में आत्माभिमान को जगाना था, जिसके लिए वेसदैव प्रयत्नरत रहते थे।

7.5 पाठ की उपलब्धियां

उपरोक्त पाठ के अध्ययन की निम्नलिखित उपलब्धियां हैं -

1. मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व के अन्तर्वाह्य स्वरूप का परिचय प्राप्त हुआ।
2. हिंदी साहित्य के राष्ट्रकवि की साहित्यिक यात्रा की जानकारी प्राप्त हुई।
3. मैथिलीशरण गुप्त की कृतियों की जानकारी मिली।
4. मैथिलीशरण गुप्त के काव्यगत विशेषताओं का विश्लेषण किया गया।
5. हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त के स्थान एवं महत्त्व की व्याख्या की गयी।
6. कवि गुप्त की राष्ट्रीय भावधारा का परिचय प्राप्त हुआ।
7. कवि की रचनाओं में व्याप्त विश्वमानवतावाद की जानकारी मिली।

7.6 शब्द सम्पदा

1. अनन्य = एकमात्र
2. अन्वेषण = खोज करना
3. अल्पायु = कम आयु वाला
4. अवदान = योगदान
5. अवरोध = रुकावट
6. आध्यात्मिकता = संसारिकता का अभाव
7. आयाम = विस्तार
8. आवेष्टित = चारों ओर से घिरा हुआ
9. आहूत = आमंत्रित किया गया

10. आह्वान = बुलाना

11. उद्गार = मन में भरी हुई बात व्यक्त होना

12. उद्दाम = प्रबल

13. उपादेयता = उपयोगी

14. उपाधि = पदवी

15. उपेक्षित = नजरअंदाज करना

16. ओजस्वी = सशक्त

17. औदात्य = महान

18. जनक = जन्म देने वाला

19. परिमार्जित = साहित्यिक कमियों को दूर करना

20. प्रतिबध्दता = वचनबद्धता

21. मनोनीत = चुना हुआ

22. महारत = योग्यता

23. विराम = विश्राम

24. सन्नध्द = किसी कार्य में तल्लीन

25. समाहित = व्यवस्थित रूप से एकत्रित किया हुआ

26. सान्निध्य = समीपता

27. सौष्ठव = उत्तमता

28. हताश = जीवन से हारा हुआ

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त का विस्तृत परिचय दीजिए।

2. राष्ट्रकवि के साहित्यिक अवदानों की चर्चा कीजिए।

3. हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त का स्थान एवं महत्त्व विवेचित कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त के अनुदित रचनाओं का परिचय दीजिए।
3. मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्यों पर प्रकाश डालिए।
4. मैथिलीशरण गुप्त के खंडकाव्यों का नामोल्लेख कीजिए।

खंड (स)

I . सही विकल्प चुनिए –

1. महात्मा गाँधी ने मैथिलीशरण गुप्त को कौन सी उपाधि दी? ( )

   अ) साहित्य शिरोमणि आ) हिंदीदूत इ) राष्ट्रकवि

2. हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक नव जागरण का दस्तावेज गुप्त की किस रचना को माना जाता है? ( )

   अ) साकेत आ) भारत भारती इ) रंग में भंग

3. ‘साकेत’ किस प्रकार की विधा है? ( )

   अ) महाकाव्य आ) खंडकाव्य इ) रूपक काव्य

4. ‘यशोधरा’ कृति में किसे केन्द्रीय पात्र बनाया गया है? ( )

   अ) यशोदा आ) यशोधरा इ) गौतम बुध्द

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. गुप्त जी ने ‘मानस मुद्रण’ प्रेस की स्थापना ....ई. में की।
2. गुप्त जी ने ‘साहित्य सदन’ प्रेस को ....ई. में शुरू किया।
3. ‘कवि दिवस’ ...... अगस्त को मनाया जाता है।
4. ....पत्रिका में गुप्त जी ‘विदग्ध हृदय’ के नाम से अपनी रचनाएँ प्रकाशित करवाते थे।

III सुमेल कीजिए

1) रामचरण कनकने अ) मौलिक नाटक

2) शकुंतला आ) 1935 ई.

3) पद्मभूषण उपाधि इ) मैथिलीशरण गुप्त के पिता

ई)1954ई.

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. दीक्षित, आनंद प्रकाश - मैथिलीशरण गुप्त

2. पालीवाल डॉ कृष्णदत्त (सम्पादक) – मैथिलीशरण गुप्त ग्रंथावली (मौलिक तथा अनूदित समग्र कृतियों का संकलन 12 खण्डों में

3. डॉ नगेन्द्र, मैथिलीशरण गुप्त पुनर्मूल्यांकन

4. सरस्वती पत्रिका, प्रकाशन : इलाहाबाद इंडियन प्रेस, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

5. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास

6. गुप्त, मैथिलीशरण : वैतालिक, साहित्य सदन, चिरगांव (झाँसी)

7. शुक्ल, डॉ प्रेमनारायण (सम्पादक), सम्मलेन पत्रिका (त्रैमासिक), राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त विशेषांक

8. गुप्त, मैथिलीशरण, भारत-भारती (भविष्यत् खंड), साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी)

9. प्रकाश, डॉ राघव (सहसंपादक), मैथिलीशरण गुप्त और तत्कालीन भारतीय साहित्यिक परिवेश

10. गुप्त, मैथिलीशरण, काबा और कर्बला, साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी)

11. गुप्त, मैथिलीशरण, पंचवटी, साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी)

इकाई : 8 'साकेत' नवम सर्ग (दस चयनित अंश)

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : 'साकेत' नवम सर्ग (दस चयनित अंश)
8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय
8.3.2 अध्येय कविता
8.3.3 विस्तृत व्याख्या
8.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियां
8.6 शब्द सम्पदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

'साकेत' हिंदी साहित्य का अमर महाकाव्य है, जिसके रचनाकार राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी हैं। 'साकेत' का प्रथम प्रकाशन सन् 1931 में हुआ। इस कृति के लिए मैथिलीशरण गुप्त को सन् 1932 में 'मंगलाप्रसाद परितोषिक' पुरस्कार प्रदान किया गया। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की कृतियों में प्रायः इतिहास के भूले-बिसरे, उपेक्षित पात्रों को औदात्य के धरातल पर स्थापित किया जाता रहा है। 'रामायण' के कथानक एवं पात्रों को लेकर भारतीय भाषा एवं साहित्य का भण्डार भरा हुआ है। मैथिलीशरण गुप्त ने रामायण के प्रति अपनी विशिष्ट दृष्टि को चित्रित करते हुए राम के छोटे भाई लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह को मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। 'साकेत' में लक्ष्मण एवं उर्मिला के पावन दाम्पत्य को पढ़कर सहृदय का मन द्रवित हो जाता है। कैकेयी के पश्चाताप को मनोवैज्ञानिकता के धरातल पर कवि ने बड़ी सूक्ष्मता के साथ इस महाकाव्य में प्रस्तुत किया है। 'साकेत' महाकाव्य का नवम सर्ग अत्यंत ही मार्मिक है। उर्मिला के विरह में प्राकृतिक उपादानों की महत्वपूर्ण भूमिका को चित्रित किया गया है।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं -

- मैथिलीशरण गुप्त की महाकाव्यात्मकता से परिचित होंगे।
- 'साकेत' के नवम सर्ग के माध्यम से भारतीय नारी के औदात्य का परिचय प्राप्त होगा।
- 'साकेत' में प्रस्तुत प्रकृति चित्रण को विवेचित किया जाएगा।
- उर्मिला और लक्ष्मण के दाम्पत्य जीवन की मार्मिकता से परिचित होंगे।

- हिंदी साहित्य में 'साकेत' महाकाव्य की उपादेयता की जानकारी मिलेगी।

8.3 मूल पाठ : 'साकेत' नवम सर्ग (दस चयनित अंश)

कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्यों में अपने अतीत, वर्तमान और भविष्य की झांकी को साहित्यिक चेतना के उच्च धरातल पर स्थित पाते हैं। कवि अपने युगीन गतिविधियों के प्रति जितने अधिक सजग होते हैं, उनकी रचनाओं में जीवन्तता उतनी ही अधिक बढ़ जाती है। हिंदी साहित्य में काव्यभाषा के रूप में खड़ीबोली के परिमार्जित स्वरूप को प्रतिष्ठा दिलाने में मैथिलीशरण गुप्त का अन्यतम स्थान है। उनका जन्म 1886 ई. में झाँसी के चिरगांव नामक स्थान पर हुआ। इनके पिता सेठ रामचरण गुप्त तथा माता काशीबाई थीं। लेखन प्रतिभा उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। राष्ट्रप्रेम धारा युक्त कविता 'भारत भारती' की रचना के बाद महात्मा गाँधी द्वारा मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' की उपाधि दी गई। खड़ीबोली हिंदी के प्रसिध्द कवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्यिक क्षेत्र में दद्दा के नाम से जाने जाते हैं। हिंदी साहित्य जगत में उनके जन्मदिवस 3 अगस्त को 'कवि दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मैथिलीशरण गुप्त के साहित्यिक अवदान को देखते हुए भारत सरकार ने इन्हें 1954 ई. में 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया। उनकी प्रमुख रचनाओं में 'रंग में भंग' (1909 ई.), 'जयद्रथ वध' (1910 ई.), 'साकेत' (1932 ई.), 'भारत भारती' (1912-13 ई.), 'यशोधरा' (1933 ई.) आदि है ।

'साकेत' कवि के काव्यात्मक सौन्दर्य का सर्वोत्तम उदाहरण है। ऋतुओं के बदलने पर उर्मिला के मनोभाव भी बदलते हुए कवि ने विवेचित किए हैं। संयोग के क्षणों में जो ऋतुएँ नायिका को सुख पहुंचाते थे, वियोग में उतनी ही तीव्रता के साथ त्रासद बन जाती हैं। कवि ने प्रकृति चित्रण में भले ही रीतिकालीन परंपरा का अनुसरण किया हो, किन्तु चित्रण की शैली उनकी अपनी है। 'साकेत के नवम सर्ग में कवि ने प्रकृति को उद्दीपक रूप में चित्रित करते हुए उर्मिला के मनोभाव को विस्तार से बताया है।

8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'साकेत' महाकाव्य के रचयिता मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि में रामकथा के नायक, नायिका मानव लोक के प्राणी हैं। वाल्मीकि के 'रामायण' तथा तुलसीदास के 'रामचरितमानस' की तरह 'साकेत' भी एक रामकथा ही है, किन्तु अपने नव्यतम दृष्टिकोण के कारण यह ग्रन्थ पाठकों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। इसकी कथावस्तु पुरानी होकर भी काव्य दृष्टि सर्वथा नयी है। 'साकेत' के कथानक के केन्द्रीय पात्र परम्परा से हटकर उर्मिला तथा लक्ष्मण हैं। उर्मिला के विरह वर्णन को पढ़ कर पाठकों की आँखें नम हो आती हैं। प्रस्तुत पाठ में उर्मिला के आंसुओं में डूबे दस काव्यांशों की व्याख्या की जाएगी। सीता और उर्मिला जैसी सुपुत्रियों के कारण ही राजा जनक स्वयं को धन्य मान रहे थे। उर्मिला वेदना को महत्वपूर्ण मानती हैं। क्योंकि वेदना की तीव्रता के कारण ही वे वेदना को हीरे सी अनमोल मानती हैं। वेदना से ही उर्मिला अपने प्रेम की दृढ़ता को अनुभूत कर पाती है। वेदना उर्मिला के जीवन में प्राणवायु के समान है, चातक पक्षी की एकनिष्ठता से वे अपने प्रेम की तुलना करती हैं। शरद ऋतु आने पर खंजन पक्षी जब

आते हैं, तो उन्हें अपने प्रियतम लक्ष्मण की याद दिलाते हैं। उर्मिला शिशिर ऋतु से कहती हैं कि व्यर्थ ही वह वन और पर्वतों में घूमता है, जबकि प्रियतम के बिना वह पतझड़ सी बनी सदा कांपती रहती है। वे अपने विरहपूर्ण जीवन की तुलना अगणित तारों से करती हैं। वे कामदेव को बसंत के आगमन पर चुनौती देती हुई अपने सतीत्व के सिन्दूर से भस्म करने की चेतावनी देती हैं। उर्मिला अपनी उद्विग्नता में अपनी सखी को कभी कोमल फूलों को तोड़ने से रोकती हैं तो कभी कहती हैं इन्हें तोड़कर व्यर्थ झड़ने से बचा लो। नायिका रोना आने पर भी गाने की बात कहती हैं। उन्हें ऐसा भ्रम होता है कि उनके प्रिय छिप-छिप कर उर्मिला को देखने आते हैं। वे कहती हैं कि प्रिय आये और देखे कि मैं जी नहीं रही हूँ बल्कि अपने आँसू पी रही हूँ।

8.3.2 अध्येय कविता

साकेत - नवम सर्ग - चयनित अंश

1. दो वशंजों में प्रकट करके पावनी लोक-लीला,
सौ पुत्रों से अधिक जिनकी पुत्रियाँ पूतशीला;
त्यागी भी हैं शरण जिनके, जो अनासक्त गेही,
राजा-योगी जय जनक वे पुण्यदेही, विदेही।

2. वेदने, तू भी भली बनी।
पाई मैंने आज तुझी में अपनी चाह घनी।
नई किरण छोडी है तूने, तू वह हीर-कनी,
सजग रहूँ मैं, साल हृदय में, ओ प्रिय-विशिख-अनी!

ठंडी होगी देह न मेरी, रहे दृगंबु -सनी,
तू ही उष्ण उसे रक्खेगी मेरी तपन-मनी!
आ, अभाव की एक आत्मजे, और अदृष्टि-जनी!
तेरी ही छाती है सचमुच उपमोचितस्तनी!
अरी वियोग-समाधि, अनोंखी, तू क्या ठीक ठनी,
अपने को, प्रिय को, जगती को देखूँ खिंची-तनी।
मन-सा मानिक मुझे मिला है तुझमें उपल-खनी,
तुझे तभी त्यागूँ जब सजनी, पाऊँ प्राण-धनी।

3. कहती मैं, चातकि, फिर बोल,
ये खारी आँसू की बूँदें दे सकतीं यदि मोल!

कर सकते हैं क्या मोती भी उन बोलों की तोल?
फिर भी फिर भी इस झाड़ी के झुरमुट में रस घोल।
श्रुति-पुट लेकर पूर्वस्मृतियाँ खड़ी यहाँ पट खोल,
देख, आप ही अरुण हुये हैं उनके पांडु कपोल!
जाग उठे हैं मेरे सौ सौ स्वप्न स्वयं हिल-डोल,
और सन्न हो रहे, सो रहे, ये भूगोल-खगोल।
न कर वेदना-सुख से वचिंत, बढ़ा हृदय-हिदोंल,
जो तेरे सुर में सो मेरे उर में कल-कल्लोल!

4. निरख सखी, ये खंजन आये,
फेरे उन मेरे रजंन ने नयन इधर मन भाये!
फैला उनके तन का आतप, मन-से सर सरसाये,
घूमें वे इस ओर वहाँ, ये हसं यहाँ उड़ छाये!
करके ध्यान आज इस जन का निश्चय वे मुस्काये,
फूल उठे हैं कमल, अधर-से ये बधूंक सुहाये!
स्वागत, स्वागत, शरद, भाग्य से मैंने दर्शन पाये,
नभ ने मोती वारे, लो, ये अश्रु अर्घ्य भर लाये!

5. शिशिर, न फिर गिरि-वन में,
जितना माँगे, पतझड़ दूँगी मैं इस निज नदंन में,
कितना कंपन तुझे चाहिए, ले मेरे इस तन में।
सखी कह रही, पांडुरता का क्या अभाव आनन में?
वीर, जमा दे नयन-नीर यदि तू मानस-भाजन में,
तो मोती-सा मैं अकिंचना रक्खूँ उसको मन में।
हँसीं गई, रो भी न सकूँ मैं, -अपने इस जीवन में,
तो उत्कंठा है, देखूँ फिर क्या हो भाव-भुवन में।

6. शीत काल है और सबेरा;
उछल रहा है मानस मेरा;
भरे न छींटों से तनु तेरा,
रुदन जहाँ क्या गान वहाँ?
भूल पड़ी तू किरण, कहाँ?
मेरी दशा हुई कुछ ऐसी

तारों पर अँगुली की जैसी,
मींड़, परन्तु कसक भी कैसी?
कह सकती हूँ नहीं न हाँ।
भूल पड़ी तू किरण, कहाँ?
न तो अगति ही है न गति, आज किसी भी ओर,
इस जीवन के झाड़ में रही एक झकझोर!

7. मुझे फूल मत मारो,
मैं अबला बाला वियोगिनी, कुछ तो दया विचारो।
होकर मधु के मीत मदन, पटु, तुम कटु गरल न गारो,
मुझे विकलता, तुम्हें विफलता, ठहरो, श्रम परिहारो।
नही भोगनी यह मैं कोई, जो तुम जाल पसारो,
बल हो तो सिन्दूर-बिन्दु यह-यह हर नेत्र निहारो!
रूप-दर्प कंदर्प, तुम्हें तो मेरे पति पर वारो,
लो, यह मेरी चरण-धूलि उस रति के सिर पर धारो!

8. छोड़, छोड़, फूल मत तोड़,
आली, देख मेरा हाथ लगते ही यह कैसे कुम्हलाये हैं?
कितना विनाश निज क्षणिक विनोद में है,
दु:खिनि लता के लाल आँसुओं से छाये हैं।
किन्तु नहीं, चुन ले सहर्ष खिले फूल सब
रूप, गुण, गन्ध से जो तेरे मनभाये हैं,
जाये नहीं लाल लतिका ने झड़ने के लिए,
गौरव के संग चढ़ने के लिए जाये हैं।

9. अब जो प्रियतम को पाऊँ
तो इच्छा है, उन चरणों की रज मैं आप रमाऊँ !
आप अवधि बन सकूँ कहीं तो क्या कुछ देर लगाऊँ,
मैं अपने को आप मिटाकर, जाकर उनको लाऊँ।
ऊषा-सी आई थी जग में, सन्ध्या-सी क्या जाऊँ?
श्रान्त पवन-से वे आवें, मैं सुरभि -समान समाऊँ !
मेरा रोदन मचल रहा है, कहता है, कुछ गाऊँ,
उधर गान कहता है, रोना आवे तो मैं आऊँ !

इधर अनल है और उधर जल हाय! किधर मैं जाऊँ?
प्रबल बाष्प, फट जाय न यह घट कह तो हाहा खाऊँ

10. विचारती हूँ सखि, मैं कभी कभी,
अरण्य से हैं प्रिय लौट आते।
छिपे छिपे आकर देखते सभी
कभी स्वयं भी कुछ दीख जाते!
आते यहाँ नाथ निहारने हमें,
उद्धारने या सखि, तारने हमें?
या जानने को, किस भाँति जी रहे?
तो जान लें वे, हम अश्रु पी रहे!

निर्देश : 1. उक्त कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।
2. उक्त कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

8.3.3 विस्तृत व्याख्या

1. पद्यांश : दो वशंजों में ....वे पुण्यदेही, विदेही।

कठिन शब्दार्थ : पूतशीला = पवित्र चरित्र वाली, शीलवती; अनासक्त = उदासीन, गेही = गृहस्थ

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में दो कुलों को अपने अनुपम त्याग से गौरवान्वित करने वाली सीता और उर्मिला के चरित्र को बताया गया है।

प्रसंग : राम के वनगमन के समय सीता भी अपने पति के साथ वन के लिए जाती हैं । लक्ष्मण अपने भाई और भाभी की सेवा के लिए उनके साथ जाते हैं। मैथिलीशरण गुप्त ने ऐसे प्रसंग में उर्मिला की पीड़ा से द्रवित होकर उनके त्याग का चित्रण किया हैं।

व्याख्या : कवि के अनुसार सीता और उर्मिला जैसी पुत्रियों के त्यागमय जीवन के कारण विदेहराज राजा जनक के गौरव में वृध्दि होती है। क्योंकि निमि और रघु वंश ऐसी पुण्यशीलाओं के कारण धन्य हो गया है। राजा जनक अपनी पुत्रियों के पवित्र त्याग के कारण स्वयं को सौ पुत्रों वाले व्यक्ति से भी अधिक भाग्यशाली समझते हैं। राजा जनक का यश चारों ओर महान त्यागी गृहस्थ के रूप में विख्यात था, ऐसे में सीता तो राजसुख का त्याग करके राम के साथ वन की ओर चल पड़ती हैं, जबकि ऐसे में उर्मिला का त्याग इन सबमें सबसे ऊँचा हो जाता है। वह महल में रह कर भी तपस्विनी बनी रहती है।

विशेष : प्रस्तुत पद्यांश में विरोधाभाष अलंकार को देखा जा सकता है । जनक की प्रसंशा कवि मंगलाचरण के रूप में करते हैं । उर्मिला , सीता और राजा जनक के भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन के संतुलन को बताया गया है ।

बोध प्रश्न

- 'पूतशीला' शब्द का प्रयोग किस अर्थ में किया गया है?

2. पद्यांश : वेदने, तू भी भली बनी...............पाऊँ प्राण-धनी।

कठिन शब्दार्थ : वेदना = दुःख, हीर कनी = हीरे का कण, विशिख = रोगियों के रहने का स्थान अथवा बाण, उपमोचिस्तनी = माँ के स्तन के पास अथवा हृदय के पास

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में वेदना का मानवीकरण करते हुए कवि ने वेदना के सकारात्मक पक्ष को चित्रित किया है। उर्मिला को अपनी वेदना की तीव्रता में प्रेम की तीव्रता की अनुभूति होती है।

प्रसंग : इस पद्यांश में उर्मिला द्वारा वेदना के पिता के रूप में अभाव तथा माता के रूप में अदृष्टि को चित्रित किया गया है। वेदना का यह अनोखा रूप उर्मिला को अधिक अच्छा लगता है।

व्याख्या : उर्मिला के माध्यम से कवि ने इस पद्यांश में वेदना के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। उर्मिला वेदना से कहती हैं कि वेदना तुम्हारे ही कारण मुझे आज अपने प्रिय के प्रति प्रेम की गहराई का पता चला है। मेरे मन में ये आशा जगी है कि मेरे प्रिय से मेरा मिलन अवश्य होगा। उर्मिला को वेदना जहां एक ओर हीरे के प्रकाश सी अनुभूत होती है तो दूसरी ओर वे वेदना को पीड़ाजनक बाण के समान मानकर स्वयं को सजग रहने के लिए कहती हैं। प्रिय के अभाव रूपी पीड़ा में तथा प्रिय की अदृष्टि की स्थिति में वेदना अत्यधिक प्रबल हो उठती है। वे कहती हैं वेदना के कारण निरंतर मेरे आँसुओं के बहते रहने पर भी मेरा शरीर वेदना रुपी सूर्यकांत मणि के कारण गर्म रहता है। वेदना अभाव की इकलौती पुत्री है तथा उसकी माँ अदर्शन है। उर्मिला लक्ष्मण के अभाव तथा अदर्शन से उत्पन्न वेदना के सीने से पुत्री की भांति चिपकी रहना चाहती हैं। वे अपने प्रिय के मिलन पर ही उसे छोड़ने की बात कहती हैं।

विशेष : विवेच्य पद्यांश में कवि पूर्व प्रचलित मान्यता से हटकर वेदना के प्रति नवीन दृष्टि का प्रतिपादन करते हुए उर्मिला के जीवित रहने का आधार वेदना को बताते हैं।

बोध प्रश्न

- वेदना को कवि ने हीरकनी क्यों कहा है?

3. पद्यांश : कहती मैं, चातकि , फिर बोल............. मेरे उर में कल-कल्लोल!

कठिन शब्दार्थ : श्रुति-पुट = दोनों कान, पांडु = पीला पड़ना, हिंदोल= एक राग अथवा झूला, कल-कल्लोल = मन की लहर

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला अपने प्रेम की एकनिष्ठता की उपमा चातकी पक्षी से देती हैं। वे अपनी पूर्व स्मृतियों को श्रुति पुट सी मानती हुई वेदना को अपने जीवन का सुख मानती हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला स्वयं को चातकी मानते हुए अपने आंसुओं को मोती से भी अधिक अनमोल बताती हैं। अपने जीवन की पूर्वस्मृतियों को श्रुति पुट सी पवित्र मानते हुए वेदना के सुर में सुर मिला कर गाती हैं।

व्याख्या : उर्मिला स्वयं को चातकी मानते हुए कहती हैं कि हे मेरे मन रुपी चातकी ! मेरे नेत्रों से निरंतर बहने वाले आंसुओं का मूल्य मोती से भी अधिक है। मेरा जीवन फिर भी पतझड़ बना हुआ है। मेरे जीवन के पतझड़ में पूर्वस्मृतियाँ श्रुति पुट सी यादों के दरवाजों को खटखटाया करती हैं। मेरी यादों की सुरलहरियां मेरे पीले पड़े गालों को लाल बना देती हैं। मेरे निर्जीव से शून्य जीवन को वेदना आकर स्मृतियों के झूले पर झुलाने और गाने लगती हैं। उर्मिला यादों की लहरों पर झूलते हुए अपने प्रिय की स्मृतियों के बादल को चातकी सी देख रही हैं।

विशेष : विवेच्य पद्यांश में उर्मिला के प्रेम की एकनिष्ठता की कवि चातकी से उपमा देते हैं तो आंसुओं की लड़ियों को मोती से भी अधिक अनमोल चित्रित करते हैं। नायिका वेदना को सुख मानकर उसी के साथ रहना चाहती है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला ने स्वयं को चातकी क्यों कहा है?

4. पद्यांश : निरख सखी, ये खंजन आये.................ये अश्रु अर्ध्य भर लाये!

कठिन शब्दार्थ : निरख = देखो, खंजन = एक पक्षी, आतप= धूप , प्रकाश, बंधूक = लाल रंग का फूल, शरद = एक ऋतु का नाम जो ठंडी से पहले आता है, अर्ध्य = पूजा के लिए जल

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला प्रकृति के अलग-अलग छटाओं में अपने प्रियतम की छबि देखती हैं।

प्रसंग : प्रिय के सौन्दर्य का अद्भुत प्रसंग कवि ने किया है। उर्मिला प्रकृति में कमल के खिलने का कारण अपने प्रिय की मुस्कान को मानती हैं। प्रकृति के उपादानों में होने वाले सुंदर परिवर्तन को देख-देख कर वह प्रसन्न होती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं कि देखो सखी! शरद ऋतु शुरू हो गया है। खंजन पक्षी इधर आकर मेरे प्रिय की आँखों का स्मरण दिलाते हैं। इस ऋतु में धूप चारों ओर फैलकर मेरे प्रिय की आभा का आभास दिलाते हैं। हे सखी, मेरे प्रिय की दृष्टि खंजन पक्षी के माध्यम से पड़ी तो तालाब का कमल भी खिल उठा। कमल की कोमलता मेरे प्रिय की ही कोमलता है। अवश्य ही मेरे प्रिय मुझे याद करके हँसे होंगे, जिससे ये धवल हंस उड़कर इधर आ गए हैं। मेरे प्रिय की मुस्कान कमल के खिलने में प्रतिबिंबित हो रही है,

प्रिय के हंसने पर उनके लाल-लाल ओंठ यहाँ दुपहरियां के फूल के रूप में खिले हुए हैं। नायिका कहती हैं शरद ऋतु के आने से मैं ही नहीं बल्कि आकाश भी खुश होकर ओस रुपी मोती बरसा रहा है। मैं तो ख़ुशी से अपने आंसुओं के अर्ध्य चढ़ा रही हूँ, हे शरद ऋतु ! इन्हें स्वीकार करके मुझ पर अनुग्रह करो।

विशेष : प्राकृतिक उपादानों का अद्भुत चित्रण इस पद में किया गया है। प्रकृति के प्रत्येक रम्य दृश्य में प्रियतम की छबि का सुंदर साम्य प्रस्तुत किया गया है।

बोध प्रश्न

- तालाब के कमल किस कारण खिल जाते हैं?

5. पद्यांश : शिशिर, न फिर गिरि -वन में.................. क्या हो भाव-भुवन में।

कठिन शब्दार्थ : पांडुरता = पीलापन, आनन= चेहरा, अकिंचना = बेचारी, उत्कंठा = इच्छा, भुवन = संसार

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में शिशिर ऋतु का मानवीकरण किया गया है।

प्रसंग : उर्मिला द्वारा शिशिर ऋतु का आवाहन किया गया है। वे शिशिर ऋतु की सहायता करना चाहती हैं।

व्याख्या : उर्मिला कहती हैं, हे शिशिर ! तुम निरर्थक पर्वत, पहाड़ की ओर घूमती रहती हो। तुझे जो भी चाहिए वह सब मेरे पास है। मेरे शरीर रुपी पतझड़ से आओ तुम्हें पतझड़ दे दूं। तुम्हारा काम सबको कंपन देना है, तो लो मैं भी अपने प्रिय के विरह में रात-दिन कांपती रहती हूँ। तुम्हें जितना कम्पन चाहिए मुझसे ले लो। तुम्हारे आने से प्रकृति पीली पड़ जाती है। मेरी सखियाँ कहती हैं कि मेरा शरीर प्रियतम के अभाव में पीला पड़ चुका है।

हे शिशिर ! तुम्हारे आने से सब ठंडी से जम जाते हैं। मेरे प्रियतम की स्मृतियों के आंसुओं को ज़माने में मेरी सहायता करो ताकि मैं अकिंचन उन्हें जमा कर सहेज लूं। मेरी विवशता तो देखो कि मैं अपने प्रिय को दिए गए वचन के कारण रो भी नहीं सकती हूँ। मेरी भी अब ऐसी उत्सुकता है कि हंसने-रोने के अभाव में मेरे भाव-जगत की क्या स्थिति है? अर्थात मैं स्वयं के भाव जगत को जानने के लिए उत्कंठित हूँ।

विशेष : शिशिर ऋतु का मानवीकरण किया गया है। उर्मिला की विरहपूर्ण स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला शिशिर ऋतु को क्यों बुलाती हैं?

6. पद्यांश: शीत काल है और सबेरा..................... झाड़ में रही एक झकझोर!

कठिन शब्दार्थ : रूदन = रोना, मींड = मलना, कसक = रूक-रूक कर होने वाली पीड़ा

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला की मानसिक पीड़ा का चित्रण हुआ है।

प्रसंग : कवि ने इस पद्यांश में उर्मिला के गहन विरह पीड़ा को चित्रित करते हुए उनकी विवशता को प्रकट किया है।

व्याख्या : इस पद्यांश में उर्मिला शीतकाल के गुनगुने धूप को देख कर व्यथित हो उठती हैं। वे कहती हैं शीत ऋतु की कपकपाती ठण्डी में सुबह की सूर्य किरण सुखदायक प्रतीत होती है किन्तु मेरे लिए शीत ऋतु की किरणें दुखदायक बन गयी हैं। क्योंकि प्रिय विरह के कारण आंसुओं के छीटों से मेरा तन भरा हुआ है। नायिका कहती हैं जहाँ रोना होगा वहाँ हे किरण! गान भला कैसे हो सकता है। निश्चय ही किरणें अपना मार्ग भूलकर मेरी ओर आ गयी हैं। मेरी विरह स्थिति तो ऐसी है कि उंगली पर तारे गिनने जैसी समाप्त ही नहीं हो रही हैं। अतः मेरे मन की पीड़ा रह-रह कर मुझे त्रास पहुंचा रही है। मेरे जीवन के पतझड़ में मुझे न तो गति और न अगति ही मिली। क्योंकि मेरी बड़ी बहन सीता भले ही वन में हैं, लेकिन अपने पति के साथ हैं। मुझे तो न पति का सुख है और न ही राजमहल का सुख मिला। अतः हे किरण! तू भूलकर मेरे पास आ गयी है। मेरे मन की व्यथा तो मैं किसी से कह भी नहीं सकती हूँ।

विशेष : विवेचित पद्यांश में उर्मिला के विरह का कारुणिक चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला को गति या अगति क्यों नहीं मिलती है?

7. पद्यांश : मुझे फूल मत मारो...................... उस रति के सिर पर धारो !

कठिन शब्दार्थ : मदन = कामदेव, कटु = कडुवा, पटु = बुध्दिमान, गरल = विष, विकलता = व्याकुलता, परिहारो = दूर करो, हर नेत्र = शिव का नेत्र, दर्प = घमंड, कंदर्प = कामदेव, रति = कामदेव की पत्नी का नाम

सन्दर्भ : इस पद्यांश में फूलों को खिला हुआ देख कर उर्मिला की विरह पीड़ा बढ़ जाती है। उनकी मनःस्थिति का कवि ने जीवंत चित्रण किया है।

प्रसंग : इस पद में उर्मिला कामदेव को अपने सतीत्व की शक्ति से परास्त करती हुई चित्रित हुई हैं।

व्याख्या : पुष्पों का खिलना सबको प्रिय लगता है, किन्तु विरहिणी उर्मिला को पुष्पों का खिलना अत्यंत त्रासद प्रतीत होता है। वे कहती हैं हे कामदेव! मुझे अपने काम पुष्प से मत मारो। मैं पहले ही विरहिणी स्त्री हूँ, मेरे प्रियतम मेरे साथ नहीं हैं। मैं जानती हूँ कि तुम बसंत के मित्र हो, इसलिए मधु की ही वर्षा करोगे। लेकिन मुझ पर तुम्हारा मधु विष बनकर असर नहीं करेगा। क्योंकि मैं पतिव्रता स्त्री हूँ, संयम से रहती हूँ। मैं भोगिनी नहीं अपितु योगिनी स्त्री हूँ। अतः हे कामदेव! यदि तुममें शक्ति है तो अपने काम बाण के साथ मेरे माथे के सिन्दूर की ओर देखो। यह शिव की तीसरी आंख बनकर तुम्हें पुनः भस्म कर देगा। यदि तुम्हें अपने

रूप का घमंड है तो मेरे पति तुमसे भी अधिक रूपवान हैं। और मेरे चरणों की धूल ले जाकर अपनी पत्नी रति पर डाल दो।

विशेष : इस पद में उर्मिला के सतीत्व को सशक्त रूप में कवि ने चित्रित किया है। यहाँ फूल को कामदेव के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है।

बोध प्रश्न

कामदेव के बाणों से भी अधिक शक्तिशाली उर्मिला के पास क्या है?

8. पद्यांश : छोड़, छोड़, फूल मत तोड़....................संग चढ़ने के लिए जाये हैं।

कठिन शब्दार्थ : लतिका = बेल, विनोद = हंसी – मजाक, लाल = पुत्र , माणिक्य, जाये = पैदा किये

सन्दर्भ : इस पद्यांश में कवि उर्मिला की मानसिक उद्विग्नता का चित्रण करते हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला राजोद्यान में अपने प्रिय की बातें करती हुई बैठी थी कि तभी पूजा के लिए पुष्प तोड़ने के लिए दूसरी सखी आती हैं, जिसे वे तोड़ने से मना करती हैं।

व्याख्या : उर्मिला कहती हैं हे सखी! इन फूलों को मत तोड़ो। देखो तो तुम्हारा हाथ लगते ही कैसे ये कुम्हला गए हैं। इसकी माता लता का ह्रदय रो रहा है। फूल को तोड़ने पर जो द्रव्य पदार्थ निकल रहा है ये उन फूलों की माँ के अश्रु हैं। अचानक उर्मिला के विचार बदल जाते हैं। वे कहती हैं नहीं-नहीं, तुम इन सारे खिले हुए पुष्पों को तोड़ लो, इन पुष्पों के रूप, गुण तथा सुगंध को ऐसे व्यर्थ मत करो। इनकी माँ ने इन्हें यूं ही मुरझाने, झड़ने के लिए जन्म नहीं दिए हैं। बल्कि इन्हें तो गौरव के साथ सिर पर चढ़ने के लिए जन्म दिया है।

विशेष : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने उर्मिला के मन की उद्विग्नता का चित्रण किया है। इसमें लता का मानवीकरण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला अपनी सखी को फूल तोड़ने के लिए क्यों कहती हैं ?

9. पद्यांश : अब जो प्रियतम को पाऊँ .... यह घट कह तो हाहा खाऊँ ।

कठिन शब्दार्थ : रज = धूलि, श्रांत = थका हुआ, सुरभि = सुगंध, रोदन = रोना, अनल = आग, घट = घड़ा, ह्रदय, वाष्प = भाप, हाहा खाना = विनती करना

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला के मन के भाव का प्रकटीकरण हुआ है।

प्रसंग : उर्मिला के मन में अपने प्रियतम से मिलने की तीव्र इच्छा है। वे प्रिय के चरण रज लगाने के बाद मृत्यु के मुख में भी जाने से पीछे नहीं हटना चाहती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं, हे सखी! मेरा मन कह रहा हैं कि यदि मेरे स्वामी के दर्शन अभी हो जाय तो उनके चरणों की धूलि लगाकर मैं स्वयं समय बन जाऊं। उनकी प्राप्ति के बाद तो स्वयं को मिटाने में भी देरी न करूं। वे अपनी सखी से कहती हैं कि वे अपने जीवन की ऊषा को लेकर आई थीं अब संध्या के साथ जीवन से विदा नहीं लेना चाहती हैं। वे कहती हैं जब मेरे स्वामी हवा की धीमी गति से आयेंगे तो मैं उनमें सुगंध सी रम जाना चाहती हूँ। रोते-रोते बहुत समय हो गया अब मेरा मन गाने को कह रहा है। मेरी ऐसी विषम स्थिति में कहीं असंतुलित होकर मेरा हृदय फट न जाय। आँखों में जल और ह्रदय में विरह की अग्नि दोनों जैसे मेरी नियति बन गए हैं।

विशेष : इस पद्यांश में उर्मिला के विलक्षण प्रेम को लाक्षणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला का मन क्या करने को कहता है?

10. पद्यांश: विचारती हूँ सखि.................................... हम अश्रु पी रहे!

कठिन शब्दार्थ : अरण्य = वन, निहारने = देखने, उध्दारने = उपकार करने

सन्दर्भ :प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने उर्मिला के विरह भाव को सुंदर अभिव्यक्ति दी है।

प्रसंग : उर्मिला अपनी सखी से अपने प्रिय के छिप कर देखने की बात करती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं कि हे सखी! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कभी-कभी मेरे प्रिय वन से आकर मेरी हालत छिप-छिप कर देखते हैं और कभी-कभी चांदनी रात में मुझे भी दीख जाते हैं। मुझे लगता है कि मेरे स्वामी को मेरी हालत पर दया आती होगी, इसलिए मेरा उध्दार करने के लिए, मुझे तारने के लिए आते होंगे या फिर ये देखने आते हैं कि मैं किस प्रकार जी रही हूँ? तो वे देख लें कि मैं उनके बिना कैसे जी रही हूँ। मैं तो हमेशा आंसुओं को पीते हुए जी रही हूँ।

विशेष : इस पद्यांश में कवि ने उर्मिला के मानिनी स्वरूप को चित्रित किया है। विरह विगलित उर्मिला को अपने प्रियतम के आस-पास होने की अनुभूति होती है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला हर समय क्या पीते हुए जी रही थी?

8.3.4. समीक्षात्मक अध्ययन

मैथिलीशरण गुप्त अपने देशकाल, संस्कृति, साहित्य के सच्चे प्रतिनिधि कवि हैं, इसी कारण इन्हें महात्मा गाँधी ने **राष्ट्रकवि** की उपाधि से विभूषित किया था। वे सदैव प्राचीन मान्यताओं, रीतियों, विचारों एवं पात्रों को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते हुए युगीन समस्याओं के समाधान हेतु प्रयत्नरत रहते थे। एक पूर्व प्रचलित कथा को आधार बनाकर नितांत नवीन धरातल पर प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत करना सहज कार्य नहीं है। इतिहास तथा पुराणों

के भूले-बिसरे तथा उपेक्षित पात्रों को लेकर उन्हें साहित्य समाज में प्रतिष्ठा दिलाना अत्यंत दुष्कर कार्य होता है, जिसे कवि ने बड़ी सफलतापूर्वक किया है। 'साकेत' इसका जीवंत उदाहरण है। इस प्रबंध काव्य के आरंभिक आठ सर्गों में रामायण की कथा को संक्षेप में वर्णित किया गया है। नवम सर्ग में कवि ने कैकेयी और उर्मिला जैसी उपेक्षित पात्रों के मनःस्थिति को चित्रित करने में कोई कमी नहीं रखी है। विशुध्द खड़ीबोली में बिम्ब, प्रतीक, मिथक, छंद, अलंकर, मुहावरे, लोकोक्ति तथा रस से आपूरित 'साकेत' आधुनिक युग का सुंदरतम महाकाव्य सिध्द होता है। प्रकृति को एक प्रमुख उपादान बनाकर कवि ने प्रकृति का सुन्दरतम मानवीकरण किया है। उर्मिला का चौदह वर्षीय विरही जीवन 'साकेत' के नवम सर्ग का संवेदनात्मक अंश है। 'साकेत' की सबसे अधिक निराश्रित प्राणी उर्मिला ही होती है। उर्मिला की दयनीय दशा को कवि ने मार्मिक अभिव्यक्ति दी है।

8.4 पाठ सार

'साकेत' के नवम सर्ग में उर्मिला के विरह वर्णन की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। 'साकेत' महाकाव्य को कवि ने **बारह सर्गों** में रचा है। आरंभिक आठ सर्गों में रामायण की कथा चित्रित है। इसका नवम सर्ग उर्मिला के आंसुओं से भीगा हुआ है, जिसे पढ़कर पाठक भी द्रवित हो उठते हैं। दस से बारह तक के सर्गों में लक्ष्मण तथा उर्मिला के मिलन का प्रसंग है। नवम सर्ग में छः ऋतुओं का वर्णन कवि ने उर्मिला के विरह की तीव्रता के साथ किया है। उर्मिला के त्याग को कवि राजा जनक के त्याग से भी बड़ा बताते हैं। उर्मिला के विरह वर्णन में प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण हुआ है। परंपरा को नयी दृष्टि से वर्णित करने की कला ही कवि को राष्ट्रकवि की गरिमा प्रदान करता है। उर्मिला अपने सतीत्व के बल से कामदेव को भी शिव की भांति भस्म करने की बात कहती हैं। शरद, शीत, शिशिर, हेमंत, ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु उनके विरह के समक्ष याचक रूप में चित्रित हुए हैं। इस प्रकार 'साकेत' का नवम सर्ग उर्मिला के उदात्त त्याग की अमर कथा बन कर सामने आता है।

8.5 पाठ की उपलब्धियां

इस पाठ के अध्ययन की निम्नलिखित उपलब्धियां हैं -

1. मैथिलीशरण गुप्त की महाकाव्यात्मक दृष्टि की नवीनता का परिचय मिला।
2. उर्मिला के विरह की मार्मिकता में उनके औदात्त्य चरित्र की जानकारी प्राप्त होती है।
3. प्रकृति के उद्दीपक स्वरूप के नवीन प्रयोग का पता चला।
4. लक्ष्मण तथा उर्मिला के मधुरतम दाम्पत्य प्रेम का आनंदमय चित्रण किया गया है।
5. आधुनिक हिंदी साहित्य के नए महाकाव्यात्मक स्वरूप से परिचित हुए।

8.6 शब्द सम्पदा

1. अवदान = योगदान

2. उत्कंठित = अधीर

3. उद्दीपन = उत्तेजित करना

4. उद्विग्नता = आकुलता

5. उपादान = साधन

6. उपेक्षित = उदासीनता

7. औदात्य = महान

8. दुष्कर = मुश्किल

9. द्रवित = पिघलना

10. परिमार्जित = स्वच्छ ढंग से

11. रम्य = सुंदर

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए

1. 'साकेत' महाकाव्य का परिचय दीजिए।
2. 'साकेत' के नवम सर्ग का उल्लेख कीजिए।
3. उर्मिला के विरह की मार्मिकता का चित्रण कीजिए।
4. प्रकृति- चित्रण में मैथिलीशरण गुप्त की नवीन दृष्टि का उल्लेख कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए

1. उर्मिला के त्याग को कवि ने अधिक ऊँचा क्यों कहा है?
2. वेदना से उर्मिला क्या कहती हैं?
3. शिशिर ऋतु से उर्मिला क्या कहती हैं?

4. कवि ने उर्मिला के सतीत्व को किस प्रकार चित्रित किया है?

5. उर्मिला की उद्विग्नता को कवि द्वारा कैसे निरुपित किया गया है?

खंड (स)

I सही विकल्प चुनिए –

1. 'साकेत' का प्रथम प्रकाशन किस सन् में हुआ?

(अ) सन् 1930 में (आ) सन् 1931 में (इ) सन् 1935 में

2. मैथिलीशरण गुप्त को मंगला प्रसाद पारितोषिक पुरस्कार किस रचना पर दिया गया?

(अ) साकेत (आ) नहुष (इ) भारत भारती

3. 'साकेत' में कुल कितने सर्ग हैं?

(अ) 11 सर्ग (आ) 14 सर्ग (इ) 12 सर्ग

4. उर्मिला को फूल कौन मारता है?

(अ) सखी (आ) कामदेव (इ) रति

5. वेदना का पिता कवि ने किसे कहा है?

(अ) अभाव (आ) अदृष्टि (इ) अनासक्ति

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. कवि ने फूल की माता......................को कहा है।

2. उर्मिला को लक्ष्मण की आँखें ....पक्षी के समान प्रतीत होती हैं।

3. कामदेव का मित्र ....ऋतु है।

4. उर्मिला वेदना को ....के मिलने पर ही छोड़ने की बात कहती हैं।

5. तालाब का कमल ....के मुस्कराने से खिलता है।

III सुमेल कीजिए

1) कवि दिवस	अ) 1954 में
2) पद्मभूषण	आ) 3 अगस्त को
3) उर्मिला का विरह-वर्णन	इ) अष्टम सर्ग
	ई) नवम सर्ग

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. गुप्त मैथिलीशरण, साकेत

2. इला रानी सिंह (संकलन) , मैथिलाशरण गुप्त : एक पुनर्मूल्यांकन

3. गुप्ता डॉ आशा रानी, मैथिलीशरण गुप्त का काव्य : सांस्कृतिक अध्ययन

4. मीतल डॉ द्वारका प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य

इकाई 9 : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय
9.3.1 प्रसाद का जन्म तथा परिवार
9.3.2 जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व
9.3.3 जयशंकर प्रसाद का कृतित्व
9.3.4 जयशंकर प्रसद का जीवन दर्शन
9.3.5 जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य चेतना
9.3.6 प्रसाद की भाषा एवं शैली
9.4 पाठ का सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप एम.ए. हिंदी के प्रथम सत्र में अध्ययन कर रहे हैं। इस सत्र में पेपर-1 के अंतर्गत आप आधुनिक हिंदी काव्य (1936) का अध्ययन करेंगे। वैसे तो आप जानते ही होंगे कि हिंदी साहित्य के इतिहास में 19 वीं शताब्दी को आधुनिक काल माना जाता है, जो कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। आधुनिक काल का काल विभाजन भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, अकविता आदि नामों से किया गया है, जिनका अध्ययन आप बी.ए. में भी किए होंगे। प्रस्तुत पाठ्यक्रम में 1936 तक के रचनाओं को केंद्र में रखा गया है। 1918 से 1936 के बीच के कालक्रम को छायावाद कहा जाता है। इस इकाई में आप छायावाद के चार महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक, श्रेष्ठ कवि, दार्शनिक, चिंतक जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व-कृतित्व के बारे में अध्ययन करेंगे। प्रसाद का 48 वर्ष का संघर्षपूर्ण जीवन रहा, किंतु साहित्यिक क्षेत्र में उनकी जो उपलब्धि रही वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। भारतीय वाङ्मय के गहन अध्येता, संस्कृत के प्रकांड विद्वान, दार्शनिक तथा भारतीय संस्कृति पर अगाध आस्था रखने वाले प्रसाद हिंदी साहित्य जगत के अमूल्य निधि हैं।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप

- छायावाद के प्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद के जन्म, वंश, परिवार संबंधी विवरण प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रसाद के शिक्षा एवं वैवाहिक जीवन की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के कृतित्व के बारे में जान पाएंगे।
- जयशंकर प्रसाद के काव्य में सौंदर्य बोध, जीवन दर्शन तथा भाषा शैली का परिचय प्राप्त करेंगे।

9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

प्रिय छात्रों, इस इकाई में आप छायावाद के प्रसिद्ध कवि, कालजयी रचनाकार जयशंकर प्रसाद के जीवन,व्यक्तित्व एवं साहित्य से संबंधित परिचय प्राप्त करेंगे। इसके पूर्व पाठों में आप छायावाद की विशेषताओं के बारे में पढे होंगे। हिंदी साहित्य जगत में छायावाद का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। छायावाद के बारे में डॉ. नगेंद्र के हिंदी साहित्य का इतिहास में इस प्रकार लिखा गया है- "छायावाद शब्द ही कुछ भ्रमात्मक शब्द लगता है, अत: इस नाम को लेकर विद्वानों में काफ़ी विवादास्पद स्थिति देखने को मिलती है। यथार्थवाद, आदर्शवाद, प्रगतिवाद आदि शब्दों से उनके बुनियादी स्वरूप को हम जान सकते हैं, किंतु छायावाद शब्द से इसके स्वरूप को जानना मुश्किल है। इसे समझने के लिए छायावादी कृतियों एवं रचनाओं के काव्यगत विशेषताओं या काव्य की विशेषताओं को जानना अनिवार्य होता है।" छायावाद को समझने का तरीका क्लिष्ट होने पर भी छायावाद अपने पाठकों पर मार्मिक प्रभाव डालने में यदि सफ़ल हुआ है तो उसका पूरा श्रेय छायावाद के स्तंभ माने जानेवाले चार महान रचनाकारों को जाता है, जिनका नाम क्रमश: इस प्रकार हैं- जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत तथा सूर्यकांत त्रिपाठी निराला।

प्रस्तुत इकाई में आप जयशंकर प्रसाद के जीवन तथा साहित्यिक रचनाओं से साक्षात्कार करेंगे। प्रसाद की रचनाओं में छायावादी कविता का वैभव अपनी क्लासिक पूर्णता के साथ मुखरित हुआ है। उन्होंने हिंदी काव्य में एक तरह से छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खडीबोली के काव्य में न केवल कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई, बल्कि जीवन की सूक्ष्म एवं व्यापक आयामों के चित्रण की शक्ति भी संचित हुई जो आगे चलकर कामायनी के माध्यम से एक शक्तिकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

तो चलिए, ऐसे महान रचनाकार के जीवन से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण जानकारी आपको हम इस इकाई के अंतर्गत देना चाहेंगे। आशा है कि आप इस इकाई के पठन से लाभान्वित होंगे। तो चलिए पाठ में चलते हैं।

9.3.1 प्रसाद का जन्म तथा परिवार

डॉ. नगेंद्र के हिंदी साहित्य का इतिहास में कविवर जयशंकर प्रसाद की समय सीमा 1890-1937 दी गई है। उनका जन्म 30 जनवरी, 1890 को उत्तर प्रदेश के काशी के गोवर्धनसराय में एक संपन्न वैश्य परिवार में हुआ। इनके वंश का नाम 'सुँघनी साहु' है। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू सुरती के प्रसिद्ध व्यवसायी, बडे दयालु और दानी-स्वभाव के व्यक्ति थे। पान के मसाले में प्रयुक्त होनेवाली सुगंधियुक्त सुर्ती के निर्माण के कारण इन्हें 'सुँघनी साहु' के नाम से जाना जाने लगा। आगे चलकर इनका परिवार भी सुँघनी परिवार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनकी माता का नाम मुन्नी देवी था और पिता बाबू देवीप्रसाद थे, जो पैतृक गुणों से संपन्न व्यक्ति थे। वे कलाप्रेमी भी थे, अत: कलाकारों का बहुत आदर करते थे। काशी में इनका बडा सम्मान था और काशी की जनता काशीनरेश के बाद 'हर हर महादेव' से बाबू देवीप्रसाद का स्वागत करती थी। प्रसाद के बडे भाई का नाम शंभू रत्न था। इनके अन्य भाई-बहनों का देहांत अत्यंत अल्प आयु में हो चुकी थी, इसलिए प्रसाद को माँ-बाप का भरपूर प्रेम मिला। लेकिन जब वे 12 वर्ष के थे, तब उनके पिता का देहांत हो गया और उनके 15 वर्ष की आयु में माँ गुजर गईं। इसके दो वर्ष बाद उनके बडे भाई शंभुरत्न का भी देहांत हो गया। उनके पिताजी और बडे भाई की मृत्यु के बाद पारिवारिक संपत्ति के विभाजन को लेकर हालत बिगडने लगी और कोर्ट-कचहरी के चक्कर में लाखों रुपये खर्च हो गए। विरासत के रूप में उन्हें दुकान के नाम बहुत बडा कर्ज मिला। वे संयमी थे, इसलिए धीरे-धीरे इस दु:स्थिति से उभरते गए। ऐसे हालातों में घर में उनके सहारे के रूप में केवल उनकी विधवा भाभी रह गई थी।

बाल्यकाल

प्रसाद का बाल्यकाल बहुत ही सुख-समृद्धि में बीता। उनके पूरे परिवार को शिव उपासना आस्था थी। माता-पिता का मानना था कि शिवजी के वर से ही उन्हें पुत्र-भाग्य मिला है। अत: उन्हें बचपन में झारखंडी कहकर पुकारा जाता था। आगे चलकर जयशंकर के रूप में नामकरण संस्कार हुआ जो शिव जी का ही नाम था। प्रसाद उनके आरंभिक जीवन का एक उपनाम था जो बाद में मूलनाम से अधिक महत्वपूर्ण बन गया। प्रसाद ने अपनी माता के साथ कई तीर्थ स्थानों के दर्शन किए। उनकी माता अत्यधिक धार्मिक स्वभाव की थी। उनके धार्मिक वृत्तियों का प्रसाद के व्यक्तित्व पर गहरा असर पडा है। प्रसाद के मन में शैव भक्ति तथा शैव दर्शन के मूल बीज बोने का कार्य उनके परिवार से ही हुआ है।

प्रसाद को बचपन में माँ-बाप और बडे भाई का भरपूर स्नेह मिला किंतु उनके जीवन में सुख के ये पल बहुत ही सीमित समय के लिए ही थे, शायद। माता-पिता और भैया के देहांत के बाद उनके जीवन में दुख के सिवा कुछ भी नहीं रह गया था। परिवार की जिम्मेदारी भी अब उन पर पडी, जिसे उन्होंने अपने जीवन पर्यंत निभाया। बचपन से ही वे किताबें पढ़ने के शौकीन थे। अत: जीवन के कष्टतम क्षण में भी उन्होंने पढ़ने की आदत न छोडी, शायद यही कारण था कि आगे चलकर वे हिंदी साहित्य के आकाश में सदा के लिए चमकते सितारे बन गए।

शिक्षा

प्रसाद का जन्म संपन्न परिवार में होने के बावजूद हालात ऐसे बदले कि उन्हें अपनी नियमित स्कूली पढाई को बीच में ही रोकना पडा। दस से बारह वर्ष की अवस्था में इन्होंने काशी के क्वींस कॉलेज में अध्ययन अवश्य किया किंतु माँ-बाप और बडे भाई के देहांत के बाद उन्हें स्कूल छोडना पडा। लेकिन साहित्य और कला के प्रति उन्हें अपार रुचि थी। अत: अपने नौ वर्ष की उम्र में उन्होंने 'कलाधर' के नाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखकर 'रसमय सिद्ध' को दिखाया था, जो उनके प्रारंभिक शिक्षक थे। उनका वास्तविक नाम श्री मोहिनीलाल गुप्त था और उपनाम रसमय सिद्ध था। वे एक शिक्षक के रूप में बहुत प्रसिद्ध थे। चेतगंज के प्राचीन दलहट्टा मोहल्ले में उनकी एक छोटी सी पाठशाला थी। उनसे प्रसाद ने हिंदी और संस्कृत का ज्ञान प्राप्त की । प्रसाद कुशाग्र बुद्धि के थे। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने कवि प्रसाद में लिखा है कि "९ वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने पूरी लघु-कौमुदी तथा अमर कोश को कंठस्त कर लिया था।

प्रसाद के निकट संपर्क में रहने वाले तीन सुधी व्यक्तियों के द्वारा प्रसाद को संस्कृत का गहन ज्ञान देने वाले तीन शिक्षकों का नाम उल्लिखित हुआ है। डॉ. राजेंद्रनारायण शर्मा के अनुसार "चेतगंज के तेलियाने की पतली गली में इटावा के एक संस्कृत के विद्वान गोपाल बाबा रहते थे, प्रसाद को संस्कृत पढाने के लिए उन्हें ही चुना गया"। विनोदशंकर व्यास के अनुसार काशी के प्रसिद्ध विद्वान श्री दीनबंधु ब्रह्मचारी उन्हें संस्कृत और उपनिषद पढाते थे। राय कृष्णदास के अनुसार रसमय सिद्ध से शिक्षा पाने के बाद "प्रसाद जी ने एक विद्वान हरिहर महाराज से संस्कृत पढी जो लहुराबीर मुहल्ले के आस-पास रहते थे। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय से भी वे वैदिक संस्कृत के निष्णात हुए। स्वाध्याय द्वारा आपने भारतीय तथा युरोपिय दर्शन, साहित्य शास्त्र, सौंदर्य शास्त्र, ज्योतिष, प्राचीन भारतीय इतिहास, तंत्र साहित्य आदि में ज्ञान प्राप्त किया था।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के संस्कृत अध्यापक महामहोपाध्याय पं. देवीप्रसाद शुक्ल कवि-चक्रवर्ती को प्रसाद का काव्यगुरु माना जाता है। इस प्रकार के उल्लेखों से यह ज्ञात होता है कि प्रसाद को संस्कृत से अपार प्रेम था और संस्कृत साहित्य के वे मर्मज्ञ बने, जिसकी झलक उनकी रचनाओं में मिलती है। दैनिक जीवन के वार्तालाप में भी समय-समय पर संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, हिंदी आदि के समुचित उद्धरण देते थे। इसके अतिरिक्त बाग-बगीचे की देखरेख, भोजन बनाना एवं शतरंज के वे शौकीन थे। नियमित रूप से व्यायाम, सात्विक खान-पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। नियमित रूप से गीता का पाठ करते थे। उनका विचार था कि गीता के पाठ करने के साथ-साथ उसके आशय को जीवन में धारण करना आवश्यक है।

वैवाहिक जीवन

प्रसाद जी को तीन बार विवाह करना पडा। माता-पिता और बडे भाई की अकाल मृत्यु के बाद भाभी के निर्देश पर वे विवाह के लिए तैयार हुए। 1908 में विंध्यावासिनी देवी के साथ उनका विवाह हुआ। उनकी पत्नी को क्षय रोग था, जिसके कारण 1916 में उनका निधन हो

गया। क्षय रोग के कीटाणु उनके घर में शायद प्रवेश कर गए थे। सन 1917 में प्रसाद ने सरस्वती देवी से दूसरा विवाह किया। लेकिन वह भी क्षय रोग से पीडित हो गई और 1918 में प्रसूतावस्था में माँ और शिशु दोनों का देहांत हो गया। इससे भावुक और कोमल हृदय के प्रसाद को गहरा सद्मा लगा। फ़िर से घर बसाने की उनकी बिल्कुल इच्छा नहीं थी, लेकिन भाभी और अन्य लोगों के आग्रह से बाध्य होकर उन्होंने तीसरा विवाह सन 1921 में कमला देवी से किया। सन 1922 में उन्हें पुत्र की प्राप्ति हुई, जिसका नाम रत्नशंकर रखा गया। कुछ साल बाद स्वयं प्रसाद क्षय रोग के शिकार हो गए। शुश्रूषा के बाद भी वे रोग से मुक्त नहीं हो सके और 15 नवंबर 1937 को उनका देहांत हो गया। उस समय वे केवल 48 वर्ष के थे। अल्पायु में उनकी मृत्यु होने के बाद भी हिंदी साहित्य जगत में उनका अपरिमित योगदान है। एक से बढकर एक उत्कृष्ट रचनाएँ उन्होंने हिंदी साहित्य जगत को दी है।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद का जन्म स्थान कौन सा था?
- जयशंकर प्रसाद के वंश का क्या नाम था? यह नाम क्यों पडा?
- जयशंकर प्रसाद के पहली पत्नी की मृत्यु कैसे हुई?
- जयशंकर प्रसाद के पुत्र का क्या नाम था?
- प्रसाद को संस्कृत सिखानेवाले गुरुओं के नाम लिखिए।

9.4 जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व

हिंदी साहित्य में प्रसाद जी के व्यक्तित्व को युगांतरकारी माना जा सकता है । ऐतिहासिक नाटकों के प्रवर्तक तथा छायावाद को प्रतिष्ठित करने वाले कवि का श्रेय प्रसाद को ही जाता है । मूलत: कवि होने के बावजूद वे सिर्फ़ कविता तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि साहित्य के विविध प्रकारों में उन्होंने लेखनी चलायी और अपनी रचनाओं के माध्यम से वे व्यष्टि से समष्टि के बीच आज विद्यमान हुए हैं । उनकी प्रत्येक रचना में प्रसाद के व्यक्तित्व की झलक मिलती है । सामान्यत: प्रसाद के व्यक्तित्व में निम्न गुणों का वर्णन किया जा सकता है, जो इस प्रकार है -

9.3.2 जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व

जयशंकर प्रसाद असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे। उदारता, व्यवहार कुशलता और विद्वत्ता उनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी। प्राचीन के प्रति गहरी आस्था के बावजूद उनमें नवीन के प्रति जिज्ञासा भी थी। प्रात: जल्दी उठना, नियमित व्यायाम करना, भ्रमण, लेखन कार्य में लीन रहना, दुकान पर बैठना, साहित्यिक चर्चाओं में भाग लेना, कारोबार संभालना इनकी दिनचर्या थी। बावजूद इसके, उन्हें अपनी युवावस्था में न जाने कितने सारे मुश्किलों का सामना करना पडा है। वे बहुत ही संयमशील तथा कर्मठ व्यक्ति थे, जिसके कारण वे बुरे हालातों से धीरे-धीरे उभरने के प्रयास करने लगे। उनके जीवन में उन्होंने जो दर्द झेला, जो दुख भोगा, वैवाहिक जीवन की कटु यादें, विषम परिस्थितियों में भी सकारात्मक सोच रखने वाले प्रसाद का

व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में पूर्ण रूप से झलकता है। उनके जीवन और काव्य में निहित समरस चेतना का मूल कारण भी यही है।

कलात्मकता

अपने पिता का उनपर विशेष प्रभाव था, जिसके कारण वे भी कला के उपासक बने। दैनिक जीवन में उन्हें जब भी मौका मिलता, वे अपनी कला का प्रदर्शन अवश्य करते थे। अपने कमरे को, अपनी आस-पास की चीजों को वे बहुत ही कलात्ककता के साथ सहेजकर रखते थे। पाक-विद्या में भी वे कुशल थे। श्री कृष्णदेव गौड़ ने लिखा है- "उनके द्वारा बनाए गए बादाम के हलुए में 'कामायनी' से कम रस नहीं मिलता था।"

शांत और गंभीर प्रकृति के व्यक्ति

प्रसाद जी शांत और गंभीर व्यक्ति थे। व्यासजी के शब्दों में - वे अत्यंत क्रोधित अवस्था में भी कभी अपने मुख से अपशब्दों का प्रयोग नहीं करते थे, उनके व्यक्तित्व की यह एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। वे किसी को दुखी नहीं देखना चाहते थे। अपरिचितों के बीच बहुत ही मितभाषा थे, लेकिन दोस्तों के बीच ठहाका मार कर हँसा करते थे।

संगीत प्रेमी

प्रसाद संगीत प्रेमी थे। वे संगीतज्ञ नहीं थे, लेकिन संगीत का आस्वादन करना जानते थे। शास्त्रीय संगीत में उन्हें रुचि थी। संगीत सुनने की इच्छा से वे कभी-कभी सिद्देश्वर बाई वेश्या के यहाँ जाया करते थे। प्रसाद के अनुसार 'मधुरता, भाव और एक तरह का दर्द यही संगीत के महत्वपूर्ण उपादान है।' प्रसाद सिर्फ़ संगीत का आनंद ही नहीं लेते थे, बल्कि गाते भी थे। ब्रह्म मुहूरत में उठकर संस्कृत के श्लोकों का वे सस्वर पठन किया करते थे। उनके नाटकों में भी संगीत के तत्व देखने को मिलते हैं। संगीत के साथ-साथ नौका विहार करना, कुश्ती लडना, शतरंज खेलना आदि में भी उनकी विशेष रुचि थी। कभी-कभी सिनेमा भी देखने जाते थे जो टालस्टाय, ड्यूमा आदि साहित्यकारों की रचनाओं पर आधारित हों। इससे साहित्य के प्रति उनकी रुचि एवं शालीनता का दर्शन होता है।

आत्मनिष्ठा एवं दृढता

प्रसाद बहुत ही आत्मविश्वासी एवं दृढ व्यक्ति थे। बचपन के कुछ ही साल तक उन्हें सुख मिला, किंतु यौवन में प्रवेश करने से पहले ही उन्हें कई प्रकार की यातनाओं से गुजरना पडा। माँ-बाप का साया हटा, बडे भाई की आत्मीयता से वंचित रहना पडा, सांत्वना देने के लिए घर में विधवा भाभी के सिवा कोई नहीं थे, रिश्तेदारों से उन्हें परेशानी के सिवा कुछ नहीं मिला, ऐसी दुष्कर परिस्थिति में भी प्रसाद विचलित नहीं हुए, बल्कि संयमित होकर सारी उलझनों से मुक्त होने की कोशिश कर रहे थे। इससे उनकी दृढता का पता चलता है। वैवाहिक जीवन में भी उन्हें दुख के सिवा कुछ नहीं मिला, तब भी वे आत्मविश्वास के साथ जीवन यापन कर रहे थे। कई बार आलोचकों द्वारा उनकी रचनाओं के लिए कटु शब्द सुनकर भी वे उत्तर या स्पष्टीकरण

देने का प्रयास नहीं करते थे। एक बार उनके मित्र व्यास जी ने उनकी पांडुलिपियों को फ़ाड डाला, तब उनका यही कथन था, कि, 'मेरी कृतियां टेक लगाने से नहीं टिकेगी, वे स्वयं अपने कल पर टिकेंगी"। उनका यह आत्मविश्वास समय की कसौटी पर खरा उतरा। उनकी कृतियों की ख्याति इस बात की साक्षी है, जिसमें उदात्त जीवनदृष्टि, मानवीय जीवन की गहरी, अनूठी अभिव्यंजना निहित है।

दृढता के प्रसंग में उनका बेटा रत्नशंकर की शिक्षा से संबंधित प्रकरण बडा प्रसिद्ध है। बनारस में उन्हें केवल एक ही स्कूल पसंद था। अपने पुत्र को उन्होंने उसी स्कूल में पढने के लिए भेजा। लेकिन कुछ समय बाद उन्हें पता चला कि उस स्कूल में भी छात्रों द्वारा मनुष्यों की पूजा कराई जाती है तो उन्होंने रत्नशंकर का स्कूल जाना बंद कर दिया। इस मूल्य पर आधुनिक शिक्षा का ग्रहण उन्हें पसंद नहीं आया, फ़िर उन्होंने रत्नशंकर को किसी भी स्कूल में पढने नहीं भेजा, घर पर ही अध्यापन की व्यवस्था की। उनकी यह मानसिकता और चारित्रिक दृढता उनके विभिन्न पात्रों के चरित्र-निर्माण की आधार-शिला रही है।

निस्वार्थ साहित्य-सेवा

प्रसाद बचपन से ही किताबें पढने के शौकीन थे। जीवन के संकट काल में भी वे निरंतर साहित्यिक अध्ययन में लगे रहे। बचपन में ही ब्रजभाषा में उन्होंने सवैये लिखे थे। जीवन पर्यंत वे निस्वार्थ रूप से साहित्यिक सेवा करते रहे। पत्र-पत्रिका में रचना प्रकाशित होने पर जो पारिश्रमिक या पुरस्कार दिये जाते, उन्होंने उसे कभी नहीं स्वीकार किए। अपनी किसी पुस्तक को पुरस्कार हेतु न भेजा और न प्रकाशक को भी भेजने की अनुमति दी। यहाँ तक कि परिवार में रुपयों की तंगी होने के बावजूद उन्होंने सहयोग राशि लेने से इनकार कर देते। उनका संपूर्ण साहित्य आदर्श चरित्र की इस बृहत्तर भूमिका पर निर्मित हुआ है। इतना ही नहीं, वे ऐसे कोई भी कार्यक्रम में जाना पसंद नहीं करते थे, जहाँ उन्हें सहजता के साथ श्रद्धा, आदर, प्रशंसा, लोकप्रियता आदि प्राप्त हो सकते थे। प्राय: इसीलिए हिंदी साहित्य में उन्हें चिरस्थायी महत्व और कीर्ति प्राप्त है। व्यापार को संभालते हुए बीच-बीच में वे कलम भी चला लेते और कामयानी की रचना होती रहती। साहित्य के प्रति जितना उन्हें लगाव था, उतना ही लगाव उन्हें अपने व्यापार के प्रति भी था।

आकर्षक तथा रहस्यमय व्यक्तित्व

कामायनी के चिंता सर्ग में मनु के रूप वर्णन को पढने पर ऐसा लगता है कि प्रसाद स्वयं अपने रूप एवं सुंदरता का वर्णन कर रहे हों। जैसे-

एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रलय प्रवाह
**
तरुण तपस्वी सा वह बैठा
साधन करता सुर-श्मशान ॥

**

अवयव की दृढ़ मांस-पेशियाँ,
ऊर्जस्वित था वीर्य अपार।
स्फ़ीत शिराएँ, स्वस्थ रक्त का
होता था जिनमें संचार।

वे सचमुच कोई तपस्वी के भांति लगते थे। महादेवी वर्मा ने उन्हें पहली बार देखा था तो उन्हें बौद्ध भिक्षु कहा था। हृष्ट-पुष्ट शरीर, नियमित व्यावम से प्राप्त दृढ शरीर, सुगठित सुडौल गोरा शरीर, नाटा कद, घुँघराले बाल, मस्तानी चाल-ढाल हर व्यक्ति को अपनी ओर जरूर आकर्षित करते। ऐसे में किसी नारी का उनकी ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है। इस बात का खुलासा उनकी रचनाओं में सीधे-सीधे नहीं हो पाती है, आँसू की विरह वेदना लौकिक है या अलौकिक इसको समझना कठिन हो जाता है। उनके परवर्ती प्रेम-काव्य में रहस्य और आध्यात्म के संस्पर्श देखने को मिलता है।

प्रसाद के व्यक्तित्व पर डॉ.द्वारिकाप्रसाद सक्सेना ने इस प्रकार कहा है- "प्रसाद छायावाद की काव्यधारा के प्रवर्तक ही नहीं हैं अपितु उसकी प्रौढता, शालीनता, गुरुता, गंभीरता के भी पोषक कवि हैं। प्रसाद की कविताओं में प्रकृति के सचेतन रूप के साथ-साथ मानव के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन की जैसी रमणिक झांकी अंकित है, वैसे किसी अन्य कवि की कविता में दृष्टिगोचर नहीं होती।" प्रिय छात्रों, अगली इकाई में कामायनी का अध्ययन करते हुए आप इस बात को अवश्य महसूस करेंगे।

बोध प्रश्न

- कौन सात्विक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे?
- प्रसाद बहुत ही संयमशील थे। क्या यह बात सही है?
- प्रसाद की रचनाओं में क्या रहस्यात्मक होती है?
- क्या प्रसाद को संगीत के प्रति रुचि थी? यदि हाँ तो वे किस प्रकार के संगीत को पसंद करते थे?
- प्रसाद ने अपने बेटे रत्नशंकर को स्कूल जाने से क्यों रोका?

9.3.3 जयशंकर प्रसाद का कृतित्व

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि विधाओं में प्रसाद ने लेखन किया है। प्रारंभिक दिनों में वे कलाधार के नाम से ब्रजभाषा में लिखते थे, जो सन 1909-1910 के बीच प्रकाश में आने लगे। चित्राधार, प्रेम-पथिक आदि उनकी ब्रजभाषा में रचित रचनाएँ हैं। लेकिन बाद के दिनों में वे खडीबोली हिंदी में लिखने लगे। खडीबोली हिंदी के प्रख्यात साहित्यकारों में उन्हें शीर्षस्थ स्थान प्राप्त है।

सन 1906 से ही प्रसाद नियमित रूप से लिख रहे थे, किंतु प्रकाशन में समस्या थी। उन दिनों पत्र-पत्रिकाएँ भी सीमित थीं और उनमें स्थान पाना मुश्किल था। अत: प्रसाद जी ने स्वयं इंदु नाम से एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। उन्होंने अपने भांजे अंबिकादास गुप्त को इसका संपादक बनाया। इसका प्रवेशांक सन 1909 को निकाला। प्रसाद तब 20 वर्ष के थे। इसमें साहित्य के बारे में उन्होंने इस प्रकार लिखा था- 'साहित्य का कोई लक्ष्य विशेष नहीं होता और उसके लिए विधि का निबंधन नहीं है, क्योंकि साहित्य स्वतंत्र प्रकृति, सर्वतोगामी प्रतिभा के प्रकाशन का परिणाम है। वह किसी की परतंत्रता को सहन नहीं कर सकता, संसार में जो कुछ सत्य और सुंदर है, वही साहित्य का विषय है। साहित्य केवल सत्य और सौंदर्य की चर्चा करके सत्य को प्रतिष्ठित और सौंदर्य को पूर्ण रूप से विकसित करता है, आनंदमय हृदय के अनुशीलन में स्वतंत्र आलोचना में उसकी सत्ता देखी जा सकती है।'

उन दिनों इंदु पत्रिका धीरे-धीरे ख्याति प्राप्त कर रही थी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सरस्वती पत्रिका के समान ही इस पत्रिका को भी ख्याति प्राप्त हो रही थी। 1906 शुरु हुई यह पत्रिका बीच-बीच में कई बार रुक-रुककर 1927 तक चल्ती रही। इंदु पत्रिका के बंद होने के बाद प्रसाद जी की प्रेरणा से हंस और जागरण पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इन सभी पत्रिकाओं की ख्याति के साथ-साथ प्रसाद के साहित्यिक व्यक्तित्व भी विकसित हो रहा था।

प्रसाद ने अपने-आप को सिर्फ़ काव्य तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि विधाओं में भी उन्होंने लेखन कार्य किया।

प्रसाद की प्रमुख रचनाओं का संक्षिप्त परिचय

प्रसाद का काव्य-साहित्य

चित्राधार (1909) : यह प्रसाद की ब्रजभाषा में रचित काव्य-संकलन है। इसकी अधिकांश रचनाएँ गीति तत्व पर आधारित हैं। इस रचना में कवि ने प्रकृति की रमणीयता का मनोरम वर्णन किया है। इसमें प्राचीन परंपरा का पालन किया गया है। आगे चलकर इन्हीं के अंदर विद्यमान सूक्ष्म बीज झरना एवं अन्य काव्य-संग्रहों में अंकुरित होकर कामायनी जैसे गौरवशाली महाकाव्य का रूप धारण करता है। कवि की जिज्ञासा भी इस कृति में मुकरित हुई है।

झरना : प्रसाद की सुप्रसिद्ध संग्रह झरना का प्रकाशन सन 1918 में हुआ। इसमें गीतिपरक रचनाएँ संकलित हैं। पहले इसमें केवल 24 कविताएँ संकलित थीं, इसका दूसरा संस्करण सन 1927 में प्रकाशित हुआ, जिसमें आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 33 रचनाएँ जोडी गईं थीं। झरना एक दृष्टि से प्रेम के विविध अनुभवों का जीवंत वर्णन है। इसके साथ ही इसमें निहित लोकमंगल की भावना इस संकलन को श्रेष्ठ बनाता है।

आँसू : आँसू जयशंकर प्रसाद की मुक्तक शैली में रचित विरह काव्य है। इसका रचनाकाल लगभग 1923-24 ई. की है तथा प्रकाशन 1925 ई. में साहित्य-सदन, चिरगाँव, झांसी से हुआ था। इसके प्रथम संस्करण में केवल 252 पंक्तियाँ थीं, किंतु जब इसका द्वितीय संशोधित संस्करण श्रावणी पूर्णिमा सन 1933 में भारती भण्डार, प्रयाग से प्रकाशित हुआ, जिसमें पूर्व रचित छंदों

के क्रम कुछ बदल दिये गये और कवि ने कुछ अन्य छंद रचकर इसमें जोड दिये, इससे आँसू में कुल 680 पंक्तियाँ हो गईं थीं। आजकल यही संस्करण प्रचलित है। इस कविता का मूल भाव करुणा और प्रेम है। करुणा और प्रेम दो ऐसे भाव हैं जिनसे मानवता पनपती है। सहृदयता का प्रतीक है करुणा और प्रेम। कवि यह अच्छे से जानते हैं कि इस पूरे संसार को करुणा और प्रेम की आवश्यकता है, जिससे मानव संवेदनशील होता है और प्रत्येक जीव से प्रेम भाव रख सकता है। अत: प्रत्येक जीव से संवेदनशील भावना की प्रतीति प्रस्तुत कविता का मूल उत्स है। यही भाव मानव को मानव बनाए रखता है। आंसू कामायनी की पूर्व पीठिका है। आँसू में करुणा का संचार है तो कामायनी में मानवता के विकास की कहानी। आँसू के इन छंदों में प्रसाद की व्यक्तिगत जीवनानुभूति का प्रकाशन हुआ है।

लहर (1935) : लहर दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा सौंदर्य वर्णन से मिश्रित रचना है। यह महात्मा बुद्ध के जीवन पर आधारित एक दार्शनिक रचना है। इसमें संकलित रचनाएँ सौंदर्य गर्व, पराजित वीरत्व में मनोवैज्ञानिक चित्रण है। शेरसिंह का शस्त्र समर्पण, पेशाला की प्रतिध्वनि, प्रलय की छाया में कवि ने मुक्त छंद में ऐतिहासिक प्रसंगों की शक्तिशाली और मर्मिक अवतारणा की है। कल्पना की मनोरमता, भावुकता, भाषा शैली में प्रौढता लहर की विशेषता है? लहर के संबंध में सुमित्रानंदन पंत ने छायावाद : पुनर्मूल्यांकन नामक पुस्तक में लिखा है- "लहर के प्रगीतों में गांभीर्य, मार्मिक अनुभूति तथा बुद्ध की करुणा का भी प्रभाव है। प्रसाद जी का भावजगत 'झरना' की प्रेम-व्याकुलता तथा चंचल भावुकता से बाहर निकलकर इसमें उनकी व्यापक जीवनानुभूति को अधिक सबल संगठित अभिव्यक्ति दे सका है।" लहर के अंत में ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित चार कविताएँ संकलित हैं जो कि प्रसाद के जीवन-दर्शन, देशप्रेम, सामयिक स्थिति, अंतर्द्वंद्व तथा नियतिबोध की कविताएँ हैं।

कामायनी (1935) : कामायनी प्रसाद की अंतिम कृति है। इसके कथानक का आधार वह प्राचीन आख्यान है जिसके अनुसार मनु के अतिरिक्त संपूर्ण देव-जाति प्रलय का शिकार हो जाती है और मनु तथा श्रद्धा के संयोग से मानव सभ्यता का प्रवर्तन होता है। इसका कथानक संक्षिप्त होने पर भी कवि ने जीवन के अनेक पक्षों को समन्वित करते हुए मानव-जीवन के लिए एक व्यापक आदर्श व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया है। कामायनी में बुद्धिवाद के विरोध में हृदय- तत्व की प्रतिष्ठा करते हुए कवि ने शैव दर्शन के आनंदवाद को जीवन के पूर्ण उत्कर्ष का साधन माना है। अगली इकाई में आप कामायनी का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

प्रसाद का नाट्य- साहित्य

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में कथा-साथित्य के अंतर्गत प्रेमचंद को मील का पत्थर माना जता है, उसी प्रकार नाट्य- साहित्य जयशंकर प्रसाद को मील का पत्थर कहा जा सकता है। नाटक के क्षेत्र में प्रसाद ने युग-परिवर्तनकारी कार्य किया है, ऐसा कहना गलत नहीं होगा। यही कारण है कि आधुनिक हिंदी नाट्य साहित्य का काल विभाजन 'प्रसाद-पूर्व युग, 'प्रसाद युग", 'प्रसादोत्तर युग" के रूप में किया गया है।

सन 1911 से 1933 तक प्रसाद ने लगभग 13 नाटकों की रचना की है जिनमें से अधिकतर नाटक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित नाटक हैं। उनके नाटकों का रचनाक्रम इस प्रकार है- सज्जन (1910), कल्याणी-परिणय (1912), करुणालय (1913), प्रायश्चित (1914), राजश्री (1915), विशाख (1921), अजातशत्रु (1922), जनमेजय का नागयज्ञ (1926), स्कंदगुप्त (1928), एक घूँट (1929), चंद्रगुप्त (1929) और ध्रुवस्वामिनी (1933)

प्रसाद ने भारत के वैभवपूर्ण इतिहास को आधार बनाकर ही लगभग सभी नाटकों की रचनाएँ की है। भारतीय संस्कृति, भारत का स्वर्णिम अतीत, पुराण-कथा, अर्द्धमिथकीय वस्तु के भीतर से प्रसाद ने देशप्रेम की भावना को जन-जन में जाग्रत करते हुए राष्ट्रीय सुरक्षा को प्राथमिकता देते हुए दिखाई देते हैं। उनके नाटकों के अधिकांश चरित्र ऐतिहासिक होने पर भी तत्कालीन राष्ट्रीय संकट को पहचानने और सुलझाने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। बौद्ध दर्शन का प्रभाव भी उनके नाटकों में दिखाई देता है। उनके प्रसिद्ध नाटक स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि सत्ता-संघर्ष एवं राष्ट्रीय सुरक्षा की भावना से ओत-प्रोत नाटक हैं। इसके साथ ही पात्रों के चरित्र में उन्होंने मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण करते हुए उनमें परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन व विकास दिखाया है। मानव-चरित्र के सत-असत दोनों पक्षों का उद्घाटन उन्होंने अपने नाटकों में किया है। नारी की महानता, सूक्ष्मता, गंभीरता को पूरी सजीवता के साथ प्रसाद ने प्रस्तुत किया है।

प्रसाद के उपन्यास / कहानियाँ

प्रसाद ने तीन उपन्यास लिखे हैं। कंकाल, तितली और इरावती। कंकाल में नागरिक सभ्यता के यथार्थ को उद्घाटित किया गया है। इस दृष्टि से यह एक यथार्थवादी उपन्यास है। तितली ग्रामीण जीवन से संबंधित उपन्यास है जो आदर्शोन्मुख यथार्थ का प्रतीक है। इरावती ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया अधूरा उपन्यास है जो रोमांस पर आधारित है।

सन 1912 में इंदु में प्रसाद की पहली कहानी ग्राम प्रकाशित हुई। इसमें ग्रामीण यथार्थ का वह पक्ष अभिव्यक्त हुआ है जिसकी उस युग में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। महाजनी सभ्यता के अमानवीय पक्ष का वास्तविक उद्घाटन इस कहानी में किया गया है। ममता कहानी में पतनोन्मुख सामंत वंश का चित्रण है। उनके पाँच कहानी संग्रहों में कुल सत्तर कहानियाँ संकलित हैं। प्रसाद के प्रमुख कहानी संग्रह हैं- छाया (1912), प्रतिध्वनि (1926), आकाशदीप (1929), आँधी (1933), इंद्रजाल (1936)।

बोध प्रश्न

- आकाशदीप का प्रकाशन किस वर्ष हुआ?
- ध्रुवस्वामिनी किस प्रकार की रचना है?
- प्रसाद ने कितने उपन्यास लिखे? उनके नाम लिखिए।
- कामायनी का प्रकाशन वर्ष लिखिए।
- हिंदी नाट्य साहित्य का कालविभाजन किस प्रकार किया गया है?

9.3.4 जयशंकर प्रसद का जीवन दर्शन

प्रिय छात्रों, प्रसाद के जीवन परिचय के अंतर्गत आपने पढा कि प्रसाद एक दार्शनिक रचनाकार हैं, शैवभक्त हैं, जिसे उन्होंने अपने परिवार से प्राप्त की है। दर्शन एवं आध्यात्मिक चेतना के बीज उनके अंदर बचपन में ही बोए गए थे, जो आगे चलकर हिंदी साहित्याकाश में एक वटवृक्ष का रूप धारण करता है और जिसकी जडें साहित्यरूपी मिट्टी से मजबूति से लगे हुए हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य में छायावाद को प्रतिष्ठित करने में प्रसाद की यही चेतना कार्य करती है। प्रेम, प्रकृति और मानव सौंदर्य की स्वानुभूतिमयी रहस्यपरक सूक्ष्म अभिव्यंजना जिस काव्य में होती है, उसे यदि छायावाद कहा जाय तो प्रसाद की प्रत्येक रचना इन्हीं तत्वों से ओत-प्रोत है। यही कारण है कि प्रसाद को छायावाद का प्रमुख प्रवर्तक कहा जाता है। वे एक ऐसे कवि हैं जिनकी साहित्यिक यात्रा छायावाद से शुरु होकर छायावाद में समाप्त हो जाती है, लेकिन उसकी जडें इतनी मजबूति से फ़ैली हुई हैं कि आज भी वे प्रासंगिक हैं।

प्रसाद के दार्शनिक विचारों पर सर्वाधिक प्रभाव शैव दर्शन के अंतर्गत आनेवाले प्रत्यभिज्ञा दर्शन, बौद्ध दर्शन का पडा है। उनके कामायनी महाकाव्य में प्रयुक्त अनेक पारिभाषिक शब्द प्रत्यज्ञा दर्शन के शब्द हैं। दर्शन के नीरस एवं शुष्क विचारों को उन्होंने भाव एवं कल्पना के योग से सरस एवं सरल बना दिया है जिससे वह बोझिल नहीं लगती है। प्रसाद के दार्शनिक विचारों में प्रमुख हैं- नियतिवाद, समरसतावाद, आनंदवाद, संसार की सत्यता का प्रतिपादन, प्रवृत्ति मार्गी जीवन दर्शन, अमेदवाद और सर्वात्यवाद। प्रसाद के लगभग सभी रचनाओं में उपरोक्त दर्शन के प्रभाव को देखा जा सकता है। नियतिवादी विचारधारा का विकास शैवागमों के आधार पर हुआ है, जिसमें नियति को संपूर्ण संसार के कार्य व्यापार को संचालन करने वाली शक्ति बताया गया है। पसाद ने नियति को उसी रूप में स्वीकार किया है। कामायनी का मनु, अजातशत्रु का जीवक, स्कंदगुप्त की देवसेना, आकाशदीप की चंपा... सभी पात्रों से जुडे संवादों में नियतिवाद के तत्व मिलते हैं। नियतिवाद का अर्थ भाग्यवाद नहीं है। यह मानव जीवन को आगे बढाते हुए उसके कर्मचक्र का प्रवर्तन करता है। कामायनी के रहस्य सर्ग एमं श्रद्धा कर्मलोक का परिचय देते हुए नियतिवाद का संचालन करती है-

नियति चलाती कर्म चक्र यह तृष्णा जनित ममत्व वासना,
पाणि-पदमय पंच-भूत की यहाँ हो रही है उपासना।

बौद्ध दर्शन में जीवात्मा का अंतिम लक्ष्य महाकरुणा को प्राप्त करना है। बौद्ध दर्शन के अनुसार बुद्ध वही बन सकता है जिसके अंदर करुणा का भाव संचालित हो, यह करुणा केवल करुणा भाव न होकर महाकरुणा भाव है। प्रसाद की रचनाओं में करुणा भाव सर्वत्र व्याप्त है। उन्होंने ब्रह्म के अस्तित्व पर सदा विश्वास किया है, और उनके अनुसार ब्रह्म का वास स्थान हृदय है। वे ईश्वर को सर्वव्यापि मानते हैं। इसके अतिरिक्त मानवातावाद, रहस्यवाद, क्षणिकवाद आदि प्रसाद के दर्शन की विशेषताएँ हैं।

बोध प्रश्न

- प्रत्यभिज्ञा दर्शन किस दर्शन के अंतर्गत आता है?
- बौद्ध दर्शन के अनुसार बुद्ध बनने के लिए क्या चाहिए ?
- नियति से क्या तात्पर्य है?

9.3.5 जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य चेतना

प्रसाद की सभी रचनाओं में सौंदर्य के विविध रूपों में देखा जा सकता है। नारी सौंदर्य, प्रकृति सौंदर्य, भाव सौंदर्य प्रसाद के सौंदर्य पक्ष की विशेषता है। सौंदर्य को प्रसाद परमात्मा का वरदान मानते हैं।

उज्जवल वरदान चेतना का
सौंदर्य जिसे सब कहते हैं।
जिसमें अनंत अभिलाषा के,
सपने सब जगते रहते हैं॥

प्रसाद सौंदर्य को उदात्त एवं पवित्र भावना मानते हैं, जिसमें वासना का लेश भी नहीं है। आँसू में नायिका के पावन तन की शोभा निरूपित करते हुए कहते हैं :

चंचला स्नान कर आवे,
चंद्रिका पर्व में जैसी।
उस पावन तन की शोभा,
आलोक मधुर थी ऐसी॥

कामायनी एमं प्रसाद जी ने श्रद्धा और इडा के सौंदर्य चित्र अपनी तूलिका से अंकित किए हैं। श्रद्धा के सौंदर्य क मांसल एवं स्थूल चित्रण न करके सूक्ष्म एवं वायवी चित्रण किया है। उसके शरीर का निर्माण फ़ूलों की सुगंध, मकरंद, एवं पराग कणों से हुआ है।

कुसुम कानन अंचल में मंद,
पवन प्रेरित सौरभ साकार।
रचित परमाणु पराग शरीर,
खडा हो ले मधु का आधार॥

प्रसाद ने प्रेम की भांति सौंदर्य को विस्तृत दायरे में देखने का प्रयास किया है। सौंदर्य में निहित मांसल अभिव्यक्ति को आत्मा तक पहुँचाने का काम किया है। बाह्य सौंदर्य एवं आंतरिक सौंदर्य दोनों की अभिव्यक्ति प्रसाद की रचनाओं में हुई है। प्रसाद की रचनाओं में सौंदर्य के तीन स्वरूप दृष्टिगत होते हैं- मानवीय सौंदर्य, प्राकृतिक सौंदर्य और भावगत सौंदर्य। मानवीय सौंदर्य के अंतर्गत कवि ने स्त्री-पुरुष के बाह्य सौंदर्य का वर्णन किया है। पुरुष वर्णन की अपेक्षा स्त्री रूप वर्णन में वे अधिक सफ़ल हुए हैं। प्रकृति-चित्रण छायावादी काव्य की निजी विशेषता है तो प्रसाद का साहित्य उस निजी विशेषता की विशेषता है। प्रकृति के प्रति उनके मन में सदा यह

जिज्ञासा रही है कि इस प्रकृति को इतना सौंदर्य मिला कहाँ से और दूसरी भावना है उस पर मुग्ध होने की।' रति उनका हृदय पक्ष है तो जिज्ञासा उनका मस्तिष्क पक्ष। प्रकृति की परिवर्तनशीलता को देखकर कवि के मन में अपने आप ही जिज्ञासा एवं कौतूहल जाग उठता है। उन्होंने प्रकृति पर चेतनता को आरोपित करते हुए उसे मानव चरित्र से संबंधित किया है, जिसमें कल्पना की गहरी पैठ है, विशिष्ट भाव लोक है और मानव हृदय को भावविभोर कर देने वाली सौंदर्य का विधान है। प्रकृति को अपना उपादान बनाकर मानव और प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित करना उनकी विशेषता है। प्रसाद ने प्रकृति के सौंदर्य को रहस्यात्मक रूप देते हुए उसे चरम पर पहुँचाया है।

प्रसाद की रचनाओं में भावगत सौंदर्य का अमूर्त रूप प्रस्तुत हुआ है। कामायनी की चिंता, वासना, लज्जा आदि सर्गों में अमूर्त भाव प्रधान रूप से अभिव्यक्त हुआ है। आँसू में उनका भावात्मक सौंदर्य सौम्य एवं निश्चल रूप में अभिव्यक्त हुआ है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रसाद के सौंदर्य चित्रण में कमनीयता, मादकता, मधुरता, पावनता एवं उदात्तता है।

बोध प्रश्न

- रति उनका हृदय पक्ष है तो मस्तिष्क पक्ष क्या है?
- प्रसाद की रचनाओं में कितने प्रकार के स्वरूप दृष्टिगोचर होते हैं।
- सौंदर्य को प्रसाद किसका वरदान मानते हैं?

9.3.6 प्रसाद की भाषा एवं शैली

प्रसाद ने प्रारंभ में ब्रजभाषा में रचनाएँ की फ़िर धीरे-धीरे खडीबोली में लिखने लगे। जिस प्रकार उनके साहित्य लेखन में विविधता है, उसी प्रकार उनकी भाषा ने भी कई रूप धारण किया है। प्रसाद की भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज, सभी प्रकार के शब्दों का चयन किया गया है। कहीं-कहीं समस्त पदों जैसे भूत-हित-रत, अरुण-कपोलों आदि का प्रयोग मिलता है। लोकोक्ति और मुहावरे एवं विदेशी शब्दों बहुत कम प्रयोग मिलता है। कोमल शब्द, संगीतात्मकता, प्रवाह मयता, अदि सभी गुण प्रसाद की रचनाओं की विशेषता है। प्रसाद के पद-चयन के बारे में डॉ. नामवर सिंह का कथन उल्लेखनीय है- "प्रसाद के पदचयन का एक ओर बहुत दूर तक निराला, पंत, महादेवी के पद-चयन से साम्य है तो दूसरी ओर प्रत्यक्ष रूप से रवींद्रनाथ के पद-चयन की भी इसमें झलक है और परोक्षत: गुजराती और मराठी स्वच्छंदतावादी कवियों की पद-चयन भी।" उनकी भाषा में एक प्रांजलता है, स्वच्छता है और गति है जो उनकी भावाभिव्यक्ति के अनुसार सरल और कठिन होती चली जाती है।

छंद योजना : प्रसाद की रचनाओं में पुराने और नए छंदों का प्रयोग मिलता है। पहले जब प्रसाद ने ब्रजभाषा में रचनाएँ की तो कवित्त सवैया जैसे प्राचीन छंदों का प्रयोग किया है। उन्होंने जो छोटी अवस्था में सबसे पहले जो छंद रचा वह सवैया था। कामायनी में उन्होंने नए छंदों का प्रयोग किया है। रोला, रूपमाला, लावनी आदि कई प्रकार के छंदों का प्रसाद ने प्रयोग

किया है। मिश्रित छंदों का प्रयोग भी प्रसाद ने किया है। विषय के अनुसार छंदों का प्रयोग किया गया है। गीतिकाव्य की शैली में गेय पदों की रचना भी प्रसाद की विशेषता है।

अलंकार योजना : प्रसाद अनायास ही अलंकार का प्रयोग करते थे। अलंकार के प्रयोग से काव्य की सुंदरता बढ जाती है। अनुप्रास, श्लेष, पुनरुक्तिप्रकाश, मानवीकरण, उत्प्रेक्षा, संदेह, प्रतीप आदि का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखें-
तरुण तपस्वी- सा वह बैठा : इसमें अनुप्रास और उपमा अलंकार है ।
उसी तपस्वी से लंबे थे, देवदारु दो-चारु खडे : यहाँ पर प्रतीप अलंकार है ।
शरद इंदिरा के मंदिर की/ मानो कोई गैल रही : यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है ।

विश्व कमल की मृदुल मधुकरी/रजनी तू किस कोने से-/ आती चूम-चूम चली जाती/पडी हुई किस रोने- से : यहाँ पर रजनी का मानवीकरण अलंकार है। विश्व कमल को मधुकरी कहने में रूपक अलंकार है। चू-चूम में पुनरुक्तिप्रकाश है। इसी प्रकार और अलंकारों का प्रयोग भी प्रसाद के काव्य में सुंदरता की वृद्धि करता है। हिंदी के आलोचकों ने प्रसाद के स्वभावगत अलंकार के प्रयोग की प्रशंसा की है। कहीं-कहीं उपमान का प्रयोग बडी कलात्मकता से किया गया है। जैसे - बिखरी अलकें, ज्यों तर्कजाल' इस प्रयोग में इडा को बुद्धि का प्रतीक के रूप में लिया है। बुद्धि में तर्क अधिक होता है। इडा के बालों को तर्कजाल कहने में कलात्मकता है।

प्रतीक-योजना : प्रसाद के काव्य में प्रतीक योजना की प्रधानता है। कामायनी के पात्रों को कवि ने प्रतीक रूप में चित्रित किया है। श्रद्धा हृदय की प्रतीक है। इडा बुद्धि की प्रतीक है और मनु मन की प्रतीक है। इसी प्रकार आँसू के आरंभिक पंक्ति - इस करुणा कलित हृदय में, क्यों विकल रागिनी बजती?

यहाँ पर रागिनी दुख का प्रतीक है। इसी तरह लहर काव्य की प्रथम पंक्ति में- "उठ उठ री लघु लोल लहर", यहाँ पर लहर स्मृति के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुई है। प्रतीक योजना से काव्य में एक अनूठापन आ गया है। यह प्रसाद तथा अन्य छायावादी कवियों की विशेषता है।

बिंब योजना : चित्रात्मकता या बिंबात्मकता छायावाद की विशेषता है। प्रसाद के वर्णन को पढने से वह बिंब या चित्र आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है। जैसे-

घिर रहे थे घुँघराले बाल
अंस अवलंबित मुख के पास
नील घन-शावक से सुकुमार
सुधा भरने को विधु के पास।

यहाँ पर श्रद्धा के रूप का वर्णन है। उसके घुँघुराले बाल थे। वे कंधे तक लटक रहे थे। इस वर्णन से घुँघुराले बलों वाले श्रद्धा के मुख का चित्र हमारी आँखों के सामने आ जाता है। लहर में प्रलय की छाया नामक कविता से रानी कमला का एक बिंब प्रस्तुत है-

तातारी दासियों ने मुझको झुकाना चाहा
मेरे ही घुटनों पर

किंतु अविचल रही।
मणि मेखला में रही कठिन कृपाणी जो
चमकी वह सहसा
मेरे ही वक्ष का रुधिर पान-करने को।

इनके अतिरिक्त ध्वन्यात्मक प्रयोग तथा लाक्षणिक प्रयोग भी प्रसाद की भाषा-शैली की विशेषताएँ हैं ।

खग कुल कुल कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा ।

प्रसाद की गद्य रचनाओं में भी काव्यमय भाषा के तत्व दिखाई देते हैं। काव्यमय भाषा के कारण कई स्थानों पर चित्रात्मक रूप की अभिव्यक्ति होती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-'निशीथ के नक्षत्र गंगा के मुकुल में अपना प्रतिबिंब देख रहे थे। शांत पवन का झोंका सबको आलिंगन करता हुआ विरक्त के समान भाग रहा था, तथा जूही की प्यालियों में मकरंद-मदिरा पीकर मधुप की टोलियाँ लड़खडा रही थी और दक्षिण पवन मौलसिरि के फ़ूलों की कौडियाँ फ़ेंक रहा था। कमर से झुकी हुई अलबेली बेलियाँ नाच रही थीं। मन की हार जीत हो रही थी।" इसी प्रकार कंकाल का प्ररंभिक प्रसंग द्रष्टव्य है- 'माघ की अमावास्या की गोधूली में प्रयाग में बाँध पर प्रभात का सा जनरव और कोलाहल तथा धर्म लूटने की धूम काम हो गई है, परंतु बहुत-से घायल और कुचले हुए अर्धमृतकों की आर्तध्वनि उस पावन प्रदेश को आशीर्वाद दे रही है।'

पात्रों के मन के अंतर्द्वंद्व को प्रस्तुत करते हुए कवि काव्यभाषा के निकटतम प्रयोग कर जाते हैं। नायिका का वर्णन करते हुए लिखते हैं- 'उसका भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों अंधकार में कभी छिपते और कभी तारों के रूप में चमक उठते'। आगे देखिए- 'गाला चुपचाप सुनहली किरणों को खारी के जल में बुझती हुई देख रही थी....उस निर्जन स्थान में पवन रुक-रुक कर बह रहा था। खारी बहुत धीरे-धीरे अपने करुण प्रवाह में बहती जाती थी, पर जैसे उसका जल स्थिर हो-कहीं से आता-जाता न हो"।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कवि प्रसाद की आत्मा मूलत: काव्यात्मक है। प्रेम के उदात्त स्वरूप को सामने लाकर सौंदर्य के स्थूल से सूक्ष्म को सराहा है। नारी की कोमलता के स्थान पर उसे गौरवमयी एवं श्रद्धा स्वरूप भावाभिव्यक्ति की है। कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि कवि प्रसाद न केवल छायावाद के बल्कि पूरे हिंदी साहित्य जगत का ध्रुव तारा के समान हैं।

बोध प्रश्न

- प्रसाद की भाषा में बहुत कम प्रयोग किसका हुआ है?
- प्रसाद ने गद्य लेखन में किस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है?
- कामायनी में कवि ने इडा को किसका प्रतीक के रूप में चित्रित किया है?

9.4 पाठ का सार

प्रिय छात्रों, हमें विश्वास है कि इस पाठ के अध्ययन से आप जयशंकर प्रसाद के जीवन संबंधी विस्तृत जानकारी प्राप्त किए होंगे। प्रसाद का यौवन काल संघर्षों में बीतने पर भी वे कभी नहीं डगमगाए। उनके जीवन परिचय को पढने से निश्चित रूप से हमें भी एक ताकत मिलती है कि बिगडी परिस्थितियों का हमें डटकर सामना करना चाहिए। यहाँ तक कि वैवाहिक जीवन भी सुखमय नहीं रहा, बावजूद इसके प्रसाद सिर्फ़ अपना कर्म करने पर विश्वास रखते थे। यही कारण है कि केवल ४८ वर्ष की अल्प आयु में देहांत होने पर भी साहित्य के लिए उनकी जो देन है, वह अपरिमित है। इतने कम समय में काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध सभी विधाओं में प्रसाद ने जो लेखन कार्य किया है वह अतुलनीय है। उनकी प्रत्येक रचना अपने आप में महत्वपूर्ण है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

जयशंकर प्रसाद के जीवन परिचय के अंतर्गत उनका बचपन, वंश, परिवार की विस्तृत जानकारी आपने प्राप्त की है।

1. प्रसाद की शिक्षा संबंधी जानकारी, उनके गुरुओं का परिचय, प्रसाद के भाषा के प्रति आकर्षण एवं संस्कृत साहित्य के प्रति उनकी रुचि की जानकारी आपने प्राप्त की है।
2. वैवाहिक जीवन में उन्होंने जिन कठिनाइयों का सामना किया है, उसके बारे में आपने जाना।
3. प्रसाद के व्यक्तित्व से संबंधित कई पहलुओं को आपने जाना।
4. प्रसाद की कृतियों से साक्षात्कार हुआ।
5. प्रसाद की सौंदर्य चेतना, भावात्मकता, भाषा-शैली पर भी आपने विस्तृत जानकारी प्राप्त की है।

9.6 शब्द संपदा

1. कमनीय : सुंदर
2. क्लासिक : उच्च कोटि का प्राचीन साहित्य, उत्कृष्ट कला या कृतियाँ, प्रसिद्ध ग्रंथ जो मानव जीवन के
3. चिरस्थायी : शाश्वत, हमेशा के लिए, टिकाऊ
4. दृष्टिगोचर : दिखाई पडने वाला, जिसे आँखों से देखा जा सकता है निकट हो
5. पतनोन्मुख : पतन की ओर उन्मुख, विनाश की ओर जाना, समाप्र होना

6. पारलौकिक : जो लौकिकता से परे हो, परलोक, अलौकिक, अज्ञात

7. पितामह : दादा, पिता के पिता (ब्रह्मा और शिव को भी पितामह कहा जाता है)

8. प्रतिष्ठित : सम्मानित, जिसकी प्रतिष्ठा या इज्जत की गई हो ।

9. प्रत्यभिज्ञा दर्शन : कश्मीरी शैव दर्श की एक शाखा है। इसका शाब्दिक अर्थ है-पहले से देखे हुए को पहचानना, या पहले से देखी हुई वस्तु की तरह की कोई दूसरी वस्तु को देखकर उसका ज्ञान प्राप्त करना।

10. प्रसूतावस्था : प्रसव काल

11. भ्रमात्मक : संदिग्ध, भ्रमयुक्त, भ्रम उत्पन्न करना

12. मिथकीय : लोककाल्पनिक कथानक, लोकरूढी, पौराणिक कथा मान्यता, आख्यान

13. संस्पर्श : संसर्ग, संपर्क, संयोग, प्रभावित होना

14. समरसता : सामंजस्य, सदा एक समान रहने की स्थिति, संतुलन

15. सर्वतोगामी : सभी दिशाओं में जानेवाला

16. सर्वतोगामी प्रतिभा : विभिन्न विषयों का ज्ञान या जानकारी होना

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए

1. जयशंकर प्रसाद के बाल्यकाल संबंधी जीवन का वर्णन कीजिए।

2. प्रसाद के व्यक्तित्व की विशेषताओं को अपने शब्दों में लिखिए।

3. प्रसाद की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

4. प्रसाद के नाट्य साहित्य एवं उपन्यास लेखन पर प्रकाश डालिए।

5. प्रसाद की प्रेम तथा सौंदर्य चेतना पर सारगर्भित लेख लिखिए।

6. प्रसाद की भाषा शैली पर प्रकश डालिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए

1. प्रसाद के वैवाहिक जीवन के बारे में लिखिए।

2. प्रसाद पर माँ-बाप का कैसा प्रभाव रहा?

3. प्रसाद की पहली रचना के बारे में लिखिए।

4. प्रसाद की शिक्षा संबंधी विवरण दीजिए।

5. प्रसाद को संस्कृत सिखाने वाले तीन गुरुओं के बारे में लिखिए।

6. प्रसाद की व्यक्तित्व की क्या विशेषता रही, बताइए।

7. प्रसाद ने कितनी कहानियाँ लिखी, उनके नाम लिखिए।

8. प्रसाद के नाटकों पर प्रकाश डालिए।

9. प्रसाद की भाषिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

10. प्रसाद की अलंकार योजना एवं छंद योजना पर प्रकाश डालिए।

11. प्रसाद की प्रतीक-योजना संबंधी जानकारी दीजिए।

12. प्रसाद के जीवन परिचय को पढकर आप क्या महसूस कर रहे हैं? अपने शब्दों में लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. प्रसाद के पितामह का नाम ( )

(अ) देवीशंकर प्रसाद (आ) शिवरतन साहू (इ) दोनों

2. प्रसाद के वंश का नाम ( )

(अ) साहू सुंघनी (आ) सुँघनी साहू (इ) सुरती साहू

3. गोबर्धनसराय ( )

(अ) प्रसाद का जन्मस्थान (आ) प्रसाद का ससुराल (इ) इनमें से कोई नहीं

4. कलाधर ( )

(अ) प्रसाद के बचपन का नाम (आ) प्रसाद का काव्यनाम (इ) दोनों

5. रत्नशंकर ( )

(अ) प्रसाद का बडा भाई (आ) प्रसाद का पुत्र (इ) दोनों

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. चित्राधार प्रसाद की ----------------------भाषा में रचित रचना है।

2. प्रसाद आधुनिक हिंदी साहित्य के ....युग के साहित्यकार हैं।

3. स्कंदगुप्त नाटक का प्रकाशन वर्ष ....है।

4. प्रसाद की दूसरी पत्नी का नाम ....था।

5. झारखंडी, प्रसाद का ....का नाम था।

III सुमेल कीजिए

1. 1918-1936	(अ) साहित्य अकादमी सम्मान
2. 1890	(आ) झरना का प्रकाशन वर्ष
3. 1908	(इ) जन्म
4. 1909	(ई) कामायनी का प्रकाशन वर्ष
5. 1918	(उ) प्रसाद का प्रथम विवाह
6. 1925	(ऊ) छाया का प्रकाशन वर्ष
7. 1935	(ऋ) प्रसाद की आयु
8. 1928	(ए) इंदु का प्रकशन वर्ष
9. 1912	(ऐ) स्कंदगुप्त का प्रकाशन वर्ष
10. 48	(ओ) आँसू का प्रकाशन वर्ष

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी

2. प्रसाद : आँसू तथा अन्य कृतियाँ, डॉ. विनयमोहन शर्मा

3. प्रसाद की काव्य-प्रतिभा, डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र

4. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र

5. छायावाद पुनर्मूल्यांकन, श्री सुमित्रानंदन पंत

6. प्रसाद साहित्य की समीक्षा, कैलाश नारायण अवस्थी

इकाई 10 : कामायनी : चयनित अंश की व्याख्या

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल पाठ : कामायनी : चयनित अंश की व्याख्या

10.3.1 अध्येय कविता का संक्षिप्त कथानक

10.3.2 चिंता सर्ग : चयनित अंश की व्याख्या

10.3.3 श्रद्धा सर्ग : चयनित अंश की व्याख्या

10.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

10.3.5 कामायनी : शीर्षक की सार्थकता

10.3.6 कामायनी का महाकाव्यत्व

10.3.7 कामायनी का दार्शनिक दृष्टिकोण

10.3.8 कामायनी का आधुनिक संदर्भ

10.3.9 कामायनी का भावपक्ष एवं कलापक्ष

10.4 पाठ का सार

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

10.6 शब्द संपदा

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों ! आधुनिक हिंदी काव्य के इकाई ९ के अंतर्गत आपने छायावाद के प्रसिद्ध कवि एवं छायावाद के चार स्तंभों में एक माने जाने वाले जयशंकरप्रसाद के जीवन, व्यक्तित्व तथा साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन किया है। प्रसाद जी की साहित्यिक कृतियों का अध्ययन करते हुए आपने उनकी प्रसिद्ध काव्यकृति "कामायनी" के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त की है। आप जानते हैं कि कामायनी प्रसाद की अंतिम काव्यकृति है जिसे आधुनिक हिंदी साहित्य का महाकाव्य कहा गया है। मध्यकालीन साहित्य में जायसी की पद्मावत तथा तुलसीदास की रामचरितमानस का जो स्थान है, आधुनिक हिंदी साहित्य में कामायनी का वही स्थान है। डॉ. नगेंद्र कृत हिंदी साहित्य का इतिहास में इस कृति के बारे में इस प्रकार लिखा गया है- "इसके कथानक आधार वह प्रसिद्ध आख्यान है जिसके अनुसार मनु के अतिरिक्त संपूण देव- जाति प्रलय का शिकार हो जाती है और मनु तथा श्रद्धा के संयोग से मानव-सभ्यता का प्रवर्तन होता है । इसका कथानक बहुत संक्षिप्त है, लेकिन कवि ने इसमें जीवन के अनेक पक्षों को समन्वित करके मानव-जीवन के लिए एक व्यापक आदर्श व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया है।" मनु, श्रद्धा

और इडा जो कि प्रतीकात्मक पात्र हैं जिनके माध्यम से कवि ने मनुष्य की अनुभूतियों, कामनाओं और आकांक्षाओं की अनेकरूपता का वर्णन किया है। यह कामायनी की चेतना का मनोवैज्ञानिक पक्ष है।

आदिपुरुष मनु जिसका उल्लेख न केवल आर्य साहित्य में किया जाता है, बल्कि इतिहास वेदों से लेकर पुराणों में बिखरा हुआ है, उस मनु तथा श्रद्धा के सहयोग से मानवता के विकास की कथा कामायनी की मूल वस्तु है। प्रसाद ने कोरी कल्पना के आधार पर इस महाकाव्य का सृजन नहीं किया है, बल्कि इसके प्रत्येक पात्र ऐतिहासिक हैं। कामायनी के आमुख में प्रसाद लिखते हैं- “मन्वंतर अर्थात मानवता के नवयुग के प्रवर्तक के रूप में मनु की कथा आर्यों की अनुश्रुति में दृढ़ता से मानी गई है। इसलिए वैवस्वत मनु को ऐतिहासिक पुरुष मानना उचित है।“ इतिहास पुराणों में इसका उल्लेख होने के तर्क के साथ प्रसाद कामायनी को हिंदी साहित्य जगत में प्रस्तुत करते हैं। इस इकाई में आप कामायनी के दो प्रमुख सर्ग “चिंता” तथा “श्रद्धा” की कुछ चयनित पंक्तियों का व्याख्यात्मक अध्ययन के साथ-साथ कामायनी से संबधित समीक्षात्मक पक्ष का भी अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों, इस इकाई के अध्ययन से आप-

- कामायनी के कथानक को समझ पाएंगे।
- कामायनी के सभी सर्गों की विशेषताओं को समझ पाएंगे।
- कामायनी के चिंता तथा श्रद्धा सर्गों के चयनित अंशों की व्याख्या कर पाएंगे।
- कामायनी के महाकाव्य को समझ सकते हैं।
- कामायनी की काव्यगत विशेषताओं को समझ सकते हैं।

10.3 मूल पाठ : कामायनी : चयनित अंश की व्याख्या

‘ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व-वन की व्याली,
ज्वालामुखी स्फ़ोट के भीषण प्रथम कंप-सी मतवाली!
है अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खललेखा!
हरी-भरी-सी दौड-धूप, ओ जल-माया की चल-रेखा!
इस ग्रहकक्षा की हलचल-री तरल गरल की लघु-लहरी,
जरा अमर-जीवन की, और न कुछ सुनने वाली बहरी!
अरी व्याधि की सूत्र-धारिणी-अरी आधि, मधुमय अभिशाप!
हृदय-गगन में धूमकेतु-सी, पुण्य-सृष्टि में सुंदर पाप।
मनन करावेगी तू कितना? उस निश्चिंत जाति का जीव-
अमर मरेगा क्या? तू कितनी गहरी डाल रही है नींव।
आह! घिरेगी हृदय-लहलहे-खेतों पर करका-घन-सी,

बुद्धि, मनीषा,मति, आशा, चिंता तेरे हैं कितने नाम,
अरी पाप है तू, जा, चल जा, यहाँ नहीं कुछ तेरा काम।
विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते ! बस चुप कर दे,
चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे।"
चिंता करता हूँ मैं जितनी उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनंत में बनती जातीं रेखाएँ दुख की।
आह सर्ग के अग्रदूत ! तुम असफल हुए, विलीन हुए,
भक्षक या रक्षक जो समझो, केवल अपने मीन हुए।

10.3.1 अध्येय कविता का संक्षिप्त कथानक

प्रिय छात्रों! प्रस्तावना पढ़कर आप समझ गए होंगे कि कामायनी प्रसाद द्वारा रचित एक उत्कृष्ट रचना है जिसे आधुनिक महाकाव्य कहा जाता है। मनु, श्रद्धा और इडा की पौराणिक कथा को आधार बनाकर कवि ने मानवकुल को समरसता और आनंदवाद का संदेश दिया है। साथ ही इन पात्रों के माध्यम से मानव-मन के क्रमिक विकास का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। इस पूरी रचना का सृजन कवि ने प्रतीकात्मक शैली में किया है, जैसे कि जिन पात्रों का कवि ने चयन किया है, वे भी प्रतीकात्मक हैं। "मनु"- मनन शील, संकल्प-विकल्प युक्त, अहंकार युक्त मन का प्रतीक है। श्रद्धा-कोमल भावों से युक्त हृदय का प्रतीक है तथा इडा-बुद्धि का प्रतीक है।

कवि ने कामायनी की रचना कुल १५ सर्गों में की है, जिनके नाम क्रमश: चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इडा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य तथा आनंद। कामायनी में इन सर्गों की योजना इसी क्रम से की गई है। अर्थात इसका कथानक कौशलपूर्ण ढंग से सर्गों में बाँटकर प्रस्तुत किया गया है। आप यदि इन सर्गों के शीर्षकों को ध्यान से देखेंगे तो आप स्वयं समझ पाएँगे कि इन सर्गों का नामकरण प्रसाद जी ने मानव हृदय की विविध मनोवृत्तियों के आधार पर किया गया है। रचना के मुख्य पात्र मनु, श्रद्धा, इडा के माध्यम से उन्होंने मानव-मन की मूल-प्रवृत्तियों का उद्घाटन किया है। तो चलिए, कामायनी के पंद्रह सर्गों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लें ताकि कामायनी की व्याख्या आप सरलता से कर सकें तथा समीक्षात्मक दृष्टि से कामायनी का विश्लेषण कर सकें। कामायनी के सर्गों का संक्षिप्त विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है-

कामायनी के इस प्रथम सर्ग "चिंता" में यह दिखाया गया है कि प्रलय के कारण समस्त देवजाति का विनाश हो चुका है। इस जल-प्लावन में केवल मनु नामक देव पुरुष जीवित है जिसे आदिपुरुष कहा जाता है। उसका शरीर सुदृढ था, भुजाओं और पैरों की धमनियाँ और नसें फूली हुई दिखाई दे रही थीं, पास में दो-चार देवदारु के वृक्ष खडे थे जो कि बर्फ़ के जमने से श्वेत हो रहे थे। कुछ ही दूरी पर एक पेड के सहारे एक नाव बंधी हुई थी, जिससे उन्होंने आत्मरक्षा की थी। उस नाव के सहारे वे हिमालय की ऊँची चोटी पर पहुँच चुके थे। हिमालय के उत्तुंग शिखर बैठकर भीगे नयनों से चिंता की मुद्रा में प्रलय प्रवाह को देख रहा था। चारों ओर सिर्फ और सिर्फ

विनाश के बादल मँडरा रहे थे। प्रलय से पूर्व की उसकी देव जाति के वैभवपूर्ण जीवनशैली को वह याद कर रहा था। वे सब विलासिता में डूबे हुए थे। उन्हें अमर होने का अभिमान था। किंतु वह समझ गया था कि नियति के सामने हर किसी को झुकना पड़ता है। पहले ही छंद में मनु के मन की व्याकुलता एवं चिंता का पता चलता है।

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर / बैठ शिला की शीतल छाँह
एक पुरुष भीगे नयनों से/ देख रहा था प्रलय प्रवाह

दीर्घ प्रलय के बाद नव युग का प्रभात हुआ। प्रकृति धीरे-धीरे खिलने-मुस्कुराने लगी। प्रकृति में हुए इस बदलाव को देखकर मनु के मन में "आशा" का संचार होता है। निराशा को आशा में बदलने का वर्णन इस सर्ग में किया गया है। आशा मनुष्य का संबल है और इसी आशा के सहारे मनुष्य का जीवन-चक्र चलता है। प्रकृति में हुए बदलाव को देखकर मनु के हृदय में पुन: जीवन की आशा जागी। एक सुंदर गुफा को अपना निवास स्थान बनाया। धीरे-धीरे उनके पुराने संस्कार जाग उठे। पहले की भांति अग्निहोत्र करने लगे। जीवन को तप में लगा दिया। कर्मकांड में लग गए। इसी प्रकार दिन बीतने लगे। एक दिन चांदनी रात को उन्होंने प्रकृति का मादक दृश्य देखा तो मुग्ध हो उठे। उनके हृदय में सुप्त वासना जाग उठी। अपना एकाकी जीवन उन्हें खलने लगा।

इसी बीच एक सुंदर युवती वहाँ पर आ गई। उसने गांधार देश की नीले रंग की भेडों की खाल का वस्त्र पहना हुआ था। शरीर लंबा और छरहरा था। काले घुंघुलारे बाल, मुख पर मंद मुस्कान। उसने मनु का परिचय पूछा। मनु ने विषाद भरे स्वर में अपना परिचय दिया। सुंदर युवती ने अपना नाम "श्रद्धा" बताया, श्रद्धा याने कामपुत्री कामायनी। वह गंधर्व देश की रहने वाली थी। पर्यटन की इच्छा से वह हिमालय की सुंदरता निरखने आई थी, तभी जल-प्रलय हुआ था। तब से वह भी अकेली भटक रही थी। मनु के मन में निराशा के भाव को देखकर श्रद्धा उसे सुख-दुख की परिभाषा समझाती है। उस अनुपम सुंदरी के संपर्क में आने से मनु के मन में नई रागमयी चेतना का, नव-जीवन के सृजन का उत्साह प्रस्फुटित हुआ। श्रद्धा अपनी सेवा भावना और ममता से मनु के मन में जीवन के प्रति रागात्मक भाव एवं आस्था जगाती है। श्रद्धा का दूसरा नाम ही विश्वास है।

अकेले भटक रहे मनु को अपने पास एक सुंदर युवती पाकर मन में "काम" भाव का संचार होता है। काम मानव की नैसर्गिक प्रवृत्ति है। काम मानव के जीवन को विकास की ओर ले चलता है, लेकिन उसकी अतिशयता विनाश का कारण भी बनता है। एक दिन रात्रि जब वे प्रकृति के रमणीय दृश्य को देख रहे थे, उनके मस्तिष्क में अतीत की स्मृति कौंध जाती है। श्रद्धा का अपूर्व सौंदर्य उन्हें लालायित करता है। इसी उधेडबुन में उनकी आँख लग जाती है। तब उनके सपने में स्वयं कामदेव आकर कहते हैं- मैं काम हूँ, देवों की विलासिता का साथी। मेरी प्रिया रति जो अनादि वासना का रूप थी जो आकर्षण का काम करती थी। हम दोनों के सहयोग से सृष्टि का प्रसार होता था। हम दोनों के मेल से प्रेम कला का जन्म हुआ है। तुम यदि प्रेमकला को पाना चाहते हो तो पहले उसके पात्र बनो, कहकर वह अदृश्य हो जाता है। मनु का मन पहले

ही अकेलेपन से ऊब चुका था। अब अपने साथ श्रद्धा को पाकर उनके मन में "वासना" जाग्रत हुई। श्रद्धा का असाधारण सौंदर्य उन्हें अपनी ओर खींच रहा था। वह श्रद्धा के सामने अपने अतृप्त अधीर हृदय के उन्माद को प्रणय के रूप में अभिव्यक्त करता है। उसके प्रणय-प्रस्ताव को सुनकर श्रद्धा रोमांचित हो उठती है।

मनु के इस प्रणय निवेदन से श्रद्धा पुलकित हो उठती है और उसके स्त्री सुलभ "लज्जा" का संचार होता है। श्रद्धा ने अपने-आप को मनु को समर्पित तो कर दिया था परंतु उसके हृदय में एक हलचल मची हुई थी। वह पुरुष की तुलना में अपने आप को दुर्बल पा रही थी। तभी उसे एक छाया प्रतिमा अपनी ओर आती दिखाई देती है। श्रद्धा ने जब उससे परिचय पूछा तब वह कहती है- मैं देवी जगत की रानी रति हूँ, अपने स्वामी काम से ठगी जाकर आकर्षण शक्ति का रूप धारण कर उसी की प्रतिमा लज्जा हूँ। मैं नरी को शिष्टता की सीख देती हँ। मैं नारी के कपोलों पर लालिमा के रूप में दिखाई देती हूँ। मैं नारी के सौंदर्य की रक्षा करती हूँ। उसकी बातों को सुनकर श्रद्धा कहती है कि मैंने नारीत्व की दुर्बलता को समझ लिया है। पुरुष पर विश्वास कर मैंने अपने-आप को सौंपा था, बदले में उससे कुछ पाने का साहस नहीं होता। तब लज्जा उसे समझाती है- जिस विश्वास के साथ तुमने आत्मसमर्पण किया है, उस पर आस्था रखो और पुरुष के जीवन में अमृत-रस का संचार करो। अच्छाई-बुराई को समानता से अपनाते जाओ। लज्जा की बातों से प्रेरित होकर श्रद्धा अपने आप कि पूर्णत: मनु को समर्पित कर देती है। उनके प्रेम-मिलन का वर्णन प्रसाद ने शिष्ट भाषा में इस प्रकार किया है-

दो काठों की संधि बीच उस निभृत गुफा में अपने,
अग्नि-शिखा बुझ गई, जागने पर जैसे सुख सपने।

श्रद्धा के संपर्क और समर्पण के बाद मनु कर्म के प्रति प्रेरित होता है। कवि ने इस सर्ग में मनु के जीवन के दो प्रकार के कर्मों का उल्लेख किया है- बाह्य जीवन का सहज कर्म था- सोमप्राप्ति के लिए बलि और यज्ञ तथा आंतरिक जीवन का कर्म था नर-नारी का संबंध जो सृष्टि के विकास के लिए आवश्यक कर्म था। पहले कर्म की पूर्ति पशु की बलि चढाने और यज्ञ के रूप में दो असुर पुरोहित आकुलि और किलात के सहयोग से संपन्न होता है। इस यज्ञ से मनु के मन की पाश्विक प्रवृत्ति जाग उठती है। मनु के भावी विपथन के पूर्वाभास का यह संकेत है। मनु के मन की वासना समाप्त नहीं होती है। लेकिन श्रद्धा इस समर्पण के बाद अन्य कार्यों में लग जाती है।

पाश्विक गुणों के संचार से प्रेरित होकर मनु शिकार खेलने में मग्न हो जाते हैं। श्रद्धा के प्रति भी उनका आकर्षण कम हो जाता है। क्योंकि श्रद्धा के प्रेम में अब पहले वाली ऊष्णता नहीं थी। वह हमेशा धान चुनने में या ऊन कातने में लगी रहती थी। वह गर्भवती भी थी। नवजात शिशु के स्वागत की तैयारी में वह लग जाती है। इसे देखकर मनु के में मन में "ईर्ष्या" का संचार होता है। उनका वासनाग्रस्त मन फिर से भटकने लगता है। उन्हें लगता है कि श्रद्धा अब बच्चे के लालन-पालन में मस्त रहेगी, और मैं उपेक्षित रह जाऊँगा। यही सोचकर वह श्रद्धा को अकले छोडकर चले जाते हैं। इसका वर्णन देखिए कवि के शब्दों में-

ज्वलनशील अंतर लेकर मनु चले गए/ या शून्य प्रांत,

रुक जा, सुन ले ओ निर्मोही! वह कहती रही अधीर श्रांत।

श्रद्धा से रूठकर मनु पुन: इधर-उधर भटकते-भटकते सरस्वती नदी के किनारे बसे सारस्वत प्रदेश में आ पहुँचते हैं। वह स्थान सूना और उजडा पडा था। इस प्रदेश की शासिका “इडा” मनु की भेंट होती है। “इडा” बुद्धि का प्रतीक है। अर्थात, मनु मन का प्रतीक है तो इडा उसकी बुद्धि का प्रतीक है। इस सर्ग में मन और बुद्धि का मिलन होता है। इडा और मनु परस्पर एक-दूसरे के प्रति आकृष्ट होते हैं और इडा मनु को अपने देश का शासक बना देती है। उस उजडे प्रदेश को बसाने और व्यवस्थित करने की जिम्मेदारी वह मनु को देती है। इडा के उपदेशानुसार मनु नव-सृष्टि का निर्माण करने के लिए उद्यत होते हैं। इस सर्ग की घटनाओं और प्रसंगों के माध्यम से प्रसाद यह संदेश देना चाहते हैं कि मनु के अंदर (मन में) मानवता के विकास के लिए श्रद्धा का संसर्ग जितना आवश्यक था, उतना ही आवश्यक था इडा का संसर्ग जिसके माध्यम से वे प्रजापति बनकर प्रजा के संरक्षक बन सकते थे। लेकिन मनु का अतृप्त मन इस कार्य से भी तृप्त नहीं हो पाया, इसका मुख्य कारण उनके मन की वासना थी, जो तृप्त नहीं हो पा रही थी। अपनी इस अदम्य और अतृप्त वासना की पूर्ति के लिए एक दिन वे इडा को साधन बनाने की धृष्टता कर बैठते हैं। इडा अपने-आप को बचाने का प्रयत्न करती है। मनु के इस अभद्र व्यवहार से सारस्वत प्रदेश के निवासी क्रोधित होकर उस पर आक्रमण कर देते हैं। जिससे मनु मूर्छित हो जाते हैं।

इस सर्ग के संबंध में यह भी उल्लेखनीय है कि जब मनु श्रद्धा को छोडकर सारस्वत प्रदेश आते हैं, तब उन्हें कामदेव के शब्द सुनाई पडे- “हे मनु तुम भूल गए। निष्ठास्वरूप उस नारी को तुमने तुच्छ समझा। जीवन को अनित्य मानकर जितना हो सके उतना सुख भोगना और वासना-तृप्ति ही तुमने अपना लक्ष्य समझा। पुरुष होने के अहं के वश में तुमने नारी का महत्व स्वीकार नहीं किया, उसके देह को केवल भोग की सामग्री समझा। वस्तुत: अधिकार और अधिकारी के बीच समरसता होती है, इस सत्य की तुमने उपेक्षा की।“ अब इसका फल तुम्हें भुगतना पडेगा। कामदेव का यह संदेश केवल मनु के लिए मात्र नहीं था, बल्कि समस्त मानव जाति के लिए है । कामदेव के शाप के जरिए प्रसाद यह कहना चाहते हैं कि श्रद्धा भाव के बिना मनुष्य का कल्याण संभव नहीं है।

मनु से परित्यक्ता होने के बाद श्रद्धा पुत्र को जन्म देती है। मनु से तीव्र आघात सहने के वावजूद वह मनु को भुला नहीं पाती है। एक दिन वह “स्वप्न” में देखती है कि इडा नामक एक सुंदरी मनु का प्रेरणा-स्रोत बनकर उन्हें प्रगति के मार्ग पर ले जा रही है। मनु का एक समृद्ध नगर बसा है। मनु के हाथ में एक प्याला है जिसमें इडा मद्य डाल रही है और मनु पी रहा है। मनु का अतृप्त मन इडा से प्रणय निवेदन करता है। इडा उनके निवेदन को स्वीकार नहीं करती है। किंतु मनु बलपूर्वक उसे आलिंगन में लेने की चेष्टा करते हैं। इडा चीखती हुई वहाँ से भाग जाती है। नारी पर अत्याचार होने से अंतरिक्ष में रुद्र का क्रोधमय स्वर गूंजा, शंकर का तीसरा नेत्र खुला और उन्होंने तांडव नृत्य करना आरंभ कर दिया। प्रलय की संभावना से सब जीव भयभीत थे।

मनु के इस अभद्र व्यवहार से प्रजा भी रुष्ट हो जाती है और मनु पर प्रहार करने को उद्यत है। मनु द्वार बंद कर छिपकर बैठा है। ऐसा भयानक स्वप्न देख श्रद्धा कांप उठती है।

यद्यपि श्रद्धा ने स्वप्न देखा था, लेकिन वह सपना सच निकला। सारस्वत प्रदेश उजडा हुआ था। देववंश की निरंकुशता जब अपनी सीमा पार गई थी तब प्रलय हुआ था, उसी प्रकार मनु की निरंकुशता पुन: प्रलय का संकेत दे रही थी। सारस्वत प्रदेश का अशांत का मूल कारण यह था कि मनु इडा पर अपना वासनामय अधिकार जमाना चाहते थे। इससे राजा और प्रजा के बीच "संघर्ष" का वातावरण बना। चारों तरफ से बाणों की वर्षा हुई। मनु घायल होकर गिर पडे। मूर्छित मनु को श्रद्धा स्पर्श करती है तो उसके स्पर्श से मनु की मूर्च्छा टूट गई। सामने श्रद्धा को देखकर वे लज्जित हो जाते हैं। श्रद्धा अपने पुत्र कुमार को पिता से मिलवाती है। मनु पश्चात्ताप की आग में जलता है। मनु अपने कलुषित आचरण के कारण श्रद्धा का साक्षात्कार करने में संकोच का अनुभव करते हैं। उनका मन "निर्वेद" भाव से इतना भर जाता है कि वे पुन: श्रद्धा, कुमार और इडा को छोड़कर चले जाते हैं।

मनु के चले जाने के बाद श्रद्धा वहीं सारस्वत प्रदेश में ही कुछ दिन रह जाती है। उसे मनु की चिंता सताती है। अपने पुत्र "मानव" को इडा के पास छोड़कर वह पति की तलाश में निकल पड़ती है। मानव अर्थात श्रद्धा के पुत्र को इडा के पास छोड़ जाने के कारण को कवि सांकेतिक रूप से इस प्रकार व्यक्त करते हैं -

"यह तर्कमयी, तू श्रद्धामय
तू मननशील/ कर कर्म अभय

अर्थात, एक बच्चे को माँ से श्रद्धा भाव, पिता से मनन शक्ति तथा इडा से अनुशासन में मेधा (तर्क) शक्ति का विकास कर अपने मानव व्यक्तित्व का पूर्ण करें और निर्भय हो कर अपने कर्म पथ पर अग्रसर हो सकें।

आखिरकार श्रद्धा अपने पति को ढूँढ लेती है। पुन: एक बार श्रद्धा का दर्शन पाकर मनु का मन अपने किए पर पछताता है। अपने प्रति श्रद्धा के उदार भाव को देखकर उनके मन में श्रद्धा भाव जाग उठता है। मनु के मन में श्रद्धा का भाव जाग उठते ही उन्हें कैलाशपर्वत पर नटराज शंकर नृत्य करते हुए दिखाई देने लगते हैं। उन्हें ऐसा लगता है मानो हिमालय पर्वत भी विद्युत प्रभा से दमक उठा है।

इस अद्‌भुत प्रकाश को देख मनु श्रद्धा से कहते हैं कि उन्हें उस ओर ले चलें। श्रद्धा और मनु आनंद शिखर की दिशा में आगे बढते जा रहे हैं। शिखर की ऊँचाई पर हर तरफ़ बरफ़ जमी हुई है। वे दोनों इतनी ऊँचाई पर पहुँच गए थे कि वहाँ पर ग्रह, तारे, नक्षत्र आदि कुछ भी दिखाई नहीं दे रहे थे। ऋतुओं का वहाँ कोई ज्ञान नहीं था। भूमंडल रेखा अदृश्य हो चली थी। वहाँ पर संसार तीन दिशाओं में विभाजित प्रतीत हो रहा था और तीन प्रकाश बिंदु दिखाई दे रहे थे। ऐसे "रहस्यमय" स्थान पर पहुँच कर मनु के मन में नई चेतना का संचार होने लगता है। साथ ही उन प्रकाश बिंदुओं को देखकर उनके मन में संशय भी होता है। श्रद्धा उनके मन के संशय को दूर करते हुए कहती है, ये तीन ज्योतिबिंदु क्रमश: भावलोक, कर्मलोक और ज्ञानलोक है, जो

क्रमश: हमारी भाववृत्ति, कर्मवृत्ति और ज्ञानवृत्ति के प्रतीक हैं। इन तीनों का परिचय देते हुए श्रद्धा मानव जीवन के आधारभूत और निगूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करती है। वह कहती है कि इन तीनों में सामंजस्य न होने के कारण जीवन सदा अपूर्ण रहता है। भाव, क्रिया तथा ज्ञान के सामंजस्य से ही जीवन में परिपूर्णता आ पाती है। ऐसा कहते हुए श्रद्धा उन तीनों का पृथक अस्तित्व नष्ट कर उनके बीच सामंजस्य स्थापित कर देती है। वास्तव में ये तीन बिंदु मनु की चेतना (भाववृत्ति, कर्मवृत्ति, ज्ञानवृत्ति) की ही प्रतिच्छाया हैं। तीनों में सामंजस्य होते ही मनु की चेतना में भी समरसता का संचार होने लगता है। कवि ने इस स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है -

स्वप्न, स्वाप, जागरण भस्म हो
इच्छा क्रिया ज्ञान मिल लय थे,
दिव्य अनाहत पर-निनाद में
श्रद्धायुक्त मनु बस तन्मय थे।

इडा, मनु के पुत्र मानव के सहयोग से सारस्वत प्रदेश को पुन: समृद्ध करती है। इसके बाद मानव, इडा और सारस्वत प्रदेश के निवासी श्रद्धा और मनु के दर्शनार्थ चल पडते हैं। उनके साथ धर्म के प्रतिनिधि वृषभ भी है। चारों तरफ मंगलगान गूंज रहा है। चलते-चलते वे एक समतल भूमि पर पहुँचते हैं। सामने कैलाश पर्वत है। पास ही मानसरोवर है जिसके किनारे मनु ध्यानमग्न बैठे हुए हैं। उनके सामने पुष्प लेकर श्रद्धा खडी है। सभी उन दोनों को प्रणाम करते हैं। मानव अपनी माँ की गोद में बैठ जाता है। इडा अत्यंत भावुक हो जाती है। उस समय विश्वसुंदती श्रद्धा का शरीर कौषेय वस्त्र से ढका हुआ था। हिमालय पर्वत चंद्र-ज्योत्सना से धवलित हो रहा था। इस दृश्य को देखकर सभी आपसी भेद-भाव, ईर्ष्या-द्वेश आदि भूलकर एक दूसरे को अपने से अभिन्न अनुभव करने लगे। इस स्थिति में जड़ और चेतन के मध्य का द्वैत भी अद्वैत में बदल गया था। सभी आनंद में लीन होकर समरसता का अनुभव कर रहे थे-

समरस थे जड़ या चेतन
सुंदर साकार बना था,
चेतनता एक विलसती
आनंद अखंड घना था।

बोध प्रश्न

- कामायनी में कुल कितने सर्ग हैं?
- कामायनी किसकी पुत्री थी ?
- सारस्वत प्रदेश किस नदी के तट पर स्थित थी?
- सारस्वत प्रदेश के शासक का क्या नाम था ? वह किसका प्रतीक है ?
- श्रद्धा मानव को किसके पास सौंपकर मनु की तलाश में दूसरी बार निकल पडती है?

10.3.2 चिंता सर्ग : चयनित अंशों की व्याख्या

'ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व-वन की व्याली,

ज्वालामुखी स्फ़ोट के भीषण प्रथम कंप-सी मतवाली !

शब्दार्थ: व्याली- सर्पिणी, भीषण-भयंकर, विश्ववन- संसार रूपी जंगल, स्फोट- फटना, मतवाली-उन्मत्त

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।

प्रसंग : इस कृति का नायक मनु के मन की वेदना जो उनके मुख से कहानी के रूप में निकल रही थी, उसी को कवि ने इन पंक्तियों में प्रस्तुत किया है। मनु देवजाति के थे और उन्होंने विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत किया था। पहली बार उन्होंने दुख का सामना किया था, इसलिए अधिक चिंतित थे।

व्याख्या : मनु देवजाति के थे जिनके सामने कभी कोई चिंता नहीं थी। प्रलय के बाद वे पहली बार चिंता से ग्रसित थे। इसलिए मनु चिंता को संबोधित करते हुए कहते हैं, ओ चिंता की पहली रेखा, तू इस संसार रूपी वन में रहने वाली सर्पिणी हो। जिस स्थान में सांप रहते हों, वह रहने के लिए सुरक्षित नहीं रहता है। इसी प्रकार मानव को जब चिंताएँ घेर लेती हैं तो उसका जीवन सुखमय नहीं रहता। तू ज्वालामुखी पर्वत के पहली बार फटने पर होने वाले भयंकर भूचाल के समान उत्पात मचाने वाली है। जिस प्रकार ज्वालामुखी फटने से सारी धरती नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार चिंता भी मन का सारा सुख नष्ट कर देता है।

विशेषता : ओ, अरी, मतवाली - चिंता के लिए संबोधन हैं।
चिंता की पहली रेखा- अर्थात पहली बार चिंता का सामना करना, पहली बार चिंता से ग्रसित होना
विश्ववन की व्याली- रूपक अलंकार, प्रथम कंप सी- उपमा अलंकार,
मतवाली : लाक्षणिक प्रयोग, चिंता को मतवाली इसलिए कहा गया है क्योंकि मतवाला मस्तिष्क
विकृति का कारण बनता है। चिंता के लिए मतवाली प्रयोग का लक्ष्य अर्थ होगा "विवेकहीन", व्यंग्यार्थ
है अत्यंत घातक या हानिकारक होना। चिंता अमूर्त भाव है, उसे मानवी के रूप में संबोधित किया गया है।

है अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खललेखा !
हरी-भरी-सी दौड-धूप, ओ जल-माया की चल-रेखा !
संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है ।

प्रसंग : हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठे मनु निर्जन वन में बिल्कुल अकेले थे । नीचे प्रलय था । ऐसे में उन्हें चिंता सताई जा रही थी कि आगे क्या होगा, कैसे होगा ? वे कुछ भी नहीं समझ पा रहे थे । उनके जीवन में चिंता का यह पहला ही मौका था । इसलिए वे चिंता के बारे में सोचते हुए चिंता को अलग-अलग रूपों में वर्णन करने लगते हैं ।

व्याख्या : मनु चिंता से कहते हैं- अरी अभाव से उत्पन्न होने वाली चंचल लडकी ! अर्थात, जीवन में होने वाले अभावों के कारण मन में चिंता की उत्पत्ति होती है । अरी चिंता ! तू मानव के ललाट पर लिखी गई दुष्ट या अमंगलमयी रेखा है । अर्थात मानव के दुर्भाग्य का सूचक है ।मन में चिंता के उत्पन्न होने पर माथे पर टेढी रेखाएँ बन जाती हैं । लेकिन फिर भी मनुष्य आशा के सहारे जीवित रहता है, इसी सोच के साथ कि बुरे दिन कट जाएँगे, इसलिए कवि ने चिंता को हरी भरी सी दौड धूप कहा है । अर्थात चिंताग्रस्त मानव चिंता से बचने के लिए बडा प्रयत्नशील रहता है । लेकिन चिंता! तू मरीचिका जैसी है । मरीचिका अपनी चंचल लहरों से मृगों को आकर्षित करती है । उसी प्रकार तू भी मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित कर उसे भटकाती रहती है । कहने का तात्पर्य यह है कि जब हम चिंता में होते हैं तो हम कोई निर्णय ठीक से नहीं ले पाते हैं । हमारा मन डँवाडोंल होते रहता है ठीक उस मरीचिका के समान ।

विशेषता : यहाँ चिंतातुर मन की स्थिति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है ।

अभाव की चपल बालिके, ललाट की खल लेखा, हरी भरी सी दौड धूप, जल माया – चिंता के लिए

प्रयुक्त संबोधन हैं । उल्लेख, उपमा, रूपक तथा मानवीकरण अलंकार है ।

हरी-भरी : लाक्षणिक प्रयोग, चिंता का मानवीकरण किया गया है ।

शब्दार्थ: अभाव=लोप, चपल= चंचल, ललाट=माथा, खल=दुष्ट, लेखा=रेखा, खललेखा= अशुभ रेखा, हरी=भरी सी : संपन्न, दौड=धूप- प्रयत्न, जल माया = मरु मरीचिका, चल= चंचल

इस ग्रहकक्षा की हलचल-री तरल गरल की लघु-लहरी,
जरा अमर-जीवन की, और न कुछ सुनने वाली बहरी !

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है ।

प्रसंग : पहली बार चिंता से गुजरने वाले मनु चिंता को अलग-अलग तरीकों से बखान करते हैं । कभी वह ज्वालामुखी लगती है तो कभी व्याल के समान । कभी चपल बालिके तो कभी जल माया । इसी क्रम में वे आगे चिंता का वर्णन करते हैं और अपना दुख अभिव्यक्त करते हैं ।

व्याख्या : चिंता को संबोधित करते हुए मनु कहते हैं कि चिंता, तुम पूरे ब्रह्मांड में, ग्रह नक्षत्रों के मध्य हलचल मचा देने वाली हो । ग्रहों के मार्ग में भू, भुव, स्व: तीनों लोक आ जाते हैं । इसलिए ब्रह्मांड ही ग्रहकक्षा है । अत: पूरे ब्रह्मांड को हिला देने वाली क्षमता चिंता तुम्हारे अंदर है । तुम तरल पदार्थों में भी हो और गरल में भी। यह उस हल्की लहर के समान जो हमेशा हलचल में

रहती है। जिस प्रकार विष के फैलजाने से मानव का सर्वनाश हो जाता है, उसी प्रकार चिंता के कारण मानव के मन को बडा आघात पहुँचता है। चिंता मस्तिष्क को प्रभावित कर जीवन को विषाक्त कर देती है। चिंता आदमी को जल्द ही बूढा बना देती है और चिंता से मनुष्य शीघ्र ही मर भी जाता है। चिंताग्रस्त मानव बहरे की तरह होता है, जिसे कुछ भी सुनाई नहीं देता, वह अपने ही धुन में खोये रहता है। मनु चिंता को बहरी कहते हैं।

विशेषता : चिंता की चरमसीमा बताई गई है। उल्लेख तथा रूपक अलंकारों का प्रयोग हुआ है। ल की आवृत्ति से अनुप्रास अलंकार है। जरा अमर जीवन में अर्थापत्ति व्यंग्य है। बहरी-मानवीकरण है।

शब्दार्थ : ग्रह कक्षा= पृथ्वी का भ्रमण, गरल= विष, तरल= द्रव्य पदार्थ, लघु=छोटी, जरा=बुढापा, बहरी=न सुनाई देनेवाली,

अरी व्याधि की सूत्र-धारिणी-अरी आधि, मधुमय अभिशाप !
हृदय-गगन में धूमकेतु-सी, पुण्य-सृष्टि में सुंदर पाप।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।

प्रसंग : अब मनु चिंता से बहुत परेशान है। उन्हें सूझ नहीं रहा कि उन्हें करना क्या है ! ऐसे में वे चिंता को अलग-अलग प्रकारों से संबोधित करते हुए अपनी मजबूरियों का बखान कर रहे हैं। इस अकुलाहट में उनकी बेबसी दिखती है।

व्याख्या : चिंता को संबोधित करते हुए मनु कहते हैं, अरी चिंता, तू रोगों को उत्पन्न करने वाली है, तू जिस मनुष्य के हृदय में घर कर लेती है, उसे अनेक और असाध्य बीमारी हो जाती है। सभी व्याधियों की तू ही सूत्रधारिणी है। तू मानसिक रोग की जड है इसलिए तुम मधुमय अभिशाप हो, जो धीरे-धीरे आदमी को मानसिक रूप से खोखला कर देती है। मानव के हृदय रूपी आकाश में तू धूमकेतु की तरह जन्म लेती है।धूमकेतु एक अत्यंत चमकीला तारा होता है जिसके पीछे पूंछ सी रहती है जिससे धुआँ सा निकलता है। ज्योतिष शास्त्र में इसे अनिष्ट माना जाता है। तू भी इसी प्रकार की है। इस पावन संसार में तू सुंदर पाप है।

विशेषता : व्याधि की सूत्र-धारिणी : चिंता एक मानसिक विकार है जिसके कारण नाना प्रकार के रोग पैदा होते
हैं इसलिए कवि ने चिंता को व्याधि की सूत्र-धारिणी कहा है।

मधुमय अभिशाप और सुंदर पाप : दोनों चिंता के कल्याण प्रद फल हैं।

सूत्रधारिणी, आधि, अभिशाप और पाप में निरंगरूपक अलंकार है। हृदय-गगन में रूपक अलंकार
है। धूमकेतु सी में उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है। चिंता शब्द स्त्री लिंग होने पर भी उसकी
तुलना अभिशाप, धूमकेतु और पाप जैसे पुल्लिंग शब्दों से की गई है।

शब्दार्थ : व्याधि=रोग, सूत्र-धारिणी= संचालित करने वाली, आधि=मानसिक रोग, धूमकेतु=पुच्छल तारा (अशुभ का सूचक), पुण्य=पवित्र, पावन, मधुमय=माधुर्य भरा, अभिशाप=कष्टमय स्थिति जिसमें सुखदायक वस्तु भी दुखद या बुरी बन जाती है । गगन=आकाश

मनन करावेगी तू कितना? उस निश्चिंत जाति का जीव-
अमर मरेगा क्या? तू कितनी गहरी डाल रही है नींव ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है ।

प्रसंग : चिंता को अलग-अलग रूपों में संबोधन करते हुए उसके दोष को स्पष्ट करने वाले मनु उससे कहते हैं कि उसका उद्देश्य चाहे जो भी हो, उसे उसमें सफलता नहीं मिलेगी ।

व्याख्या : चिंता से मनु कहते हैं- तू मुझे कितना सोचने के लिए विवश करेगी? भले ही तुझमें व्याधि और आधि उत्पन्न करने की शक्ति हो परंतु तेरे स्वभाव से मेरे जैसा व्यक्ति जो प्रकृति से ही न मरने वाला बताया गया है ऐसे में रोग, आशंका मेरे सामने क्या कर सकते हैं? आधि और व्याधि मृत्यु के दूत हैं । पर जो मृत्यु के बंधन से परे है, उसका ये क्या बिगाडेगा? ऐसे में तू मुझे किस हद तक प्रभावित कर पाएगी? कितनी गहरी नींव डाल रही है । अपनी सफलता के लिए कितना दृढ आधार बनाना चाहती है या कितना महान प्रयास कर रही है? या कितनी गहरी जड़ हाल रही है कि मैं चाहता हुआ तेरे प्रभाव से मुक्त नहीं हो पा रहा हूँ । अर्थात, मनु देवजाति के होने के कारण चिंता से उनकी मृत्यु होने की संभावना नहीं है, लेकिन उसके प्रभाव से वे अपने-आप को नहीं बचा पाए हैं । इसलिए वे बार-बार चिंता में डूब जाते हैं ।

विशेषता : निश्चित जाति का जीव अमर मरेगा क्या : विरोधाभास अलंकार

चिंता की गहरी नींव डालना : लाक्षणिक प्रयोग । प्रश्नार्थक चिह्न मनु के मन की उलझन को दर्शाता

है । तू- सर्वनाम का प्रयोग सामान्यत: घनिष्ट मित्रों के बीच या ईश्वरीय शक्ति के पास प्रार्थना करते

हुए किया जाता है, जिससे घनिष्टता ध्वनित होती है । यहाँ चिंता के लिए तू का प्रयोग यह दिखाता है

कि मनु और चिंता के बीच घनिष्टता हो ।

शब्दार्थ : मनन करना = किसी के बारे में निरंतर सोचना, निश्चिंत = जिसको कोई चिंता नहीं

आह! घिरेगी हृदय-लहलहे-खेतों पर करका-घन-सी,
छिपी रहेगी अंतर तम में सबके तू निगूढ धन सी ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।

प्रसंग : मनु चिंता को सार्वजनिक एवं सार्वयुगीन बताते हैं।

व्याख्या : चिंता से मनु कहते हैं कि तू सुखमय हृदय में आक्रमण करके हल चल पैदा करती है। तू लोगों के मन रूपी हरे-भरे खेतों में ओले बरसाने वाले मेघ की भांति सदा ही घिरी रहती है। एकमात्र मैं ही तेरे आक्रमण का शिकार नहीं बना हूँ, तू तो भावी संतति के आशा और प्रसन्नता से भरे मनों पर भी वज्रपात करने वाली हो। हरे-भरे खेतों पर ओले पड जाये तो वे नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार उल्लासमय जीवन मे चिंता घुसकर तहस-नहस कर देती है। तेरी झपकी में न आनेवाला आज कोई मानव होगा? चिंताग्रस्त न होने वाले मानव इस संसार में क्या कोई हो सकते हैं? तू सबके हृदयांतराल में इस प्रकार छिपी रहती हो जैसे जमीन के अंदर गहरा गाड दिया गया धन छिपा रहता है। अर्थात मानव अपनी चिंता प्रकट होने नहीं देता, वह उसे अपने मन में छिपा लेता है।

विशेषता : चिंता अमूर्त है, जिसके लिए मूर्त उपमाओं का प्रयोग हुआ है। हृदय लहलहे खेतों- रूपकलंकार

करका-घन-सी और निगूढ़ धन सी में उपमालंकार है। अनुप्रास अलंकार भी है।

बुद्धि, मनीषा,मति, आशा, चिंता तेरे हैं कितने नाम,
अरी पाप है तू, जा, चल जा, यहाँ नहीं कुछ तेरा काम।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।

प्रसंग : मनु चिंता को अलग-अलग नामों से संबोधित करते हुए उसे डॉटते-फटकरने के बाद भी उन्हें सुकून नहीं मिलता। इसलिए, वे अब उसे मनाने पर लगे हैं कि तुम किसी भी तरह जल्द मुझे छोड़कर चली जाओ।

व्याख्या : विविध प्रकार से अलग-अलग नामों से चिंता को संबोधन करने के बाद भी मनु का मन नहीं भरता। इसलिए वे कहते हैं कि तू इस धरती पर अलग-अलग नामों से रहती है। जगह-जगह तेरे नाम बदल जाते हैं। कई नामों से तू लोगों को छलती है। कहीं तू बुद्धि तो बनकर तो कहीं मनीषा बनकर। कहीं मति तो कहीं आशा के रूप में छिपी रहती है। कहीं चिंता के रूप में मानव के मन में बसी रहती है। चिंता को बुद्धि इसलिए कहा गया है क्योंकि चिंतित व्यक्ति बुद्धि से सोचता है। चिंता पर मनन करने के कारण उसे मनीषा कहा गया है। चिंता की उत्पत्ति मन से होती है, मन तर्क या वितर्क करता रहता है। मन को मति भी कहते हैं, इसलिए मन या मति से उत्पन्न होने के कारण चिंता को मति भी कहा गया है।चिंताग्रस्त मानव उससे छुटकारा पाने के लिए प्रयत्न करता है। प्रयत्न आशा जनित होते हैं। इसलिए इसे आशा भी कह गया है।चिंता से चिंतन का जन्म होने के कारण वह सार्थक है। कुलमिलाकर चिंता कई रूपों में मानव मन को उद्विग्न या आवेगपूर्ण बनाती है। इसलिए मनु चिंता से अनुरोध करते हैं कि-अरी

चिंता, तू पाप है। यहाँ से जल्दी चली जा। तेरा यहाँ कोई काम नहीं है, इसलिए तुम मुझसे दूर हो जाओ।
विशेषता : चिंता का मानवीकरण हुआ है। मनु के मन का क्षोभ प्रकट हुआ है। पाप का प्रयोग पापिनी के अर्थ में है। लेकिन पाप का अर्थ यदि बुराई लें तो अधिक चमत्कारक होगा। चिंता तो अपने आप में बुरी है। उसे अभिशाप भी कहा जा चुका है। चल जा में भाषा का शैथिल्य है, चली जा होना चाहिए था, लेकिन छंदोभंग हो जाता है, इसलिए चल जा का प्रयोग किया गया है। काव्यलिंग अलंकार है।
शब्दार्थ : बुद्धि- मेधाशक्ति, बोधमयी शक्ति, मनीषा-प्रतिभा, मति-किसी विषय पर चिंतन करन और समझना

विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते ! बस चुप कर दे,
चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे।"
संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।
प्रसंग : मनु चिंता को अलग-अलग नामों से संबोधित करते हुए उसे डॉटते-फटकरने के बाद भी उन्हें सुकून नहीं मिलता। इसलिए, वे अब उसे मनाने पर लगे हैं कि तुम किसी भी तरह जल्द मुझे छोड़कर चली जाओ। मनाने के बावजूद जब चिंता से वे मुक्त नहीं हो पाए तो फिर विस्मृति अवसाद का आग्रह करते हैं ताकि वे उसे भूल जाएं।
व्याख्या : मनु कहते हैं कि मेरी स्मरण शक्ति जाती रहे। क्योंकि अतीत का स्मरण होने से ही चिंता बढती है। न मुझे कुछ याद आएगा न ही चिंता मुझे सताएगी। इसलिए मैं सबकुछ भूल जाना चाहता हूँ। हे विस्मृति आ जा। वे कहते हैं कि मुझे अवसाद या सभी इंद्रियों की व्यापार शून्यता इस प्रकार घेर लें कि चिंता मेरे मन तक पहुंचे ही न। फिर नीरवता से कहते हैं कि बस बहुत हो चुका अब तो चिंता से मुक्त करा दो। वे चेतनवस्था में भी नहीं रहना चाहते हैं। जड बनकर बिना किसी चेतना के वे शून्य की तरह रहना चाहते हैं, ताकि चिंता उन्हें छू भी न पाए। और जो चिंता पहले से ही मन में घर कर गई है, जड या अचेतन अवस्था में उसका क्या काम। पता भी नहीं चलेगा कि ऐसी कोई चिंता नामक कुछ है। नीरवता से कहते हैं कि बस बहुत हो चुका अब इस कोलाहल को शांत कर दो। तात्पर्य यह है कि- बाह्य कोलाहल के साथ- साथ आंतरिक हलचल भी शांत हो जाए। क्योंकि चिंता में अतीत के सारे कोलाहल कानों में गूंजता हुआ प्रतीत होता है। उससे बचने के लिए वे नीरवता से कहते हैं कि शांत करा दो। जब नीरवता से कुछ नहीं हुआ तो वे चेतना को कहते हैं कि कहीं तुम मुझे छोडकर चली जाओ, मैं जड्वस्तु की तरह रहना चाहता हूँ ताकि मुझे चिंता न सता पाए।
विशेषता : चिंता से अधिक पीडित होने पर व्यक्ति में जडता आ जाती है और वह संवेदना खोने लगता है। आज शून्य मेरा भर दो- शून्य का अर्थ ब्रह्म भी है, अर्थात चिंता से पीडित मन आखिर ईश्वर का शरण लेता है। भरा उसे जाता है, जो खाली हो। यदि वह पहले ही पूर्ण होगा तो

उसमें और वस्तु के लिए अवकाश कहाँ ? मनु का हृदय भी खोया-खोया या व्यापार शून्य है अर्थात वह अन्य विषयों को ग्रहण नहीं कर पा रहा है, इसलिए उसे जडता से भर देने पर चिंता के लिए जगह नहीं रहेगा । चिंता विकारावस्था है जहाँ शून्य निर्विकार स्थिति है । यहाँ कवि शैवागम के आनंदवाद या बौद्ध धर्म के शून्यवाद की ओर संकेत करते हैं । विस्मृति, अवसाद, चेतनाहीनता अवांछनीय स्थिति हैं परंतु उनको आमंत्रित किया गया है-अनुज्ञा, समुच्चय आदि अलंकार है । 'शून्य' साभिप्राय होने से परिकरांकुर अलंकार है । अनुप्रास अलंकर भी है । मनु के मन में उत्पन्न यह विरक्ति क्षणीक मात्र की है ।
शब्दार्थ : विस्मृति=भूल, अवसाद= व्यापार शून्यता, नीरवता=सन्नाटा, चेतनता=सजीवता, जड़ता= संज्ञाहीनता

चिंता करता हूँ मैं जितनी उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनंत में बनती जातीं रेखाएँ दुख की ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है ।
प्रसंग : अब तक चिंता को कोसने के बाद मनु इस बात पर पहुँचते हैं कि उन्हें चिंता अवांछनीय क्यों लग रही है। उन्हें अपने सुखमय विलासपूर्ण अतीत का स्मरण हो रहा है, जलप्लावन और अकेलेपन में विलासमय जीवन का याद आना सहज ही है ।
व्याख्या : मनु कहते हैं कि मैं अपने बीते दिनों के सुख की चिंता करता हूँ । लेकिन उस अतीत सुख की जितनी मैं चिंता करता जाता हूँ, उतनी ही दुख की रेखाएँ मेरे हृदय में घर कर जाएँगी । अर्थात दुख भोगने के पश्चात मनुष्य यदि सुखमय स्थिति में पहुंच जाय तो वह शीघ्र ही दुखों को भूल जाता है, परंतु सुख भोगने के बाद यदि दुख आ जाए तो फिर उस सुखमय पलों को भुलाना बहुत कठिन है । मनु के साथ भी ऐसा ही हुआ है । सुख के बाद दुख आया है, इसलिए वे उस दुख से उभर नहीं पा रहे हैं ।
विशेषता : अतीत के बारे में सोचने पर दुख और भी गहरा जाता है । सुख अनुभव योग्य होता है लेकिन दुख दुस्सह । पहले की भांति यहाँ भी कवि ने हृदय के लिए अनंत शब्द का प्रतीकात्मक रूप में प्रयोग किया है । अनंत में दुख की रेखाओं का बनाना रूपकातिशयोक्ति अलंकार है । लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग हुअ है ।अमूर्त और मूर्त बिंबों की कुशल योजना हुई है ।
शब्दार्थ : अनंत = हृदयाकाश, अतीत=बीता हुआ कल, भूतकाल,

आह सर्ग के अग्रदूत ! तुम असफल हुए, विलीन हुए,
भक्षक या रक्षक जो समझो, केवल अपने मीन हुए ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के चिंता सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का पहला सर्ग है।
प्रसंग : मनु प्रलय के मूल में देवों की विलासितापूर्ण जीवन एवं उनके अत्याचारों का स्मरण करते हुए दुख प्रकट करते हैं।
व्याख्या : कवि अपने पूर्वजों, इस सृष्टि के अग्रदूतों, देवताओं से कहते हैं कि तुमने जो इस सृष्टि की रचना की और उसकी सुरक्षा और विकास के लिए विविध प्रयास किए, उनमें तुम्हें सफलता नहीं मिली, तुम्हारी वह सृष्टि भी प्रलय में ध्वस्त हो गई और तुम स्वयं भी उसमें मिट गये। तुम अपने आपमें स्वयं सृष्टि क रक्षक या भक्षक , चाहे जो भी सोच लो, हमने अपने कर्मों से ही इस विनाश को आमंत्रित किया है।अपने अहंकार के कारण प्रकृति के क्रोध का हम शिकर हो गए। मछली छोटी मछली से अपना पेट भरती है और क्षण भर के लिए अपनी रक्षा कर लेती है, लेकिन किसी बडी मछली का उसे शिकार होना ही पड़ता है। मछली जाति स्वयं रक्षक भी है और भक्षक भी। देव जाति ने भी असुरों से अपनी रक्षा कर ली, लेकिन अहंकार के कारण वह काल में विलीन हो गए।अपने ही विलास ने देव जाति को नष्ट कर दिया। इसलिए देव जाति स्वयं अपना रक्षक भी है और भक्षक भी।
विशेषता : देवता को सृष्टि की प्रथम रचना बताया गय है। दैवीगुण रक्षक है, अहंकार भक्षक है। इसलिए मनुष्य को सात्विक होना चाहिए। तीन प्रकार के गुणों का उल्लेख किया गया है- सात्विक, राजसिक, तामसिक। इन तीनों में सात्विक सबसे श्रेष्ट गुण माना गया है।
शब्दार्थ : सर्ग=सृष्टि रचना, अग्रदूत=पहले प्रजापति, विलीन=लुप्त, भक्षक= खा जाने वाला, मीन=मछली

बोध
प्रश्न

1. सर्ग के अग्रदूत से क्या तात्पर्य है?

2. कितने प्रकार के गुणों का उल्लेख होत है, उनके नाम लिखिए।

3. नीरवते शब्द का प्रयोग कवि ने किस संदर्भ में किया है?

----

4. चिंताग्रस्त मानव को कवि ने बहरा क्यों कहा है?

----

5. मनु किसकी याद करते हुए चिंता से ग्रसित होते हैं ?

10.3.3 श्रद्धा सर्ग : चयनित अंशों की व्याख्या

"कौन तुम? संसृति-जलनिधि तीर-तरंगों से फेंकी मणि एक,
कर रहे निर्जन का चुपचाप प्रभा की धारा से अभिषेक?

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है ।

प्रसंग : प्रलय कुछ थमसा गया है । हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठा मनु प्रलय से घबरा गया है । अकेलेपन में जीना उसे दुष्कर लगता है । धीरे-धीरे प्रकृति में बदलाव होने लगता है तो मनु के मन में आशा जगती है । एकांत स्थान में जब वह अकेला बैठा था, तब एक अनिद्य सुंदरी श्रद्धा मनु से यह प्रश्न करती है ।

व्यख्या : हिमगिरि के नीरव वातावरण में एक दिन मनु जब चिंता में लीन होकर बैठे थे तब अचानक उन्हें ऐसा लगा कि कोई उनसे पूछ रहा है-"तुम कौन हो? तुम्हारे मनोहर कांतिमय रूप को देखकर मुझे ऐसा लगता है जैसे समुद्र की लहरें उथल-पुथल मचाकर मणि को तट से फेंक देती हैं, उसी प्रकार इस सांसारिक आघातों से ठुकुराये हुए मणि के समान तुम कौन हो? जिस प्रकार समुद्र की तट पर पडी हुई मणि अपनी आभा से अपनी चारों ओर जगमगा देती है उसी प्रकार इस निर्जन स्थान में कांति की धारा को तुम आलोकित कर रहे हो । बताओ तुम कौन हो?

विशेषता :यहाँ उक्तिवक्रता और लालित्य है । रूपक तथा परिकर अलंकार है । लक्षणा शब्दशक्ति है । छंद: संपूर्ण श्रद्धा सर्ग में 16 मात्राओं वाले श्रृंगार छंद प्रयुक्त हुआ है ।

शब्दार्थ :संसृति जलनिधि=संसर रूपी भवसागर, तीर-किनारा, प्रभा की धारा=कांति की किरणें, अभिषेक=स्नान/ सुशोभित

मधुर विश्रांत और एकांत-जगत का सुलझा हुआ रहस्य,
एक करुणामय सुंदर मौन और चंचल मन का आलस्य !"

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है।

प्रसंग : प्रलय कुछ थमसा गया है। हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठा मनु प्रलय से घबरा गया है। हिमालय के इस एकांत स्थान में बैठे उस अकेले व्यक्ति को देख श्रद्धा चकित होकर उससे कई प्रश्न पूछती है।

व्याख्या : वह कहती है, तुम्हें देखने से तुम बहुत थके हुए लगते हो, अकेले में विश्राम कर रहे हो क्या? तुम्हारे आकार से मधुरता टपक रही है। तुम्हें देखने से लगता है कि तुमने इस जगत का रहस्य भली भांति जान लिया है। तुम्हारा यह मौन न केवल तुम्हारे बह्य सौंदर्य का बोध कराती है अपितु स्पष्ट हो रहा है कि तुम्हारा हृदय भी करुणा से परिपूर्ण है। और तुमने अपनी चंचलता को त्यागकर आलस्य के साथ बैठकर विश्राम कर रहे हो।

विशेषता : श्रद्धा सर्ग का प्रारंभिक अंश नाटकीय लगता है। सारे पद में लाक्षणिक वक्रता का प्रयोग हुआ है।

शब्दार्थ : मधुर=आकर्षक, विश्रांत=आराम करना, विश्राम करना, एकांत=अकेलापन, एकाकी, करुणामय=करुणापूर्ण, जिसे देखकर करुणा उत्पन्न हो, मौन=शांत/ नीरवता

सुना यह मनु ने मधुर गुंजार मधुकरी का-सा जब सानंद,
किये मुख नीचा कमल समान प्रथम कवि का ज्यों सुंदर छंद।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है।

प्रसंग : श्रद्धा के वचनों को सुनकर मनु की जो प्रतिक्रिया हुई उसका उल्लेख कवि ने किया है।

व्याख्या : मनु उस पूरे प्रदेश में अकेले थे। विचारमग्न होकर झुके कमल सा नीचे धरती की ओर देख रहे थे। तभी अचानक भ्रमरी के मधुर गुंजार के समान श्रद्धा के वचनों को सुना। श्रद्धा के शब्द सुनकर उनका मन प्रसन्न हुआ। उनका हृदय आनंदित हो उठा। उन्हें लगा जैसे आदिकवि वाल्मिकि का सबसे प्रथम पद्य सुन रहे हों।

विशेषता :कवि ने स्थिति का सुंदर चित्र अंकित किया है। मनु आसन पर मुख नीचा किये बैठे हैं, सामने श्रद्धा खडी है। जब कमल नीचे होता है तो भंवरा ऊपर-ऊपर मंडराता रहता है।श्रद्धा की तुलना यहाँ मधुकरी से की है, इसलिए मनु की तुलना कमल से की है। मधुकरी का गुंजन मधुर और मंद होता है, जो व्यक्ति मनु से बात कर रहा है, उसका स्वर भी मधुर एवं मंद है।

अत: कवि यहाँ पर पाठक को यह दिखाना चाहते हैं कि मनु से जिसकी बात हो रही है, वह एक स्त्री है जो मृदुभाषी, लज्जाशील एवं करुणामय है।

अंतिम पंक्ति में कवि "आदिकवि" वाल्मीकि की ओर संकेत किया है। वाल्मीकि की काव्यरचना के मूल में यह प्रसिद्ध है कि एक दिन वाल्मीकि ने क्रौंच पक्षी के क्रीडाशील जोडे में से एक को किसी व्याघ के बाणों से आहत होकर गिरते देखा, महर्षि का मन करुणा से भर आया और करुणामय श्लोक प्रकट हुआ –

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वगम: शाश्वती समा:।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधी: काममोहितम ॥

मधुकरी का सा और कमल समान : उपमा अलंकार, सुना, तूने, सानंद इन दन्त्यवर्णों की आवृत्ति के कारण श्रुति और मकार की आवृत्ति से वृत्ति अनुप्रास है।

शब्दार्थ : मधुकरी=भ्रमर, प्रथम कवि=महर्षि वाल्मीकि,

एक झिटका-सा लगा सहर्ष, निरखने लगे लुटे-से कौन-
गा रहा यह सुंदर संगीत? कुतूहल रह न सका फिर मौन।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा।

व्याख्या : उस निर्जन प्रदेश में अचानक एक स्त्री की आवाज सुनकर मनु को विस्मय का हलका झटका सा लगा। उस स्वर के माधुर्य से वे इतने मुग्ध हो गये कि मानो खो गए। उनके रोम-रोम में हर्ष की बिजली दौडी। उन्हें ऐसा आभास हुआ कि कोई उनके हृदय रूपी धन को लूट रहा है। वे अपने आप को रोक न सके। प्रसन्न होकर उस ओर देखने लगे जहाँ से यह मीठी आवाज आई थी। कौन कह रहा है, यह जानने की उनमें उत्सुकता थी। अर्थात, श्रद्धा की वाणी की मधुरता में मनु खो गये थे और अपने मन की कुतूहलता को वे दबा नहीं पाए।

विशेषता : उत्प्रेक्षा और पर्यायोक्ति अलंकार है। सा, सुंदर, संगीत, सका : अनुप्रास अलंकार है।

शब्दार्थ : झिटका सा लगा= बिजली सी दौड गई, लुटे से= आश्चर्यचकित, सहर्ष= प्रसन्नता के साथ, कुतूहल रह न सका फिर मौन=यह जानने की उत्सुकता दबी न रही,

और देखा वह सुंदर दृश्य नयन का इंद्रजाल अभिराम,
कुसुम-वैभव में लगा समान चंद्रिका से लिपटा घनश्याम।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा। वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा।

व्याख्या : भ्रमरी गुंजार सी आवज़ सुनकर मनु अपने आप को रोक न पाए। उनके मन में हलचल हुई कि इस निर्जन प्रदेश में इतनी मीठी सी आवाज किसकी है। वे अपने-आप को रोक न सके। जब अपना सिर उठाकर देखा तो सामने खडी सुंदर स्त्री को देख वे दंग रह गए। वह मनु के नेत्रों पर मोहक जादू सी डाल रही थी। वह बहुत ही आकर्षक लग रही थी। उसे देख ऐसा लगता था मानो सुंदर फूलों से लदी कोई लता हो या फिर काले बादलों से घिरी हुई चाँदनी हो।

विशेषता : नयन का इंद्रजाल अभिराम: रूपकातिशयोक्ति है। कुसुम वैभव तथा लता समान : उपमा अलंकार है। चंद्रिका से लिपटा घनश्याम : इसका अर्थ यह नहीं कि वह युवती श्यामवर्ण की थी। कवि का कहना है कि वह सुंदरी नील परिधान पहनी हुई थी, जिसकी उपमा घनश्याम (नीले बादल) से तथा उसके शरीर को चांदनी से दी गई है। "चंद्रिका से लिपटा घनश्याम" यह प्रसाद की मौलिक कल्पना है।

शब्दार्थ : इंद्रजाल= जादू, सम्मोहन, अभिराम= मनोहर, कुसुम वैभव= फूलों का समूह, चंद्रिका=चांदनी, घनश्याम= काले बादल,

हृदय की अनुकृति बाह्य उदार एक लंबी काया, उन्मुक्त,
मधु-पवन-क्रीडित ज्यों शिशु साल, सुशोभित हो सौरभ-संयुक्त।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है। उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा। वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा। उस स्त्री के अंग सौंदर्य को आँखों में भरने लगा। नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी। कवि उस स्त्री के वर्णन इस प्रकार करते हैं।

व्याख्या : मनु ने जब सिर उठाकर देखा तो एक सुंदर आकर्षक स्त्री की प्रतिमा उसके सामने खडी थी। उसे लगा कि वह बाहर से जितन आकर्षक व मनमोहक लग रही है, उसका हृदय भी उदारता से भरा होगा। उसकी देह लंबी थी, अर्थात कवि का यह कहना है कि जिस प्रकार उस रमणी का शरीर लंबा और कोमल था, उसका हृदय भी कोमल एवं विशाल होगा। श्रद्धा के मन की सुंदरता उसके मुख पर सुशोभित हो रही थी। उस सुंदरी का शरीर देख मनु को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सुगंध से भरा शाल वृक्ष जो बसंती के झोंकों से हिलोरें लेता हुआ झूम रहा है।

विशेषता : श्रद्धा के बाह्य सौंदर्य को उसके आंतरिक शरीर का प्रतिरूप बताया गया है। लंबी काया =शरीर ही लंबा नहीं बल्कि उसकी आत्मा भी उदार थी, शिशु साल- श्रद्धा कन्या होने की सूचना देता है। अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकार है।

शब्दार्थ : अनुकृति=प्रतिरूप, बाह्य=बाहरी, काया=शरीर, मधु=मधुर, मंद, साल=शाल वृक्ष, सौरभ-सा-युक्त =सुगंधमय, उन्मुक्त = स्वतंत्र,

मृसण, गांधार देश के नील रोम वाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु कांत बन रहा था वह कोमल वर्म ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है ।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा । वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा । उस स्त्री के अंग सौंदर्य को आँखों में भरने लगा । नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी । मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है । उसकि सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है ।

व्याख्या : उस रमणी का रूप वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि उस नारी का कोमल शरीर गांधार देश के चिकने नील रोमवाले भेडों के चमडे से ढका हुआ था और वही उसके शरीर का रक्षा कवच था ।

विशेषता : गांधार देश पेशावर से आगे का क्षेत्र है जिसका कुछ भाग अब पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान में आता है । आजकल गांधार को कंदहार कहते हैं ।वहाँ की लंबी रोम वाली चिकनी भेडें बहुत प्रसिद्ध हैं । मृसण गांधार देश के नील- के माध्यम से कवि स्पष्टत: कहना चाहते है कि युवती जितनी सुकुमार थी उसके वस्त्र भी उतने ही कोमल और सुकुमार थे । परिणाम और स्वभावोक्ति अलंकार है ।

शब्दार्थ : मृसण=कोमल, मेष- मेढा/ भेढ, चर्म=चमडा, वपु=शरीर, कांत=सुंदर, वर्म=कवच, नील=नीली, रोम=बाल,

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मुदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग ॥

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है ।

प्रसंग : नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी । मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है । उसकि सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है । नीले वस्त्र के बीच उसका यौवन झॉंक रहा था । कवि उसका वर्णन अत्यंत सुंदर शब्दों में करते हैं ।

व्याख्या : नील वर्ण के उस मेष चर्म से बने वस्त्र के बीच कहीं उसका सुंदर सुकुमार शरीर दिख रहा था । सुकुमार शरीर, कोमल और मृदुल अंग इस प्रकार शोभित था जैसे कि काले बादलों के वन में गुलाबी रंग की बिजली का फूल खिला हो ।

विशेषता : श्रद्धा के कोमल शरीर का सुंदर वर्णन हुआ है । नीले रंग के चमडे के बीच झांकते गुलाबी अंग में चित्रात्मकता है । हर्ष और रति भाव है । अधखुला अंग : निरंगरूपक है। ज्यों बिजली के फूल : उत्प्रेक्षा अलंकार

शब्दार्थ : परिधान=वस्त्र, मृदुल=कोमल, मेघवन=बादल रूपी वन,

खिला वह मुख! पश्चिम के व्योम बीच जब घिरते हों घनश्याम,
अरुण रवि- मंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है ।

प्रसंग : नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी । मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है । उसकि सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है । नीले वस्त्र के बीच उसका यौवन झॉक रहा था । कवि उसका वर्णन अत्यंत सुंदर शब्दों में करते हैं ।

व्याख्या : मनु उस युवती की सुंदर काया और मनोहर मुख को देख कर कहते हैं- "आह, खिला-खिला वह मुख, उस सुंदर मुख का वर्णन तभी संभव है जब पश्चिम के आकाश में काले-काले मेघ घिर रहे हों और उनके बीच में से लाल-लाल सुंदर सूर्य का बिंब निकलता दिखाई दे ।

विशेषता : रमणी के मुख के लिए :"अरुण रवि" और काले बादल के लिए : "घनश्याम" कहा गया है ।रमणी अर्थात श्रद्धा का मुख सूर्य मंडल की भांति जगमगा रहा था । वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार है । कुछ विद्वान इसे अद्भुतोपमा कहते हैं, और कुछ अतिशयोक्ति भी कहते हैं । "आह वह मुख" : मनु का विस्मय सूचक है ।

शब्दार्थ : व्योम = आकाश, अरुण=सूर्य, लाल=सूर्य की लाल किरणें जो मन को मोह लेती हैं, घनश्याम=काले-काले बादल, रविमंडल=सूर्य मंडल, भेद=चीरना/ अंतर, छविधाम=सौंदर्य का निलय, श्याम=काले

या कि, नव इंद्रनील लघु श्रृंग फोड कर धधक रही हो कांत-
एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अश्रांत ।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी का महाकाव्य कामायनी से उद्धृत किया गया है । उपरोक्त पंक्तियाँ कामायनी के श्रद्धा सर्ग से चयनित हैं, जो कामायनी का तीसरा सर्ग है ।

प्रसंग : नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी । मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है । उसकि सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है । उसकी सुंदरता के वर्णन में कवि कल्पना लोक में विचरने लगता है और अलग-अलग उपमा ढूँढ्कर लाता है । उसकी सुंदरता का वर्णन करते हुए कवि का शायद मन नहीं भरा हो ।

व्याख्या : अथवा, मनु को यौवन की शोभा से आलोकित श्रद्धा का मुख ऐसा लग रहा था मानो वह कोई नीलम का रत्न हो जो छोटे से पहाड को भेदती हुई बसंत ऋतु की रात में फूट रही कोई ज्वालामुखी की लपटें हों जो अंदर ही अंदर धधक रही हों ।

विशेषता : छोटा पहाड: उसकी आयु की ओर इंगित करता है, जो कि कम उम्र की है । कवि की कल्पना अप्रतिम है । ज्वालामुखी पर्वत तो प्रसिद्ध है, परंतु नीलम का शिखर प्रसिद्ध नहीं । नीले बालों से घिरा सिर ही नीलम कके शिखर के रूप में कल्पित है । उसके मुख का उज्ज्वल भाग ज्वालामुखी की फूटी ज्वाला है । नायिका का शेष शरीर वसंत ऋतु की चांदनी रात के रूप में

संभावित है। यहां भी पूर्ववत असंबंध में संबंध-रूपा अतिशयोक्ति है। अभी तक कवि ने केशों का वर्णन नहीं किया है, हो सकता है इसके आगे के छंदों में हो। श्रद्धा के रूप का इससे सुंदर वर्णन प्राय: ही संभव हो। ज्वालामुखी-प्रतीकात्मक है, अर्थात स्त्री की सुंदरता हमेशा से ही आग लगा देने का कार्य करती है। यहाँ श्रद्धा न केवल आग लगाने का काम कर रही है बल्कि ज्वालामुखी सा मनु के मन को पूरी तरह से अपनी ओर खींच रही है।
शब्दार्थ : इंद्रनील=नीलम का रत्न, लघु=छोटी, श्रुंग=पहाड, फोड=चीरना/तोडना, धधक= अंगारे की भांति, अचेत=सुप्त, माधवी=बसंत, अश्रांत=न थकी, निरंतर, रजनी=रात्रि

बोध प्रश्न

---

1. नील परिधान बीच सुकुमार से आप क्या समझ रहे हैं?

----

2. गांधार देश का वर्तमान में क्या नाम है?

----

3. आदिकवि किसे कहा जाता है?

----

4. श्रद्धा सर्ग का पूरा वर्णन किस छंद में हुआ है?

----

5. श्रद्धा गांधार देश की है, इसकी पहचान आप किन पंक्तियों से करते हैं?

10.4 समीक्षात्मक अध्ययन :

10.4.1 कमायनी : शीर्षक की सार्थकता

छात्रों ! अब तक के अध्ययन से आप समझ गए होंगे कि प्रसाद की अंतिम कृति कामायनी की नायिका श्रद्धा है, लेकिन इस कृति का नाम श्रद्धा न रखकर कामायनी रखा गया है, तो आपके मन में यह प्रश्न अवश्य उठेगा कि प्रसाद ने इस कृति नामकरण श्रद्धा न रखकर कामायनी क्यों रखा! तो चलिए "कामायनी" नामकरण के पीछे क्या तर्क है, इसकी जानकारी प्राप्त कर लें।

कामायनी की रचना के द्वारा कवि ने आधुनिक समाज में बढ़ती हुई बुद्धितत्व की प्रधानता तथा समाज में कम होती संवेदनशीलता पर कुठाराघात किया है। कामायनी के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया है कि हृदय तत्व एवं बुद्धितत्व के समंजस्य से ही आनंद की प्राप्ति होती है। इनमें से किसी एक की कमी होने पर भी मनुष्य को आनंद की प्राप्ति नहीं होगी। प्रसाद ने हृदय पक्ष को अधिक महत्व दिया है। आप यह जानते हैं कि कामायनी की मूल कथा प्रागैतिहासिक काल की है। इस काव्य के नामकरण की प्रासंगिकता पर बात करने से पहले कुछ तथ्यों के बारे में जान लेना आवश्यक है। श्रद्धा का उल्लेख ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण आदि में मिलता है। श्रद्धावाले सूक्त में सयणाचार्य ने श्रद्धा का परिचय इस प्रका दिया है- "कामगोत्रजा श्रद्धानामर्षिका" अर्थात श्रद्धा कामगोत्र की पुत्री श्रद्धा नाम के साथ उसे कामायनी भी कहा जाता है।

कामायनी के चर अर्थ दिए जा सकते हैं-

कामदेव की पुत्री,

काम कला,

कामधेनु,

काम (इच्छा) + अयन (घर) अर्थात इच्छा का घर

कामायनी और श्रद्धा के अर्थ की तुलना करें तो हमें कुछ रोचक तथ्यों का पता चलता है। ध्यान दें कि श्रद्धा शब्द के प्रचलित अर्थ हैं- गर्भवती स्त्री की इच्छा, पुरुषगत अभिलाषा-विशेष और वासना, साधना की जननी आदि।इस प्रकार, आप यह देख सकते हैं कि कामायनी की नायिका श्रद्धा के समस्त गुणों का प्रतिपादन हमें इस महाकाव्य में मिलता है। इस दृष्टि से देखा जाय तो श्रद्धा के अर्थ का अक्षरश: पालन करने वाली को कामायनी कहा जा सकता है। इस दृष्टि से कामायनी शीर्षक उपयुक्त सिद्ध होता है।

एक दूसरे दृष्टिकोण से भी इस पर विचार किया जा सकता है। जैसा कि आपने पहले ही देखा कि कामायनी का शाब्दिक अर्थ है-काम की संतान, कामगोत्र की बालिका। प्रसाद इस कृति का नाम श्रद्धा भी रख सकते थे। यह शीर्षक भी मधुर, आकर्षक और गरिमापूर्ण होता, क्योंकि श्रद्धा मानव हृदय की एक पवित्र वृत्ति है। कामायनी में इस वृत्ति को प्रधानता भी दी गई है। फिर प्रसाद ने इसका नाम कामायनी क्यों रखा, एक विचारणीय प्रश्न है। "कामायनी की नायिका श्रद्धा कामवंश की है, यह हम जानते हैं। भारतीय मिथक के अनुसार काम प्रेम की देवता है। यह एक पौराणिक तथ्य है कि जलप्लावन के पूर्व भी धरती पर कामोपासना का प्रचलन था और कामोपासना को सामाजिक स्वीकृति भी प्राप्त थी। भारतीय समाज के इस पक्ष पर टिप्पणी करते हुए प्रसाद ने रहस्यवाद नामक निबंध में लिखा है- "काम का धर्म में अथवा

सृष्टि के उदगम में बहुत बडा प्रभाव ऋग्वेद के समय में ही माना गया है । ”मस्तदग्रे संवर्तताधि मनसो रेत: प्रथमत: यदासीत’ यह भी कहा जा सकता है । काम शब्द की व्यापकता प्रेम से भी कई गुना ज्यादा हो सकता है । जबसे हमने प्रेम को इश्क का पर्याय मान लिया है, तभी से काम शब्द का अर्थ सीमित हो गया है । काम और प्रेम की भारतीय अवधारणा को कामायनी में अत्यंत स्पष्ट रूप से उभारा गया है । इसके अनुसार काम में जो व्यापक भावना समाविष्ट है, उसमें सभी प्रकार के भाव आ जाते हैं । प्रसाद जी की यह धारणा है कि हमारे आगम शास्त्रों में वैदिक काम की काम कला के रूप में उपासना भारत में विकसित हुई थी । यह उपासना सौंदर्य, आनंद और उन्माद भाव की एक प्रचलित साधना प्रणाली थी । बाराहवीं शताब्दी के सूफी संत “इब्न अरबी’ ने भी अपने सिद्धांत में इसकी महत्ता को स्वीकार की है । उनका कथन है कि ’मनुष्य ने जितने प्रकार के देवताओं की पूजा की, उनमें काम ही प्रमुख है। यह काम ही ईश्वर की अभिव्यक्ति का सबसे बडा व्यापक रूप है ।’ (उद्धृत : कामायनी विमर्श- डॉ हरिचरण शर्मा, पृ.सं 55) । उपरोक्त पंक्तियों से यह प्रमाणित होता है कि काम प्रेम का ही वैदिक रूप है जो प्रेम के सामान्य अर्थ की तुलना में अधिक व्यापक और गूढ है । व्यापक अर्थ में यह सारा विश्व काम का ही प्रतिरूप है । काम केवल भोग नहीं है । कामायनी में इस बात को खुलकर कहा गया है । जब काम भोग के अर्थ में सिमट जाता है तब मानव जीवन व्यर्थ हो जाता है । पहले मनु भी श्रद्धा के प्रति भोग की भावना रखते थे, जिसके लिए उन्हें श्रद्धा को छोडना पडा और काम की शाप ध्वनि भी सुननी पडी । इडा के साथ मनु के अपरिपक्व व्यवहार भी इस भोग के कारण ही है । कामायनी की कथा के इस पक्ष को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रसाद काम के उसी वैदिक भाव को स्थापित करना चाहते हैं । अत: इस महाकाव्य का कामायनी शीर्षक सार्थक और भारतीय चिंतन के अनुकूल भी है । श्रद्धा शीर्षक इस काव्य को इतनी व्यापक भावभूमि पर स्थापित नहीं कर सकता था ।

10.4.2 कामायनी का महाकाव्यत्व :

कामायनी को आधुनिक युग का महाकाव्य कहा जाता है । चलिए देखते हैं कि महाकाव्यत्व पर प्राचीन आचार्यों द्वारा निरूपित लक्षणों पर कामायनी खरा उतरता है या नहीं ।

महाकाव्य के प्रमुख लक्षण :

महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक या कल्पित होना चाहिए ।

महाकाव्य का नायक वीर, उदात्त, एवं धैर्यवान होना चाहिए । आधुनिक युग के महाकाव्यों में नायक के स्थान पर नायिका को भी प्रधानता दी सकती है ।

महाकाव्य में पात्रों की विशेषता होती है ।

प्रकृति निरूपण होना चाहिए ।

युगीन समस्याओं को स्वर दिया जाना चाहिए ।

मानवीय भावों एवं नवरसों का वर्णन होना चाहिए, श्रृंगार, वीर व शांत रसों में से किसी एक रस की प्रधानता होनी चाहिए ।

सर्गबद्ध होना चाहिए। आठ से लेकर तीस सर्ग होने चाहिए।
कथा में गंभीरता और महाकाव्योचित विस्तार भी होना चाहिए।
शैली उत्कृष्ट एवं कलात्मक हो, प्रतीकात्मक, भाषा भव्य एवं शालीन हो।
महाकाव्य का नामकरण, नायक/नायिका, इतिवृत्त, किसी घटना पर आधारित हो सकता है।
तो चलिए, उपरोक्त बिंदुओं पर हम कामायनी के महाकाव्यत्व को समझ लें।

कामायनी का महाकाव्यत्व :

कथानक : कामायनी का कथानक इतिहास सम्मत है। आदि मानव मनु की गाथा होने से भी विशिष्ट है। यह कथानक लघु होते हुए भी महाकाव्य के अनुकूल है।

नायक : कमायनी का कथानायक मनु है। वे देवपुरुष और उच्चकुल के माने जाते हैं।उनका ऐतिहासिक अस्तित्व है। वे धीरोदात्त न होकर धीर ललित नायक कहे जा सकते हैं। उनके जीवन में दुर्बलता, सबलता, निकृष्टता, उत्कृष्टता आदि का समावेश किया गया है। मनु मन के प्रतीक हैं, जिसमं गुण दोष होते हैं। इस रूपकत्व का निर्वाह करने के लिए दुर्बलताओं को दिखाना आवश्यक है। वस्तुत: कामायनी नायिका प्रधान महाकाव्य है क्योंकि नायिका श्रद्धा में वे सारे गुण मौजूद हैं जो एक महाकाव्य की नायिका में होने चाहे।

चरित्र-चित्रण : कामायनी में प्रसाद ने रस को महत्व देते हुए चरित्रों का निर्वहण किया है। श्रद्धा, मनु औरिडा ये तीन ही पात्र हैं जो मानव की चित्तवृत्तियों का प्रतिर्निधित्व करते हैं। कवि ने इन चरित्रों के माध्यम से मानव मन की बारीकियों की विवेचना की है।

प्रकृति-चित्रण : कामायनी में प्रकृति के आलंबन, उद्दीपन, मनवीकरण, रहस्यात्मक, संवेदनात्मक, प्रतीकात्मक आदि सभी प्रकार के वर्णन मिलता है। कामायनी के व्याख्या भाग में आपने उदाहरण सहित इसको देखा है।

युग-चित्रण : कामायनी में आधुनिक युग की स्थिति का पूरा चित्रण किया गया है। युगीन समस्याओं को स्थान दिया गया है। नारी मुक्ति आंदोलन, नारी शिक्षा आदि को प्रसाद ने महत्व दिया है तथा पुरुष से नारी को श्रेष्ठ बतलाया है। नारी सात्विक वृत्तियों से युक्त पुरुष की प्रेरणा शक्ति है। श्रद्धा के हृदय में जो भाव विद्यमान थे वे वास्तव में नारी हृदय की भावनाएँ हैं – दया माया ममता लो आज/मधुरिमा लो अगाध विश्वास/ हमारा हृदय रत्ननिधि स्वच्छ/ तुम्हारे लिए खुला है पास ॥ बुद्धि के आधार पर हो रहे वैज्ञानिक प्रगति को मानव के लिए अहितकर बतलाया है। सारस्वत प्रदेश का उत्कर्ष-अपकर्ष के द्वारा प्रसाद ने यांत्रिक सभ्यता को हानिकारक बताया है।भौतिकता के निरंतर बढने से विनाश निश्चित है।

भाव एवं रस : इसमें श्रृंगार एवं शांत रस की प्रधानता है। अन्य रसों का भी गौण रूप में प्रयोग हुआ है। श्रृंगार के दोनों पक्ष संयोग और वियोग का निरूपण कामायनी में हुआ है।चिंता, दर्शन, रहस्य आनंद जैसे सर्गों में शांत रस का निरूपण हुआ है। इसके अतिरिक्त कामायनी एक सर्गबद्ध रचना है जिसमें कुल पंद्रह सर्ग हैं। प्रत्येक सर्ग का नामकरण उसमें वर्णित प्रमुख मनोभाव या घटना के आधार पर किया गया है। आगामी कथा का संकेत प्रत्येक सर्ग के अंत में दिया गया है। छंदविधान शास्त्रानुकूल है। भाषा शुद्ध खडीबोली है। प्राचीन व नवीन अलंकारों का प्रयोग

किया गया है । लाक्षणिकता आदि के प्रयोग से कहीं कहीं दुरूहता होने पर भी यह कहा जा सकता है कि कामायनी आधुनिक युग का महाकाव्य है ।

10.4.3 कामायनी का दार्शनिक दृष्टिकोण : कामायनी एक ऐसा महाकाव्य है जिस पर आलोचक नये-नये दृष्टिकोणों से विचार कर रहे हैं । आप यह जान चुके हैं कि प्रसाद पौराणिक आख्यान के साथ-साथ भारतीय दर्शन एवं चिंतन से भी प्रभावित थे । कामायनी की रचना में दर्शन के प्रभाव को हम देख और महसूस कर सकते हैं ।

प्रत्यभिज्ञा दर्शन : इसमें आत्मा को महाचिति माना गया है । इसी के अनुरूप प्रसाद ने आत्मा को सदा लीलामय आनंद में रहने वाली, इच्छा, क्रिया, ज्ञान आदि रूपों में जगत का निर्मण करने वाली आदि कहा है । मनु का चरित्र निर्माण भी प्रसाद ने इसी आधार पर किया है – कर रही लीलामय आनंद/ महाचिति सजग हुई सी व्यक्त/ विश्व का उन्मीलन अभिराम/ इसी में सब होते अनुरक्त ॥ इच्छा, क्रिया, ज्ञान को एक त्रिकोण में चित्रित किया गया है जो कि भारतीय दर्शन की एक वैज्ञानिक स्थापना है- इस त्रिकोण के मध्य बिंदु तम/शक्ति विपुल क्षमता वाले ये/ एक-एक को स्थिर हो देखो/इच्छा, ज्ञान, क्रिया वाले ये ॥

समरसता : इस काव्य के अंत में समरसता का दर्शन प्रसाद ने करवाया है जो प्रत्यभिज्ञा दर्शन का ही एक सिद्धांत है । समरसता का तात्पर्य है आत्मा-परमात्मा का मिलन । जिस प्रकार नदी समुद्र मिलकर समरसता प्राप्त कर लेती है उसी प्रकार कामायनी में भी समरसता और आनंदवाद की स्थापना हुई है । आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी का भी कहना है कि प्रसाद कामायनी में समरसता मूलक दर्शन की स्थापना की है । मनुष्य जीवन की विषमताओं के निवारण के लिए उन्होंने प्राचीन भारतीय दर्शन के समन्वय प्रधान रूप के आधार पर आनंद सर्ग की व्याख्या की है – हम भूख प्यास से जाग उठे/ आकांक्षा तृप्ति समन्वय में/रति काम बने उस रचना में/जो रही नित्य यौवन वय में ॥

आनंदवाद : भारतीय दर्शन में आनंद को ही जीवन प्रमुख लक्ष्य स्वीकार किया गया है । प्रसाद के आनंदवाद का आधार भी शैवागमों का प्रत्यभिज्ञा दर्शन है । कामायनी के आनंदवाद पर बौद्ध दर्शन का भी प्रभाव है । प्रसाद ने तैत्तरीय उपनिषद के अयमात्मा परानंद के अनुसार आत्मा को ही आनंद का स्वरूप माना है । उनके अनुसार आनंद केवल वैयक्तिक नहीं है बल्कि विश्व मंगल की कामना के लिए भी आनंद अनिवार्य है । कामायनी में आनंदवाद का आधार आत्मानंद है । इसी आत्मानंद का स्वरूप कामायनी के आनंद सर्ग में दिखाई देता है- सब भेद-भाव भुलवा कर दुख-सुख को दृश्य बनाता/ मानव कह रे ! यह मैं हूँ, यह विश्व नीड़ बन जाता ।“ कामायनी का अंत भी समरसता और आनंद रूप में ही होता है-समरस थे जड़ या चेतन सुंदर साकार बना था/ चेतनता एक विलसती आनंद अखंड घना था ॥ इनके अतिरिक्त ब्रह्म चिंतन, सृष्टि, नियतिवाद, कर्मवाद आदि दर्शन से संबंधित चिंतन कामायनी में विद्यमान है ।

10.4.4 कामायनी का आधुनिक संदर्भ :

वर्तमान समय में वैज्ञानिक उन्नति हुई है । जीवन में सुख-सुविधा के साधनों की कोई कमी नहीं है । लेकिन मानव निरंतर आनंद की खोज करता रहता है । उसके पास सब कुछ होने

पर भी तृप्ति नहीं मिलती । जीवन में वह खुशी नहीं होती है जो वास्तविक रूप में होनी चाहिए । जब हमारे जीवन में सिर्फ़ साधनों का और यंत्रों का महत्व रह जाता है, तब विनाश निश्चित है । कामायनी के प्रारंभ में जल प्रलय का वर्णन है जिसका मूल कारण देवताओं का भोग विलास, अहंकार, सुख-सुविधा का चरम पर होना ही था । प्रसाद ने यह संदेश दिया है कि भौतिक समृद्धि प्राप्त कर लेना जीवन का लक्ष्य नहीं है । भौतिक समृद्धै मानव को अकर्मण्य और अहंकारी बनाता है । मृत्यु जीवन का अंतिम सत्य है । मनु को लगता है कि जीवन नश्वर है तो वे अकर्मण्य हो जाते हैं । उन्हें लगता है कि जीवन की समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता तथा व्यक्ति को सफलता नहीं मिल सकती-किंतु जीवन कितना निरुपाय/ लिया है देख नहीं संदेह / निराशा है जिसका परिणाम / सफलता का वह कल्पित नेह ॥ यह पलायनवादी वृत्ति व्यक्ति को अकर्मण्य बनाती है । श्रद्धा के द्वारा मनु को जीवन की सत्यता का बोध कराया जाता है और कर्मण्य बनने की प्रेरणा दी जाती है । श्रद्धा मनु से कहती है- काम मंगल से मंडित श्रेय/सर्ग इच्छा का है परिणाम/ तिरस्कृत कर उसको तुम भूल/बनाते हो असफल भव धाम ॥ कामायनी में यह बताया गया है कि व्यक्ति के जीवन में तभी आनंद प्राप्त हो सकता है जब व्यक्ति हृदय और बुद्धि का संतुलित समन्वय करे । अत्यधिक भावुक व्यक्ति भी आनंद की प्राप्ति नहीं कर सकता और कोरे बुद्धिवाद से भी आनंद नहीं मिल सकता । इच्छा, ज्ञान और क्रिया के बीच समन्वय जरूरी है । नारी के प्रति समाज में जो दृष्टिकोण थी उसे भी बदलने का संदेश प्रसाद ने दिया है । नारी उपभोग की वस्तु मात्र नहीं है अपितु वह प्रेरणा का उत्स है, पुरुष को सही मार्ग पर प्रवृत्त करने वाली नारी ही है । मानवता का संदेश कामायनी का मूल उत्स है जो आधुनिक युग में धीरे-धीरे खतम सा हो रहा है । मनुष्य का एक दूसरे के प्रति जो भावना-संवेदनाएँ हैं, उसमें भी बदलाव होने लगा है । व्यक्ति स्वार्थपरक हो रहा है । लेकिन प्रसाद इसके विपरीत वैसुधैव कुटुंबकम की भावना कॊ वाणी देते हैं । इस प्रकार कामायनी में आधुनिक संदर्भों को अभिव्यक्ति देते हुए मानव कल्याण तथा विश्व कल्याण की भावना को इंगित किया गया है ।

10.4.5 कामायनी का भावपक्ष एवं कलापक्ष :

कामायनी के प्रारंभिक सर्गों में श्रृंगार रस का तथा बाद के सर्गों में शांत रस की पुष्टि हुई है । श्रृंगार के संयोग पक्ष एवं वियोग पक्ष दोनों का प्रयोग किया गया है । विप्रलंभ या वियोग श्रृंगार का एक उदाहरण- मधुर विरक्ति भरी आकुलता/ घिरती हृदय गगन में / अन्तर्दाह स्नेह का तब भी / होता था उस मन में । करुणा, वीर, वात्सल्य रसों का भी समाहार हुआ है । अंत में शैवागम के अनुसार आनंदरस का प्रतिष्ठापन हुआ है । प्रेमभाव, प्रकृति चित्रण, वसंत का आगमन, रूप वर्णन आदि का सही और सटीक वर्णन किया गया है । अलंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण, अनुप्रास आदि अलंकारों का यथोचित प्रयोग हुआ है । अप्रस्तुत योजना के अंतर्गत सुंदर उपमान प्रयुक्त हुए हैं । भाव-निरूपण के लिए सजीव उपमानों प्रतीकों और रूपकों का प्रयोग हुआ है । शास्त्रवर्णित अलंकारों का भरमार नहीं है । भाव अनुभूति और रस के ही

सहकारी होकर अलंकार प्रयुक्त हुए हैं जिनसे काव्य में सुंदरता के साथ-साथ मार्मिकता आ गई है ।

प्रतीकात्मकता : प्रसाद ने सांकेतात्मक शैली में कामायनी की रचना की है । अत: इसमें प्रतीकात्मकता का उचित प्रयोग हुआ है । प्रसाद ने परंपरागत प्रतीकों के साथ-साथ नवीन प्रतीकों का भी भरपूर प्रयोग किया है । कामायनी के प्रमुख चरित्र भी प्रतीकात्मक हैं । श्रद्धा हृदय का प्रतीक है, मनु मन का प्रतीक है और इडा बुद्धि का प्रतीक है । पात्रों का चित्रांकन मनोवैज्ञानिक ढंग से किय गया है । हिमगिरि, मानसरोवर, कैलास आदि प्रतीकात्मक हैं । भावलोक, कर्मलोक, ज्ञानलोक तीन लोकों के प्रतीक हैं जिनके समन्वय से आनंद की प्राप्ति होती है ।

उपचारवक्रता : इसका तात्पर्य है, दो वस्तुओं के मध्य साम्य दिखाना जो कि कामायनी में सहजता से मिलता है। मूर्त के लिए अमूर्त और अमूर्त के लिए मूर्त का सम्य इसके अंतर्गत होता है । नक्षत्रों का वर्णन तम के सुंदरतम रहस्य के रूप में हुआ है-तम के सुंदरतम रहस्य है/ कांति किरण तारा । मृत्यु को हिमानी की तरह शीतल बताया गया है - मृत्यु अरी चिर-निद्रे ! तेरा/ अंक हिमानी सा शीतल ।

छंदविधान : कामायनी में अनेकों छंदों का प्रयोग मिलता है । फिर भी इसके अधिकांश छंद मात्रिक छंद हैं । तीन प्रकार के छंदों को हम कामायनी में देख सकते हैं- शास्त्रीय छंद, मिश्र छंद और प्रसाद जी के निजी छंद । चिंता, आशा, स्वप्न तथा निर्वेद सर्गों में ताटक छंद का प्रयोग हुआ है । श्रद्धा सर्ग में १६ मात्राओं वाले श्रृंगार छंद का प्रयोग हुआ है । काम तथा लज्जा सर्ग में पदपादा कुलक, वासना में रूपमाला, कर्म में सार छंद, संघर्ष में रोला छंद का प्रयोग हुआ है जो कि शास्त्रीय छंदों के अंतर्गत आते हैं । ईर्ष्या तथा दर्शन में मिश्र छंद का प्रयोग हुआ है । इडा, रहस्य तथा आनंद सर्गों में प्रसाद जी के निजी छंद प्रयुक्त हुए हैं ।

भाषा –शैली : भाषा भावानुकूल है । चित्रात्मक है । अंधकार, कालिमा, घनश्याम, उल्का, भीषण रव, गर्जन आदि से चिंता के शोक की अभिव्यक्ति हुई है । भाषा और भाव एक दूसरे के पूरक के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । संगीतमय भाषा का प्राधान्य है । चित्रों की प्रधानता है । गीतों का समावेश है । श्रद्धा सर्ग में नाटकीयता का दर्शन होता है । भाषा एवं शैली के संदर्भ में प्रसाद के जितने भी गुण-विशेषताएँ हैं, उन सभी का प्रयोग कामायनी में हुआ है ।

बोध प्रश्न :

1. आपकी दृष्टि में इस महाकाव्य के लिए कामायनी शीर्षक सार्थक है या नहीं ?

----

2. प्रत्यभिज्ञा दर्शन में आत्मा को क्या कहा गया है?

----

3. क्या कामायनी में नारी शिक्षा एवं नारी मुक्ति के स्वर गूंजते हैं?

10.5 : पाठ का सार

पूरे पाठ के अध्ययन से आप समझ गए होंगे कि प्रसाद अपने आयु के कम वर्षों में उत्कृष्ट रचनाओं का न केवल सृजन किया है बल्कि पूरे विश्व को मानवता का संदेश दिया है। मानव को अपना जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिए, इसका प्रतिपाद्य कामायनी में हुआ है। इच्छा, ज्ञान और क्रिया का संतूलन अनिवार्य है तभी जीवन में समरसता की स्थापना हो सकती है। आनंद के बिना मनुष्य का जीवन शून्य के बराबर है। सुख-सुविधा के सारे साधन उपलब्ध होने पर भी यदि जीवन में आनंद नहीं हो तो ऐसे सुख सुविधा के होने का क्या लाभ। हृदय और बुद्धि का संतूलन आवश्यक है। मानव संवेदनशील होकर अपना जीवन व्यतीत करें, मनुकुल की रक्षा तभी संभव है। आपसी प्रेम, सौहार्द, भाईचारे से ही वसुधैव कुटुम्बकम की स्थापना की जा सकती है। आपसी भेदभाव को मिटाकर एक दूसरे के साथ समरस पूर्ण जीवन कामायनी का मूल प्रतिपाद्य है।

10.6 पाठ की उपलब्धियाँ

कामायनी के कथानक को अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
कामायनी के रचना के उद्देश्य को समझ गए होंगे।
कामायनी के चयनित अंशों की व्याख्या कर पाएंगे।
कामायनी से संबंधित दर्शन, भाषा शैली, शीर्षक की सार्थकता पर आप स्वयं चिंतन कर सकते हैं।

10.7 शब्द संपदा

हृदयांतराल : हृदय के अंदर
शैथिल्य : शिथिल, नष्ट
लाक्षणिक : लक्षणा शब्द शक्ति, जिससे लक्षण प्रकट हो
वक्रता : कुटिलता और धूर्तता
प्रत्यभिज्ञा दर्शन : काश्मीरी शैव दर्शन की एक शाखा, शाब्दिक अर्थ- पहले से देखे हुए को पहचानना
महाचिति: अत्मा (प्रत्यभिज्ञा दर्शन के अनुसार)
इंगित करना : सूचित करना

___

10.8 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए ।

1 . कमायनी का कथानक अपने शब्दों में लिखिए ।

2. चिंता सर्ग का सारांश अपने शब्दों में लिखिए ।

3. प्रसाद ने श्रद्धा सर्ग में कामायनी की सुंदरता का वर्णन किस प्रकार किया है ? अपने शब्दों में लिखिए ।

4. कामायनी शीर्षक आपके अनुसार क्या ठीक है ? या कोई अन्य नाम दिया जा सकता था? तर्क सहित उत्तर लिखिए ।

5. कामायनी की काव्यगत सौंदर्य पर प्रकाश डालिए ।

6. क्या कामायनी को आधुनिक युग के महाकाव्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है ? कारण स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 100 शब्दों में दीजिए ।

1. मनु की चिंता का मूल कारण क्या है?

2. मनु का चरित्र वर्णन अपने शब्दों में कीजिए ।

3. इडा के बारे में अपने शब्दों में लिखीए ।

4. श्रद्धा सर्ग की विशेषताओं को अपने शब्दों में लिखिए ।

5. “चिंता करता हूँ...............दुख” की- व्याख्या कीजिए।

6. “विस्मृति...................भर दे”- की व्याख्या कीजिए ।

7. “कौन तुम...................अभिषेक”- की व्याख्या कीजिए ।

8. “नील परिधान......................गुलाबी रंग” की व्याख्या कीजिए ।

9. चिंता सर्ग की कथा को अपने शब्दों में लिखिए ।

10. श्रद्धा पर टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. श्रद्धा का शाब्दिक अर्थ

अ) इच्छा का घर आ) गर्भवती स्त्री इ) दोनों

2. कामायनी का अर्थ

अ) इच्छा का घर आ) नदी का तट इ) कोई नहीं

3. घनश्याम

अ) काले-काले बादल आ) सफेद बादल इ) इनमें से कोई नहीं

4. कामदेव की पुत्री

अ) कामायनी आ) श्रद्धा इ) दोनों

5. प्रत्यभिज्ञा दर्शन

अ) समरसता आ) आनंदवाद इ) दोनों

II रिक्त स्थानों की पूर्ति .

1 .भारतीय मिथक के अनुसार ....प्रेम की देवता है।

2. मनु को..............................शाप दिया।

3. मनु..........................के उत्तुंग शिखर पर बैठे थे।

4. मनु नीचे.........................को देख रहे थे।

5. जलप्रलय का मूल कारण .... की विलासपूर्ण जीवन था।

III सुमेल कीजिए

1. रहस्यवाद बुद्धि का प्रतीक
2. सारस्वत प्रदेश कामायनी का अंतिम सर्ग
3. इडाप्रसाद का निबंध
4. मानव सरस्वती नदी का तट
5. अनंद श्रद्धा का पुत्र
6. कामायनी के सर्ग गर्भवती स्त्री

10.9 पठनीय पुस्तकें .

कामायनी, जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन
प्रसाद और कामायनी (मूल्यांकन का प्रश्न) डॉ नगेंद्र
कामायनी विमर्श, डॉ हरिचरण शर्मा
हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र
कामायनी: कामायनीकार का रचना जगत और प्रत्यय, डॉ सुरेंद्र
प्रसाद साहित्य की समीक्षा, कैलाश नारायण अवस्थी, अनुभूति प्रकाशन, कानपुर

इकाई 11 : निराला : एक परिचय

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : निराला : एक परिचय
11.3.1 जन्म, पालन-पोषण और विवाह
11.3.2 निराला का व्यक्तित्व
11.3.3 निराला की साहित्यिक यात्रा
11.3.4 निराला जी का रचना संसार और चेतना
11.3.4.1 कृतित्व विवेचन
11.3.4.2 निराला : गीतकार
11.3.4.3 निराला की रचनाओ में चेतना
11.3.4.3.1 प्राकृतिक चेतना
11.3.4.3.2 मानवीय चेतना
11.3.4.3.3 राष्ट्रीय चेतना
11.3.4.3.4 रहस्यवादी चेतना
11.3.4.3.5 सामाजिक चेतना
11.3.4.3.6 सौन्दर्य चेतना
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियां
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

जीवन दृष्टा अनेक हुए हैं, जीवन से निराश होकर मृत्यु को आमंत्रण देनेवालों की भी कमी नहीं हैं लेकिन मृत्यु से पंजा लड़ाकर, जीवन के अनेक कष्टों के सामने डटकर खड़े रहनेवालों की कमी तो हैं। इसी कारण से ऐसे मनुष्यों को 'मृत्युंजय' कहा जाता है। निराला ऐसे ही 'मृत्युन्जय कवि' कहलाते हैं। श्रीमती महादेवी वर्मा ने कहा था 'उनका व्यक्तित्व उनके काव्य से कम निराला नहीं है। वह अत्यन्त जटिल और बहुत से विरोधों का सामंजस्य है।' प्रस्तुत इकाई में आप अध्ययन करेंगे कि निराला पर वेदान्त और स्वामी विवेकानंद का कितना प्रभाव था? इसके

साथ ही साथ उन्होंने तुलसीदास हो या कालिदास या फिर बंगाल के सुप्रसिद्ध कवि चंडीदास कैसे इन सब कवियों को निराला ने अपनी मौलिकता के द्वारा भिन्न प्रकार से न केवल समझ बल्कि उसे पाठकों तक भी पहुँचाया।

11.2 उद्देश्य

प्रस्तुत एकांकी को आपके पाठ्यक्रम में रखने का उद्देश्य यह है कि-

- निराला जी के व्यक्तित्व से आप परिचित हो सके।
- निराला की रचनाओं का ज्ञान आप प्राप्त कर सकें।
- निराला जी की रचनाओं की चेतना शैली से आप परिचित हो सकें।

11.3 मूल पाठ : निराला : एक परिचय

11.3.1 जन्म, पालन-पोषण और विवाह

भरे-पूरे परिवार में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी का जन्म हुआ था। अवध में अपना गाँव छोड़कर यह परिवार बंगाल की एक सियासत महिषादल में जाकर बस गया था। वन, प्रकृति, आम, नारियल, कटहल, बाँस के पेड़, तालाब, नदियां, बेला, जुही, हरसिंगार सब कुछ था लेकिन जनता भूखी थी। इसी स्थान पर वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में बालक सूर्यकुमार का जन्म हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमाण्डर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह की था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुया था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के ही थे उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित पिता के अत्यधिक कठोर अनुशासन में निराला का पालन-पोषण होने लगा। डॉ. रामविलास शर्मा ने अपनी 'निराला' नामक कृति में निराला जी की स्मृतियों का उन्हीं के मुख से वर्णन करवाते हुए लिखा है - 'मारते वक्त पिताजी इतने तन्मय हो जाया करते थे कि उन्हें भूल जाता था कि दो विवाहों के बाद पाए हूए एकलौते पुत्र को मार रहे थे। मैं स्वयं भी स्वभाव न बदलने के कारण मार खाने का आदि हो गया था। चार-पाँच साल की उम्र में अब तक एक ही प्रकार के प्रहार पाते-पाते सहनशील हो गया था और प्रहार की हद भी मालूम हो गई थी।' पिता से निराला को भले ही कठोर अनुशासन मिला पर यह नहीं कहा जा सकता कि पिता ने उनका ध्यान नहीं रखा। महिषादल राज्य बांग्ला-भाषी-प्रदेश था इसी कारण से निराला की आरंभिक शिक्षा बांग्ला भाषा में ही शुरू हुई। शिक्षा के साथ-साथ निराला जी को व्यायाम करने और कुश्ती लड़ने का भी शौक था। वे घुड़सवारी भी किया करते थे। बंगाल की धरती का एक विशेष गुण है वहाँ की संगीत साधना। निराला में भी इस विशेष गुण का संचार बचपन से ही होने लगा था। वे संगीत साधना भी करते थे। बालक निराला रामायण की चौपाईयां अपने सैनिक साथियों के साथ गा-गाकर पढ़ने में पारंगत हो चुके थे। निराला जी के स्वभावगत

वैचित्र्य के संबंध में डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय लिखते हैं, 'वैचित्र्य निराला जी की मुख्य पहचान है। जो इन्हें स्वभावतः जन्म से ही प्राप्त हुआ। शरीर, मेधा, साधना सब वैचित्र्यपूर्ण। जो बालक परीक्षा की कापी पर पद्माकर के चुहचुहाते छन्द लिख सकता है, पिता द्वारा बार-बार पिटे जाने पर भी दुराग्रह की रक्षा कर सकता है, जिसने जीवन में कविता के क्षेत्र में क्या कुश्ती के अखाड़े में भी कभी मुँह की न खाई, जो शिशु अवस्था में ही सारे वातावरण के लिए कौतूहल का विषय बनता है, जो एक साथ संगीतज्ञ, पहलवान, कवि, भाषाविद और दार्शनिक के ढाँचे में डाला नहीं जाता है, वह व्यक्तित्व असाध ही होगा'। इतना सब कुछ भी होने के बाद भी निराला ने कक्षा 9 के आगे पढ़ाई नहीं की। निराला ने स्वयं इस बारे में स्वयं ही लिखा है, 'मैं कवि हो चल था। फलतः पढ़ने की आवश्यकता न थी। प्रकृति की शोभा देखता था। कभी-कभी लड़कों को भी समझाता था कि इतनी बड़ी किताब सामने पड़ी है... किताब उठाने पर और भी होता था, रख देने पर दुने दबाव से फेल हो जाने की चिंता, फलतः कल्पना पृथ्वी-अंतरिक्ष पार करने लगी। कल्पना की वैसी उड़ान आज तक नहीं उठी।'

निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। पत्नी के कारण से निराला के व्यक्तित्व में काफी परिवर्तन आया। हिन्दी काव्य रचना के क्षेत्र में अपनी पत्नी की प्रेरणा से ही वे आए थे। डॉ. बच्चन सिंह का लिखना है, 'सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। पर दुखद बात यह है कि निराला केवल 21 वर्ष के थे उसी समय एक पुत्र और पुत्री उपहारस्वरूप देकर एनफ्लुएंजा की बीमारी में उनकी पत्नी का देहांत हो गया। इसके बाद से ही निराला के जीवन का असली संघर्ष शुरू हुआ और यह संघर्ष जीवन भर चलता रहा।

बोध प्रश्न

- निराला के पिता का नाम क्या था?
- निराला का जन्म किस दिन हुआ?
- निराला का पत्नी का नाम क्या था?
- हिन्दी काव्य क्षेत्र में किसके प्रेरणा से निराला का पदार्पण हुया?

11.3.2 निराला का व्यक्तित्व

निराला का जन्म ऐसे घर में हुआ था जहाँ लोग राम और कृष्ण के उपासक थे। सामाजिक बंधनों और नियमों को महत्व प्रदान किया जाता था और किसी भी प्रकार के विद्रोहों से यह परिवार बहुत दूर रहता था। लेकिन 'निराला' में बचपन से ही जिज्ञासा, विद्रोह और नवीन के प्रति आकर्षण के कोई कमी नहीं थी। सन् 1920 तक रवीन्द्रनाथ ठाकुर केवल बंगाल में ही नहीं समूचे भारत में महाकवि और विश्व कवि के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। बंग-भंग आंदोलन

का रवीन्द्रनाथ पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। वे नए राष्ट्रीय आंदोलन के समर्थक थे और चाहते थे कि सभी साहित्यकार नए राष्ट्रीय आंदोलन को आगे बढ़ाए। 'निराला' पर रवीन्द्रनाथ के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सहयोग से 'समन्वय' का संपादकत्व प्राप्त करने के बाद निराला ने राम कृष्ण परमहंस की 'भाव-साधना' और विवेकानंद के व्यावहारिक अद्वैतवाद का गहन अध्ययन किया था। एक और रवीन्द्रनाथ की राष्ट्रीय विचारधारा तो दूसरी ओर परमहंस और विवेकानंद की दार्शनिकता का प्रभाव सब कुछ मिलाकर निराला का व्यक्तित्व अपने आप में अनोखा बन चुका था। डॉ. धनंजय वर्मा जी का निराला के व्यक्तित्व के बारे में कहना था कि, 'प्रतिभा, पांडित्य, तर्क-शक्ति और संगीत के साथ सुदृढ़, सबल और ऊंचा सुंदर शरीर जैसा विवेकानंद का था उससे काम निराला का नहीं। स्वामी जी अपने शैशवावस्था में जीवन के स्वच्छन्द, अविराम प्रवाह के हिमायती थे और निराला का तो यह जन्म-जात स्वभाव रहा है'।

साहित्यकार के रूप में भी निराला मस्त मौला और फक्कड़ थे। साहित्य उनकी आजीविका का साधन भी थी लेकिन उन्होंने अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साहित्य साधन की गुणवत्ता के साथ समझौता नहीं किया। उन्होंने इस विषय में स्वयं ही लिखा है, 'साहित्य मेरे जीवन के उद्देश्य है, जीने का नहीं। यह सच है कि मैं जीता भी अपने साहित्य से हूँ, किन्तु वह मेरे जीवन का साधन मात्र नहीं। जो मैं नहीं लिखना चाहता, वह चाहे भूखों मार जाऊँ, नहीं लिखूँगा और जो मैं लिखना चाहता, वह लाखों रुपए के बदले में भी उसे न लिखने की बात न सोचूँगा'। साहित्यकार के रूप में उनकी सबसे पहली विशेषता है- उनका निर्माणकौशल। किसी भी रोमांटिक कवि में विषय वस्तु पर ऐसा दृढ़ नियंत्रण न मिलेगा, जैसा निराला में देखने को मिलता है। चाहे छोटा गीत हो, चाहे मुक्तक या फिर 'राम की शक्तिपूजा' जैसी नाटकीय कविता, उनका विषय निर्वाह देखते ही बनता है। 'जुही की कली में' जुही के स्नेह-स्वप्नमग्न होने से लेकर 'खिली खेल रंग, प्यारे संग' की परिणति का पूरा चित्र है। साहित्यकार के रूप में उनकी दूसरी विशेषता है- उनकी चित्रमयता। उनकी भाषा भले ही जहाँ-तहाँ कठिन हो लेकिन जहां वे चीते आँकते हैं वहाँ उनकी रूपरेखा बहुत ही स्पष्ट और सौन्दर्य आकर्षक बनने लग जाता है। इन चित्रों में प्रकृति के दृश्य, नारी-पुरूष की भंगिमाएं, मत आदि के प्रतीक सभी अपनी रूपमयता से पाठक को मुग्ध करने में सक्षम है। साहित्यकार के रूप में उनकी तीसरी विशेषता है- न्यूनतम रूप सामग्री का उपयोग। निराला ने अपनी रचनाओं में कहीं भी बात को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहा। गद्य हो चाहे पद्य उनकी शब्द योजना हमेशा गठी हुई रही। निराला ने कल्पना और यथार्थ दोनों का सहारा लिया लेकिन विषय को अकारण जटिल नहीं बनने दिया। निराला ने साहित्यकार के रूप में हिन्दी भाषी जनता को जिस प्रकार से सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा यह उनका युगांतकारी योगदान ही है। निराला के रचनाकाल के समय में दूसरी भाषाओं के लोगों से अक्सर यह सुनने को मिलता था 'हिन्दी में क्या है?' निराला ने इस मनोवृत्ति के विरुद्ध

संघर्ष किया। उन्होंने नवीन शैलियों की सृष्टि की। जहाँ उन्होंने 'जुही की कली' में 'मुक्त छन्द' को अपनाया वहीं 'गीतिका' में ऐसे गीतों को लिखा जहाँ पाठक को प्रत्येक शब्द के साथ धीरे-धीरे आगे बढ़ना होता है। जैसे एक पंक्ति देखिए-

'प्रात तव द्वार पर,
आया जननि नैश अंध पथ पार कर'-

अंग्रेजी में 'एनजैबमेंट' की एक परंपरा है अर्थात, एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति में बिना विराम पहुँच जाना, निराला ने इस शैली को भी अपनाया। जिससे हिन्दी कविता की दिशा ही बदल गई। 'सरोज स्मृति' की निम्न पंक्तियों को यहाँ देखना तर्कसंगत होगा-

'इससे पहले आत्मीय स्वजन
सस्नेह कह चुके थे, जीवन
सुखमय होगा, विवाह कर लो
जो पढ़ी-लिखी हो-सुंदर हो'।

उन्होंने हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने के लिए नए प्रयोग तो किए ही साथ ही साथ उन्होंने अपने ही देश के उन नेताओं के साथ भी लोहा लिया जो हिन्दी को घृणा की दृष्टि से देखते थे। निराला विद्रोह और परिवर्तन के कवि रहें व्यक्तिगत जीवन को या साहित्यिक उन्होंने अन्याय, अविचार आदि के सामने कभी अपना सर नहीं झुकाया।

बोध प्रश्न

- निराला के घर के वातावरण कैसा था?
- निराला का स्वभाव बचपन से ही कैसा था?
- निराला किनके विचारों से प्रभावित थे?
- साहित्यकार के रूप में निराला का व्यक्तित्व कैसा था?

11.3.3 निराला की साहित्यिक यात्रा

विद्यार्थियो! अभी ऊपर के खंड में हमने पढ़ा निराला अपनी जीविका के लिए साहित्य रचना पर निर्भर थे लेकिन अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वे साहित्य रचना के साथ समझौता करने को तैयार नहीं थे। ऐसे में आसानी से यह समझा जा सकता है कि जब उन्होंने साहित्य साधना के क्षेत्र में प्रवेश किया तो उन्हें कितने संघर्षों का सामना करना पड़ा होगा। उनकी रचना 'जूही की कली' को प्रतिष्ठित सम्पादकों ने कई बार अस्वीकृत कर दिया। सन् 1935 में निराला ने सुमित्रानंदन पंत के ऊपर बड़ा सुंदर लेख लिखा था लेकिन वह कभी छप नहीं सका। इसी तरह से पं. महावीरप्रसाद द्विवेदी पर भी उनके द्वारा लिखित

संस्मरणात्मक आलेख सदा के लिए बिना छपे ही नष्ट हो गया। संपादकों द्वारा वापस किए गए रचनाओं का जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है -

"लौटी रचना लेकर उदास,
ताकता हुआ मैं दिशाकाश,
बैठ प्रांतर में दीर्घ प्रहर,
व्यतीत करता था गुण गुण कर,
संपादक के गुण; यथाभ्यास,
पास की नोचता हुआ घास,
अज्ञात फेंकता इधर-उधर,
भाव की चढ़ी पूजा उन पर"

सन् 1920 की 'सरस्वती' में बांग्ला और हिन्दी व्याकरण पर उनका एक तुलनात्मक आलेख प्रकाशित हुआ था। यह अपने आप में परिमार्जित पुष्ट आलेख था। यहाँ से निराला जी को पहचान मिली। इसके बाद ज्ञान-मण्डल काशी में काम दिलाने के लिए सन् 1921 में महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने कोशिश की थी। इसलिए निराला के साहित्य जीवन का आरंभ सन् 1920 से मानना गलत न होगा। सन् 1923 में 'मतवाला' निकला और उसमें वे 'निराला' नाम के साथ ही साथ श्रीमान गरगजसिंह वर्मा, साहित्य शार्दूल, जनाबआली नाम से रचनाएं लिखा करते थे। कवि सम्मेलनों में भी वे अब जाने लगे थे। सुधा, माधुरी आदि के कारण उन्हें पारिश्रमिक भी मिलने लगा था लेकिन फिर भी उनकी मौलिक पुस्तकें अभी तक नहीं आई थी। उनकी पहले कविता संग्रह सन् 1929 में प्रकाशित हुई। इस तरह से सन् 1919 से 1929 तक उन्हें 10 साल पुस्तक प्रकाशन के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी। डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला के काव्य साधना को लेकर 'राग-विराग' नामक पुस्तक का सम्पादन किया था। शर्मा जी ने कविवर निराला की समूची काव्य यात्रा को प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से तीन भागों में विभाजित किया था। सन् 1921 से लेकर सन् 1936 तक पहला पड़ाव। दूसरा पड़ाव सन् 1937 से लेकर सन् 1946 तक चलता रहा। 1946 से लेकर 1950 तक के समय में निराला ने कुछ समय तक साहित्य रचना से अवकाश लिया। सन् 1950 से लेकर 1961 तक का कालखंड उनका तीसरा पड़ाव रहा। सन् 1931 के आरंभ में निराला जी का पहला उपन्यास 'अप्सरा' प्रकाशित हुआ। 'अप्सरा' में आजकल के सिनेमा-कथानकों के बहुत से गुण मौजूद है। रोमांस के साथ देश सेवा का भाव भी विद्यमान है। विरोधियों के विरोध के बाद भी 'अप्सरा' को काफी लोकप्रियता मिली। दूसरे महायुद्ध का समय निराला जी के प्रयोगों का समय रहा है। इस काल सम्पूर्ण विश्व और भारत ने बहुत कुछ देखा। बंगाल में ऐसा अकाल पड़ा जो कभी किसी ने न देखा और न सुना। सन् 1942 में अंग्रेजों ने कांग्रेसी नेताओं को जेलों में ठूसना शुरू किया, साहित्यकारों पर भी पावंदी बढ़ने लगी। बहुत सारे साहित्यकारों ने लिखना भी बंद कर दिया और कुछ नए

प्रयोग करने लगे। ऐसे समय 'निराला' कैसे लिखना बंद कर सकते थे। उन्होंने भी 'व्यंग्यात्मक शैली' में शुरू किया। उनकी व्यंग्यात्मक शैली में रचित रचनाओं में 'कुकुरमुत्ता' की विशेष चर्चा हुई। उनसे पहले किसी ने 'कुकुरमुत्ता' को विषय बनाकर न तो लिखने के बारे में सोच और न ही 'कुकुरमुत्ता' को शीर्षक बनाने का साहस किसी ने दिखाया। यह काम तो केवल 'निराला' ही कर सके। देखिए पंक्तियाँ -

'एक थे नव्वाब,
फ़ारस से मंगाये थे गुलाब।
बड़ी बाड़ी में लगाए
देशी पौधे भी उगाए
रखे माली कई नौकर
गज़नवी का बाग मनहर
लग रहा था'

'मैं कुकुरमुत्ता हूँ,
पर बेन्ज़ाइन वैसे
ओमफलस और ब्रह्मावर्त
वैसे ही दुनिया के गोले और पर्त
जैसे सिकुड़न और साड़ी,
ज्यों सफाई और माड़ी
कास्मोपालीटन और लीटन।
जैसे फ्रायड और लीटन।
फेलसी और फलसफा।
जरूरत हो और रफ।
सरसता में फ्राड
केपीटल में जैसे लेनिनग्राड
सच समझ जैसे रकीब
लेखकों में लंठ जैसे खुशनसीब'।

इतना ही नहीं इलाहाबाद में विद्यार्थियों पर पुलिस का आक्रमण होने पर उन्होंने कजली गीत लिखी -

'युवक जनों की है जान खून की होली जो खेली'।

यह गीत इस बात का भी संकेत है कि वे एक सफल जनगीतकार भी थे। 'यद्यपि निराला जी युद्धकालीन नई रचनाओं में पहले के स्केचों और कहानियों जैसे स्पष्टता नहीं है, फिर भी

राजनीतिक उलझन में कवि की चेतना किसका साथ दे रही है और किस जीवन को अपने साहित्य का लक्ष्य बना रही है, यह स्पष्ट है।' निराला जी के साहित्य को देखकर यह कहना गलत न होगा कि 'निराला जी के विकास की समूची परंपरा हमें सिखाती है कि इस ज्वार के साथ बढ़कर परिवर्तन की शुभ घड़ी लाने के लिए हिन्दी लेखकों और कवियों को आगे बढ़ना है'।

ये तो हुई पद्य की बात। निराला का गद्य साहित्य भी विविधता से भरा हुआ है। यहाँ इस विषय को बताना आवश्यक है कि निराला के गद्य लेक उनकी कविताओं से पहले ही प्रकाशित होने लगे थे। 'सरस्वती' में बांग्ला और हिन्दी के व्याकरण की तुलना करते हुए उन्होंने इस बात की पहले ही सूचना दे दी थी कि बंगला के माधुरी प्रशंसक होते हुए भी वे हिन्दी के सम्मान की बराबर रक्षा करेंगे। उनका दूसरा महत्वपूर्ण गद्य लेख बंगाल के ही एक कवि श्री चंडीदास पर था। 'प्रबंध प्रतिमा' में इसका रचनकाल सन् 1920 दिया गया है। निराला के गद्य में एक ओर छायावादी रोमांटिक भाव बोध है तो दूसरी ओर प्रगतिशील चेतना के यथार्थवादी प्रवृत्ति का संस्कार भी है। निराला का गद्य अन्य छायावादी कवियों के गद्य से अलग है। निराला का गद्य बुद्धिप्रवण और तर्कमूलक है। रामविलास शर्मा का इस संदर्भ में कहना है कि, 'गद्य लेखक निराला ने बालमुकुंद गुप्त और प्रेमचंद की परंपरा को और ऊँचा उठाया है। उसने गद्य लेखन को काव्य रचना के समान ही सरस और कलापूर्ण बना दिया है। हिन्दी भाषा की नई क्षमता निराला के गद्य में पर हुई'। निराला के गद्य साहित्य में बंगाल के नवजागरण के चेतना के प्रभाव को स्वाभाविक रूप में देखा जा सकता है। सिवकूमर मिश्र ने अपने लेख 'निराला और नवजागरण'में लिखा है, 'हिन्दी में नवजागरण की चेतना के सबसे पहले प्रवक्ता थे भारतेन्दु हरिश्चंद्र और कहना न होगा कि बंगाल के सारे प्रभावों के बावजूद निराला हिन्दी के उन रचनाकारों में पहली पंक्ति के हकदार हैं, जिन्होंने अपनी जमीन, अपनी रचनात्मक संवेदना और अपने औजारों के बल पर नवजागरण की भारतेन्दुकालीन चेतना को एक विरासत के रूप में न केवल संरक्षित किया है, अपने समय की चिंताओं और मुक्ति आंदोलन से जोड़ते हुए उसे समृद्ध और विकसित भी किया है'। निराला के गद्य में भारतेन्दु की नवजागरणकालीन चेतना का विकास किस प्रकार से हुआ उसका अंदाज़ा उनके द्वारा समय-समय पर लिखे गए - युगवतर भगवान श्री रामकृष्ण, वर्णाश्रम धर्म की वर्तमान स्थिति,कला और देवियाँ, हिन्दू विधवाओं पर अनाधिकार चर्चा, वतर्माण अंडों में महिलायें आदि लेखों को पढ़ने से स्वतः ही समझ आ जाता है। निराला ने अपने गद्य साहित्य के द्वारा परंपरा के रूढ़िगत और जड़ पक्ष पर जमकर प्रहार किया। निराला ने समाज में फैले जाति प्रथा का जमकर विरोध किया। 'बिल्लेसुर बकरिहा' उपन्यास के नायक को ब्राम्हण होने के बावजूद उन्होंने बकरी का व्यापार करते हुए दिखाया। निराला ने केवल कथा को लिखा नहीं बल्कि अपने पात्रों के माध्यम से उन्होंने अपने द्वारा झेले गए सामाजिक कुप्रथाओं का नग्न चित्रण करवाया। यह उनके गद्य साहित्य की अपनी अलग विशेषता है। निराला की कहानियों की चर्चा करते हुए गोपाल राय ने लिखा, 'निराला की

कहानियाँ बेहद आत्मप्रक है। आत्मवृत्ति में कल्पना की चाशनी डालकर समकालीन जीवन पर व्यंग्य करना निराला की अपनी विशेषता कही जा सकती है'। 'चतुरी चमार' कहानी को ही लीजिए। आत्मवृत्त शैली में लिखी गई इस कहानी में निराला ने बेबाक तरीके से सामाजिक रूढ़िओं का पर्दाफास किया है। निराला ने अपने पात्र से ये कहलवाया, 'समय-समय पर लोध, प्यासी, धोबी और चमारों का ब्रह्मा भोज भी चलता रहा। घृतपक्क मसालेदार मानस के खुशबू से जिसकी भी लार टपकी, आप निमंत्रित होने को पूछा। इस तरह मेरा मकान साधारण जनों का अड्डा, बल्कि house of commons हो गया'। निराला ने अपने गद्य साहित्य के द्वारा स्त्री के सबल रूप को अंकित करने का प्रयास बारम्बार किया। 'अलका', 'अप्सरा' आदि उपन्यासों की नायिकाएं जाने कैसी-कैसी विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए अंत में विजयी अवश्य हुई है। यह केवल उनकी विजय नहीं सदियों से कुंठित भारतीय स्त्रियों की ही तो विजय है। यह कहना गलत न होगा कि, 'हिन्दी कथा साहित्य में निराला ने छायावादी हीरोइनों का प्रवेश करवाया था।'

बोध प्रश्न

- निराला की पहली कविता संग्रह कब प्रकाशित हुई?
- निराला जी का पहला उपन्यास कब प्रकाशित हुआ?
- 'राग-विराग' पुस्तक का सम्पादन का प्रकाशन किसने किया?

11.3.4 निराला जी का रचना संसार और चेतना

निराला जी छायावादी काव्य चेतना के प्रमुख आधार स्तंभों में से एक थे। छायावादी काव्य चेतना को अनेक आलोचकों ने इस धरती की वस्तु नहीं माना। पर निराला की रचनाएं इस धरती की ही वस्तु थी। वास्तव में उनका समस्त व्यक्तित्व उनके व्यापक कृतित्व में समाहित होकर रह गया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी निराला के कृतित्व के समूचे आयाम को एक दृष्टि में देखते हुए विभिन्न चरणों में उसका विभाजन एवं मूल्यांकन इस प्रकार से किया है। वे लिखते हैं, 'निराला जी का काव्य-विकास 'परिमल-गीतिका' तक एक विशेष दिशा का निर्देशक है। उनकी 'राम की शक्ति-पूजा' और 'तुलसीदास आदि वृहत्तर काव्य-रचनाएं एक दूसरे उत्थान की प्रतिनिधि हैं। 'कुकुरमुत्ता' से लेकर 'बेला' और 'नए पत्ते' निराला जी का काव्य हास्य-व्यंग्य और प्रयोग की धाराओं में प्रवाहित हुआ है। उनका काव्य-निर्माण शांत-रस की भूमिका पर चल रहा है। भाषा के प्रयोग में भी अनेक परिवर्तन निराला जी ने किए हैं, यद्यपि उनकी एक शृंखला भी बनी हुई है। इन समस्त भिन्नताओं के रहते हुए निराला का काव्य-वैशिष्ट्य किसी सूक्ष्मदर्शी समीक्षक द्वारा ही आकलित हो सकता है। प्रायः लोग उनकी सम्पूर्ण रचनाओं का तारतम्य नहीं जान पाते। विविधता में एकता की पहचान नहीं हो पाती'।

11.3.4.1 कृतित्व विवेचन

गीतिका और परिमल में उनकी प्रारम्भिक उपलब्ध कृतियाँ हैं। निराला की कविताएं केवल गीतात्मक नहीं हैं बल्कि उन्होंने हिन्दी गीतों को नई परंपरा प्रदान की है। 'परिमल' की रहस्यवादी कविताओं को पढ़ने से विवेकानंद और रवीन्द्रनाथ का निराला पर कितना प्रभाव था। इसे हम स्वतः देख समझ सकते हैं -

'कहाँ _
मेरा अधिवास कहाँ?
क्या कहा?_
रुकती है गति जहाँ?
भला इस गति का शेष
संभव है क्या,
करुण स्वर का जब तक मुझमें
रहता है आवेश'?

'यह मतवाला-निराला' इस शीर्षक से हरिवंश राय बच्चन ने 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' और अपने निबंध संग्रह 'नये-पुराने झरोखे' में आलेख प्रकाशित किया। इस आलेख के द्वारा बच्चन जी ने निराला के कृतियों का विस्तार से विश्लेषण किया। निराला के प्रथम कविता संग्रह 'अनामिका' के बारे में बच्चन जी ने लिखा कि, 'अनामिका में निराला दो सुस्पष्ट, विभिन्न परंपराओं के अंतर्गत सृजन करते दिखाई पड़ते हैं- एक समृद्ध, परिपक्व,सुस्थिर, दूसरी निस्तेज कल की ओर प्रयोगात्मक एक बंगाली साहित्य की परंपरा, जिसमें रवींद्र और नजरुल रचनाएं कर रहे थे और दूसरी द्विवेदीयुगीन-इतिवृत्तात्मकता - जिसका परिचय उन्होंने 'सरस्वती' से प्राप्त किया था'। बच्चन जी ने निराला और पंत के लेखकीय गुणों के बीच तुलनात्मक अध्ययन भी किया और निष्कर्ष रूप में उन्होंने यह कहा भी कि छायावाद काल में भले ही पंत सबके लोकप्रिय कवि रहे हो लेकिन निराला ने छायावाद से बाहर आकर जिस प्रकार से पगतिवाद की जड़ों को सबल बनाया उसके लिए प्रत्येक प्रगतिवादी कवि उनका चिर ऋणी रहेगा। निराला विप्लव के भी कवि रहें। उनके विप्लव में वेदान्त की झलक को भी देखा जा सकता है। निराला ने मायारूपी संसार पर सबसे पहले विजय पाने की बात कही। इस संदर्भ में विप्लवी बादल की ओर हाथ उठाए खड़े कृषक के चित्र को देखना तर्कसंगत होगा -

'जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर'!

'सरोज स्मृति' में जिन लौटी रचनाओं को लेकर घास नोचने का जिक्र है, उन रचनाओं में 'जूही की कली' का नाम प्रमुखता के साथ लिया जाता है। लखनऊ रेडियो से अपना पहला गद्य

लेख विस्तार करते हुए उन्होनें उन परिस्थितियों का वर्णन किया था, जिनमें यह कविता लिखी गई थी। इस रचना में नवयुवक कवि का एक मनोरम सौन्दर्य-स्वप्न अंकित है। इस तरह का भुलावा जीवन में अनेक बार नहीं आता। जिसकी आयु कुछ घंटों में गिनी जा सकती है, उसे वर्ष भर पत्रांक में रखने पर भी तरुणी रूप में कल्पित किया है-

'विजन-वन-वल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी-स्नेह-स्वप्न-मग्न-
अमल-कोमल-तनु तरणी-जूही की कली,
दृग बंद किये,शिथिल,-पत्रांक में,
वासन्ती निशा थी;
विरह-विधुर-प्रिया-संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते हैं मलयानिल'।

'निर्दय उस नायक ने
निपट निठुराई की
कि झोंकों की झड़ियों से
सुंदर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मसल दिये गोरे कपोल गोल;
चौंक पड़ी युवती-
चकित चितवन निज चारों ओर फेर,
हेर प्यारे को सेज-पास,
नम्रमुख हँसी-खिली,
खेल रंग, प्यारे-संग'।

सौन्दर्य-संबंधी रचनाओं में 'पंचवटी' प्रसंग का भी उल्लेख कर देना उचित होगा जिसमें शूर्पनखा का बहुत ही भव्य चित्र अंकित है। जो लोग छायावाद को स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह कहते हैं, वे इस अत्यंत मांसल चित्र को देखें-

'देख यह कपोत कण्ठ
बाहुबल्ली कर सरोज
उन्नत उरोज पीन-क्षीण कटि-
नितंब-भर चरण सुकुमार-
गति मन्द मन्द,
छूट जाता धैर्य ऋषि मुनियों का,
देवों भोगियों की तो बात निराली है'।

निराला जी ने अपनी रचनाओं के द्वारा प्राचीन हिन्दी की रक्षा करने का प्रयास भी लगातार किया साथ ही नई हिन्दी की विकास के लिए भी वे सचेत थे। 'पल्लव' की भूमिका पर उनका मूल आक्षेप यही था कि पंत जी ने इस गौरव का निरादर किया है। लेकिन इस गौरव के बहाने जो लोग नई प्रगति का विरोध करते थे निराला जी उन्हें साफ कहा, 'पुराना साहित्य हिन्दी का बहुत अच्छा था,पर नया और अच्छा होगा, इस दृष्टि से उसकी साधना की जाएगी'।

विविधता निराला के व्यक्तित्व की एक प्रमुख विशेषता रही है। छायावाद के अध्यात्म एवं दर्शन का पूर्ण ऊर्जस्वित समन्वय निराला जी के रचनाओं की विशेषता रही है। फिर भी उनके कृतित्व पर मात्र दार्शनिकता का आरोप लगाना गलत होगा। उन्होंने साहित्य को हमेशा 'शक्ति' के रूप में देखा। ऐसी शक्ति जिसके द्वारा सत्य का संधान, विश्वकल्याण आदि महत्वपूर्ण कार्य हो सकते हैं। अपनी रचना 'प्रबंध-पद्म' में उन्होनें लिखा है कि, 'हम साहित्य में बहुत दिनों की भूली हुई उस शक्ति को आमंत्रित करना चाहते हैं जो अव्यक्त रूप में सब व्यक्त अपनी ही आँखों से विश्व को देखती हुई अपने ही भीतर उसे ढाले हुए है। पानी की तरह सहसा ज्ञान-धाराओं में बहती हुई स्वतंत्र किरण की तरह सब पड़ती हुई मधुर, उज्ज्वल, अम्लान, मृत्यु की तरह नवीन जन्मदात्री, सर्वशाखाओं की तरह अगणित प्रकार से फैली हुई प्रत्येक मूर्ति में चिर कमनीय है'।

स्पष्ट है कि काव्य-सृजन के क्षणों में निराला जी की दृष्टि व्यक्ति पर केंद्रित न रहकर समष्टिगत रही है। उन्होंने कवि को भावनाओं का गायक और संस्कृति का अग्रदूत स्वीकार किया है।

बोध प्रश्न

- किन कृतियों में निराला की प्रारम्भिक रचनाएं उपलब्ध है?
- निराला के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषता क्या रही?
- 'परिमल' की रहस्यवादी रचनाओं को पढ़ने से क्या समझ आता है?
- काव्य सृजन के क्षणों में निराला जी की दृष्टि किस पर केंद्रित रही?

11.3.4.2 निराला : गीतकार

निराला की रचनाओं के बारे में बात हो और उनके गीतों की अलग से बात न हो यह कैसे हो सकता है? अभी आपने ऊपर पढ़ा कि 'परिमल' और 'गीतिका' में संकलित उनकी कविताओं में गीतात्मकता अधिक है। सन् 1926 के बाद से ही उन्होंने गीत लिखने की चेष्टा प्रारंभ कर दिया था। 'गीतिका' की भूमिका में उन्होंने अपना विचार रखा है, 'हिन्दी गवैयों का सम पर आना मुझे ऐसा लगता था, जैसे मजदूर लकड़ी का बोझ मुकाम पर लाकर धम्म से फेंककर निश्चिंत हुआ'। उन्हें गीतों की प्रस्तुति इस प्रकार से अच्छी नहीं लगती थी। उन्होंने अपने गीतों का निर्माण इस प्रकार से किया कि उनमें स्वर-विस्तार के साथ-साथ सौन्दर्य का विशेष महत्व

रहा। निराला का गीतों का समाज के साथ सीधा संबंध रहा। क्योंकि उनका मानना था साहित्य के समान ही गीतों का भी समाज के प्रति एक व्यक्ति के साथ सीधा संबंध है। दुख के क्षण में दो पंक्ति गीत गुनगुनाकर कोई भी व्यक्ति अपने दुख को कुछ समय के लिए ही सही भूल सकता है। जिस तरह से रीतिकालीन परम्परा को तोड़कर छायावाद ने एक नई सजीव साहित्यिक धारा को जन्म दिया था उसी प्रकार से निराला के गीतों ने भी पुरानी गायिकी के स्थान पर नवीन गीत शैली को जन्म दिया जो काफी लोकप्रिय भी रहा।

'प्रेम चयन के उठा नयन नव
विधु चितवन, मन में मधु कलरव
मौन पान करती अधरासव
कण्ठ लगी उरगी।
मधुर स्नेह के मह प्रखरतर
वरस गए रस निर्झर झर-झर
उगा अमर अंकुर उर भीतर
सन् सृति भीती भगी'।

उपर्युक्त गीत को देखिए, हिन्दी में ऐसे गीत कम लिखे गए है जहाँ रूप में इतनी पूर्णता हो, जहाँ भावों में ऐसी संबद्धता हो और मनुष्य की भावनाओं को इतना ऊँचा स्थान दिया गया हो। हिन्दी गीत परम्परा को इस शिखर तक ले जाने के श्रेय निराला को देना गलत नहीं होगा। 'जूही की कली' की श्रृन्गारीक पंक्तियों की चर्चा किए बिना तो निराला के गीत शैली की गंभीरता को समझा ही नहीं जा सकता-

'विजन – वन – वल्लरी पर
सोती थी सुहाग – भरी – स्नेह – स्वप्न – मग्न –
अमल - कोमल - तनु तरुणी - जूही की कली,
दृग बंद किए, शिथिल, - पत्रांक में,
वासंती निशा थी;
विरह - विधुर - प्रिया - संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते है मलयानिल।'

रीतिकालीन कवियों ने नारी को अपदस्थ करके उसे मनोरंजन के लिए प्रस्तुत दासी बना दिया था, आध्यात्मिक कवियों ने कभी नारी को माया कहा तो कभी देवी स्वरूपा, छायावादी कवियों ने भी नारी को अप्सरा रूप में ही प्रस्तुत किया, कहीं-कहीं पुरुष की शक्ति के रूप में भी दिखाया लेकिन निराला के गीतों में नारी उसके नारीत्व के साथ न्याय करने का पूर्ण अवसर

मिला। इतना सब कुछ होने के बाद भी बड़े दुख की बात है कि गीतकार के रूप में निराला वे साधन और अवसर नहीं मिले जो सिनेमा स्टारों, सिनेमा गीतकारों को मिलता है।

बोध प्रश्न

- निराला ने गीत लिखने का प्रयास कब से प्रारंभ किया?
- गीतकार के रूप में निराला को क्या प्राप्त नहीं हुआ?
- रीतिकालीन कवियों ने स्त्री को किस रूप में प्रस्तुत किया?

11.3.4.3 निराला की रचनाओ में चेतना

निराला ने 'अधिवास' नामक कविता के पहले चरण में लिखा था-

"मैंने 'मैं' शैली अपनायी, देखा दुखी एक निज भाई,
दुख की छाया पड़ी हृदय में मेरे झट उमड़ वेदना आई"।

सहृदय संवेदना का मूल-तत्व कविवर निराला के कृतित्व में सर्वत्र विद्यमान है। यह संवेदना उनके समस्त सृजन का प्राण-तत्व है। उन्होनें चेतना की अवचेतन क्रियाशीलता को ही काव्य-सृजन का श्रेय प्रदान करते हुए लिखा था-

"तुम्हीं गाती हो अपना गान, व्यर्थ मैं पाता हूँ सम्मान"।

उनके समूचे कृतित्व में नव्य- क्षितिजों का उद्घाटन करती हुई, चेतना के विभिन्न आयाम को उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है-

11.3.4.3.1 प्राकृतिक चेतना

निराला ने न केवल प्रकृति को बहुत निकट से देखा था बल्कि उसके साथ निकटता कस संबंध भी स्थापित कर लिया था। डॉ. रामविलस शर्मा के शब्दों में, 'रूप से अधिक निराला को फूलों की गंध पर थी। जिस रूप में गुण-गंध- न हो, वह रूप ही क्या? चमक-दमक वाले निर्गंध फूलों को 'सीजनल फ्लावर' कहकर वह उन्हें भाव-शून्य कोमलकांत पदावली का प्रतीक बना देते थे'। निराला की काव्य-चेतना का उदय वास्तव में प्रकृति के मनोरम चित्रणों से ही होता है। साथ ही साथ प्रकृति चित्रणों में श्रृंगार भावना और नारी सौन्दर्य एक साथ का एकीकृत रूप दिखाई पड़ता है। वन-श्री और कोयल के पंचम स्वरों ने ही उन्हें गाने के लिए विवश कर दिया था। तभी तो अपनी प्रथम चरण की एक सरस गीतिका में वे कहते हैं-

"गूंज उठा पिक-पावन-पंचम, खग-कुल-कलरव मृदुल मनोहर।
सुख के भय काम्पती प्रणय-क्लम, वन-श्री चारुतरा"।

निराला ने करुणा की अवतारणा भी इसी प्रकृति की मनोरम पृष्ठभूमि पर ही की। उनकी 'विधवा' नामक कविता इस बात का सजीव प्रमाण है-

"वह क्रूर-काल-ताण्डव की स्मृति-रेखा-सी, वह टूटे तरु से छुटी लता-सी दीन"।

दुःख सुनता था आकाश, धीर-निश्चल समीप भी रुक कर"।

इस प्रकार की अपराजेय भावनाएं निराला की रचनाओं में देखना इसलिए भी संभव हो सका क्योंकि वे भी तो बिना रोए आजीवन मार ही खाते रहे।

निराला ने कहीं-कहीं प्रकृति चित्रण के द्वारा विभिन्न मुद्दों पर व्यंग्य भी किया है। प्रस्तुत संदर्भ में 'वन-बेला' कविता की पंक्ति को देखना सार्थक होगा। जहाँ बेला कवि से कहती है या फिर ये कहे कि कवि ने बेला से कहलवाया है-

'यह जीवन का मेल
चमकता सुघर बाहरी वस्तुओं को लेकर,
त्यों-त्यों आत्मा की निधि पावन, बनती पत्थर'।

11.3.4.3.2 मानवीय चेतना

निराला का जीवन अभाव का जीवन था लेकिन वे स्वयं दानी थे, अतः दान के नाम पर पाखंड पालने वाले, मनुष्यों की तुलना में जानवरों-वानरों को अधिक महत्त्व देनेवालों के प्रति उनका आक्रोश स्वाभाविक ही था। अपनी 'दान' नामक कविता में भिखारी का करूण चित्र अंकित करने के बाद वे दानियों के प्रति भी आक्रोश व्यक्त करते हैं । यह उनकी मानवीय चेतना का ही ज्वलंत रूप है-

"एक ओर पथ के कृष्ण-काय, कंकाल-शेष नर मृत्यु प्राय
बैठा सशरीर दैन्य-दुर्बल भिक्षा को उठी दृष्टि निश्चल"।

कविवर निराला ने मानवीय चेतना के अंतर्गत मनुष्य की चेतना की जागृति को महत्वपूर्ण माना है। 'राम की शक्ति-पूजा' नामक वृहत्तर कविता में राम के मानवीकृत स्वरूप के माध्यम से अपने जीवन- पथ में आनेवाले अवरोधों पर विक्षुण्ण- विषण्ण दिखाई देते हुए अपने आपको को धिक्कारते हुए कहने लगते हैं-

'धिक् जीवन जो पता ही आया है विरोध;
धिक् साधन जिनके लिए सदा ही किया शोध"।

पर यह ग्लानि अधिक समय तक उन्हें अपने कवच में बाँधकर न रख सका जागृति-संदेश का स्वर 'तुलसीदास' में मुखरित हो उठा-

'जागो जागो, आया प्रभात, बीती, वह बीती अंध रात;'
'होगा फिर से दुर्धर्ष समर जड़ से चेतन का निशि- बासर'।

11.3.4.3.3 राष्ट्रीय चेतना

दूसरे महायुद्ध का समय निराला के लिए प्रयोगों का समय रहा। युद्ध के पहले वर्षों में उन्होंने कुछ व्यंग्यात्मक कविताएं लिखी थी। इनमें 'कुकुरमुत्ता' की बहुत चर्चा हुई पर नई कड़ी

में 'महँगू मँहंगा रहा' का नाम भी जुड़ गया। हिंदुस्तान की राजनीति में जो नया अध्याय जुड़ गया था उसकी का व्यंग्यात्मक चित्रण प्रस्तुत कविता में किया गया। निराला की रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना यत्र-तत्र दिखाई पड़ती है। कहीं-कहीं तो उनकी राष्ट्रीय चेतना दार्शनिकता की धरातल में पहुँच गई है। जैसे 'तुम और मैं' कविता की प्रस्तुत पंक्तियाँ-

'तुम तुंग हिमालय शृंग और मैं चंचल-गति सुर-सरिता,
तुम विमल हृदय-उच्छवास, और मैं कान्त-कामिनी-कविता'।

निराला ने शिक्षा को राष्ट्रीय चेतना के साथ जोड़कर देखा तभी तो उन्होंने माँ सरस्वती से मुक्तस्वर में प्रार्थना की है कि -

'वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे!
काट अन्ध-उर के बन्धन-स्तर
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर;
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर
जगमग जग कर दे'!

निराला क्रांतिकारी कवि थे। उनकी क्रांति का लक्ष्य था ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति के साथ ही साथ जाति, वर्ण, धर्म आदि से संबंधित रूढ़ियों से भी मुक्ति पाना। निराला जी को राजनीतिज्ञों से कोई विशेष चिढ़ नहीं थी किन्तु वह साहित्यकार को राजनीतिज्ञ को ऊँचा स्थान देते थे।

11.3.4.3.4 रहस्यवादी चेतना

निराला-काव्य में रहस्यवादी चेतना और मुक्ति का स्वर एक साथ दिखाई पड़ता है। पर उनकी रहस्यवादी चेतना का मूल स्वर जायसी और कविगुरु रवीन्द्रनाथ के काव्य स्वरों के समान प्रेम-संयत है, ऐसी मान्यता 'राग-विराग' के संपादक डॉ. रामविलास शर्मा ने व्यक्त की है। निराला का स्वर रहस्यवादी चेतना के अंतर्गत नारी संबंधी निषेधों से मुक्त था। जहाँ तक मुक्ति का प्रश्न है, कविवर निराला के लिए 'आवागमन की मुक्ति एकमात्र मुक्ति नहीं है। वासना को मुक्ति-मुक्त त्याग में लागी, यामिनी जागी- यह पुरुष और स्त्री दोनों की मुक्ति है, इसी भौतिक संसार में'।

'हेर उर-पट, फेर मुख के बाल,
लख चतुर्दिक चली मन्द मराल,
गेह में प्रिय-स्नेह की जय-माल
वासना की मुक्ति, मुक्ता

त्याग में त्यागी'।

स्पष्ट है कि त्याग में ही कविवर निराला सभी प्रकार की मुक्ति स्वीकार करते हैं।

11.3.4.3.5 सामाजिक चेतना

छायावादी उपमाओं के बाद भी निराला की सामाजिक चेतना का स्वर स्पष्ट रूप में सुनाई पड़ता है। कलेजे को दो टूक करनेवाले 'भिक्षुक' कविता की जगह कोई नहीं ले सकता। नारी जो की समाज का महत्वपूर्ण अंग है उसकी पर निर्भरता को निराला कभी स्वीकार नहीं कर सके और जब-जब अवसर मिला उन्होंने नारी के सामर्थ्य का चित्रण अवश्य ही किया। 'बहू'कविता की पंक्तियों को यहाँ देखना तर्कसंगत होगा-

'मोतियों की मानों है लड़ी
विजय के वीर हृदय पर पड़ी'।

कविता 'कुकुरमुत्ता' में शोषित जन की पीड़ा दैन्य नहीं रहती बल्कि पूंजीपति के विरोध में आवाज उठाती है। 'कुकुरमुत्ता' को कवि ने शोषित जन का प्रतीक माना और गुलाब को पूँजीपति का। कब तक कोई किसी और के लिए लड़ सकता है? स्वयं को बचाने की इच्छा तो शोषित के मन में भी अन्य चाहिए। इसी बात का संकेत देते हुए ही तो 'कुकुरमुत्ता' 'गुलाब' से कह उठता है-

"अबे, सुन बे, गुलाब,
भूल मत जो पाई खुशबू, रंगोआब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतराता है केपिटलिस्ट!
कितनों को तूने बनाया है गुलाम,
माली कर रक्खा, सहाया जाड़ा-घाम',

'शाहों, राजों, अमीरों का रहा प्यारा
तभी साधारणों से रहा न्यारा'।

'रोज पड़ता रहा पानी
तू हरामी खानदानी'

'और अपने उग मैं
बिना दाने का चुगा मैं'

यहाँ साधारण सा पौधा 'कुकुरमुत्ता' अपना महत्व पहचानते हुए गुलाब को आड़े हाथों लेता है। साधारण जन को विशिष्ट जनों के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठानी चाहिए। यह भाव इन दोनों प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

11.3.4.3.6 सौन्दर्य चेतना

कवि निराला ने अपनी रचनाओं के द्वारा सौन्दर्य की एक नई परिभाषा स्थापित की। साहित्य में गोरी, आभूषणों से लदी स्त्री को ही महत्व मिलता रहा लेकिन निराला ने 'तोड़ती पथर' के द्वारा इस मिथ को बदल दिया-

'श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन, प्रिय- कर्म- रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार- बार प्रहार :-
'एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा:-
'मैं तोड़ती पत्थर!'

निराला ने प्रकृति को बहुत पास से देखा था इसे कारण से उनकी प्राकृतिक सौन्दर्य चेतना की भी अपनी एक अलग ही विशेषता है-

'शरत् की शुभ्र गन्ध फैली; खुली ज्योत्सना की सित शैली।
काले बादल धीरे-धीरे, मिटे गगन के चीरे-चीरे,
पीर गई उर आए पोर बदली द्युति मैली'।

अंत में श्री धनंजय वर्मा के विचार को यहाँ रखना गलत नहीं होगा। उन्होंने ने कहा है कि 'कुल मिलकर निराला जी का व्यक्तित्व (और कृतित्व भी) चिर विद्रोही और दार्शनिक भूमि के कारण असाधारण है तथा उनका काव्य उसी के अनुरूप मुक्त, स्वच्छन्द और प्रशांत है। हिन्दी के लिए निराला का व्यक्तित्व एक ऐतिहासिक उपलब्धि है और उनका काव्य उसी के अनुरूप युगांतकारी, युग की महान प्राप्ति'।

बोध प्रश्न

- 'कुकुरमुत्ता' कविता का मूल संदेश क्या है?
- 'कुकुरमुत्ता' और 'गुलाब' किसके प्रतीक है?
- 'तोड़ती पत्थर' कविता के द्वारा कवि ने किस मिथ को तोड़ा?

11.4 पाठ सार

विद्यार्थियो! प्रस्तुत एकांकी को पढ़ते हुए आप सब ने निराला के जन्मस्थान, पालन पोषण, विवाह आदि के बारे में जानकारी प्राप्त किया। आपने पढ़ा कैसे माँ की मृत्यु के बाद निराला का जीवन पिता के कठोर अनुशासन में बीता। यह अनुशासन मौखिक न रह कर

शारीरिक दंड के रूप में भी निराला को प्राप्त हुआ। मनोहरा देवी जी के साथ विवाह के बाद निराला का मानो पुनर्जन्म हुआ। पत्नी से न केवल उन्हें प्रेम प्राप्त हुआ बल्कि उनके भीतर के साहित्यकार को भी नई दिशा प्राप्त हुई। परंतु निराला का जीवन तो उनके नाम के समान ही निराला था तभी तो मात्र 21 वर्ष के आयु में उनकी पत्नी एक पुत्र और एक पुत्री उन्हें उपहार स्वरूप देकर स्वर्ग लोग सिधार गई और अब निराला जीवन युद्ध में बिल्कुल अकेले रह गए। कभी अकेले श्मशान में भटकते तो कभी अपनी साहित्यिक कृतियों को छपवाने के लिए संपादकों के दरवाजे में भटकते। धैर्य का ही सहारा था। इसी धैर्य के सहारे निराला की साहित्यिक यात्रा का प्रारंभ सन् 1920 से शुरू हुआ। इस यात्रा को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1. सन् 1921 - सन् 1936
2. सन् 1937 - सन् 1946
3. सन् 1950 - सन् 1961

सन् 1946 के कुछ समय से लेकर सन् 1950 तक के कुछ समय तक निराला ने साहित्य रचना से अवकाश लिया था इसलिए इस समय को उनके रचना यात्रा में नहीं जोड़ा जाता।

छात्रो! आप सब ने पढ़ा कि कैसे निराला के ऊपर स्वामी विवेकानंद, परमहंस और रवीन्द्रनाथ का प्रभाव रहा। साथ ही हरिवंश राय बच्चन ने निराला के साहित्यिक यात्रा को लेकर किस प्रकार से विश्लेषण किया इसकी भी विस्तृत जानकारी अपने प्राप्त की। वे स्वयं छायावादी युग के एक आधारस्तम्भ रहे लेकिन इसके बाद भी कुकुरमुत्ता को लेकर प्रयोग करने से भी वे कभी पीछे नहीं हटे। वे एक सफल जनगीतकार भी रहें। उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना, मानवीय चेतना, दार्शनिक चेतना, रहस्यवादी चेतना और सौन्दर्यवादी चेतना का स्वर हमेशा मुखरित रहा। 'तोड़ती पत्थर' कविता के द्वारा उन्होंने स्त्री सौन्दर्य को केवल शारीरिक सौन्दर्य से बाहर निकालकर उसकी परिश्रम, त्याग आदि के सौन्दर्य के साथ जोड़ा। यह केवल निराला के लिए ही नहीं हिन्दी साहित्य के लिए भी महान उपलब्धि नहीं रही। आपने निराला के पद्य साहित्य के साथ ही साथ उनके गद्य साहित्य की भी जानकारी प्राप्त की। साथ ही साथ सन् 1926 के बाद से निराला ने गीत लिखने का प्रयास कैसे शुरू किया और गीतकार के रूप में उनकी क्या सफलताएं रहीं और कितना वे असफल रहें इन दोनों तथ्यों की विस्तृत जानकारी आपने प्राप्त की। आपको अब यह पता है कि निराला के गद्य साहित्य का प्रकाशन उनके काव्य साहित्य से पहले ही शुरू हो चुका था। अपने यह भी पढ़ा कि कैसे उन्होंने साहित्यकार के रूप में न केवल हिन्दी भाषा को विकसित किया बल्कि हिन्दी भाषी जनता को भी उन्होंने सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा। साहित्यकार के रूप में निराला की विशेषताओं का भी गहन अध्ययन आप विद्यार्थियों ने किया। आपने इस बात को अवश्य ही समझा कि बांग्ला भाषा के साथ जुड़े रहने के बाद भी हिन्दी के सम्मान की रक्षा उन्होंने हमेशा की अंग्रेजी भाषा का बी उन्हें ज्ञान था

तथा अंग्रेजी साहित्य से भी वे परिचित थे तभी तो वे अंग्रेजी साहित्य के 'एनजैबमेंट' को हिन्दी साहित्य में नवीन प्रयोग के रूप में स्थापित कर सकें। इतना सब करने के बाद हिन्दी के सम्मान की रक्षा के लिए वे अपने ही देश के उन नेताओं के विरुद्ध खड़े होने से भी पीछे नहीं हटे जो संकुचित मानसिकता और राजनीतिक लाभ के लाइ हिन्दी के विकास में बाधा उत्पन्न करते थे। निराला ने जहाँ पुस्तकों से बहुत कुछ सीखा, वहीं उन्होंने बिल्लेसुर, चतुरी, कुल्ली, देवी आदि साधारण नर-नारियों से भी बहुत कुछ सीखा। इसी कारण से निराला के साहित्य की जड़ें देश की धरती और देश की साधारण जनता में जीवित है।

11.5 पाठ की उपलब्धियां

विद्यार्थियो! प्रस्तुत एकांकी को पढ़ने के बाद अब आप-

1. निराला के जीवन से परिचित है।

2. निराला के कृतित्व का विवेचन आप कर चुके है।

3. निराला के रचनाओं में चेतना के स्वर कैसे मुखरित है इसे आप समझ चुके है।

11.6 शब्द संपदा

1. अवरोधों	=	परेशानी
2. कुकुरमुत्ता	=	Mushroom
3. कृतित्व	=	रचनाएं
4. गुरु	=	भारी
5. नव्य-क्षितिजों	=	New Horizon
6. मनमौजी	=	अपनी इच्छा अनुसार काम करनेवाला
7. वैचित्र्य	=	विविधता
8. व्यक्तित्व	=	Personality
9. शुभ्र	=	सफेद, साफ
10. संकुचित	=	narrow
11. सीकर	=	पसीना

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड अ

(अ) दीर्घ प्रश्नों के उत्तर (500 शब्द)

1. निराला की रचनाओं में किन-किन चेतनाओं को देखा जा सकता है विस्तार से समझाइए।
2. निराला के कृतित्व का विवेचन कीजिए।
3. निराला की साहित्यिक यात्रा पर प्रकाश डालिए।

खंड ब

(आ) लघु प्रश्न उत्तर (250 शब्द)

1. निराला का बचपन कहाँ और कैसे बीता?
2. विवाह के बाद निराला के जीवन में क्या परिवर्तन आया?
3. निराला का व्यक्तित्व कैसा था?

खंड स

1. सही विकल्प चुनिए

1. 'मृत्युंजयी कवि' कौन कहलाते है? ( )
   (अ) प्रसाद (आ) निराला (इ) पंत (ई) महादेवी
2. निराला का जन्म किस सन् में हुआ? ( )
   (अ) सन् 1886 (आ) सन् 1346 (इ) सन् 1986 (ई) सन् 1950
3. निराला के पिता ने कितने विवाह किया था? ( )
   (अ) 2 (आ) 4 (इ) 5 (ई) 1
4. निराला की साहित्यिक यात्रा किस सन् से प्रारंभ हुई?
   (अ) सन् 1930 (आ) सन् 1920 (इ) सन् 1980 (ई) सन् 1945

II रिक्त स्थान भरें

1. निराला की पत्नी का नाम --------------।
2. निराला के पिता का नाम --------------।

3. निराला का जन्म -------------------के दिन हुआ।

4. निराला की साहित्य रचना का पहला पड़ाव-------------------।

III सुमेल कीजिए

1. कुकुरमुत्ता	(अ) उपन्यास
2. अप्सरा	(आ) कुकुरमुत्ता
3. शोषक	(इ) शोषित
4. गुलाब	(ई) कविता

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. निराला और उनका राग-विराग

2. निराला, संपादक रामविलास शर्मा

3. राग-विराग

4. निराला की श्रेष्ठतम कविताओं का संकलन, संपादक रामविलास शर्मा

इकाई 12 : राम की शक्ति पूजा

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : राम की शक्ति पूजा
12.3.1 अध्येय कविता
12.3.2 राम की शक्ति पूजा: भाव – रस विश्लेषण
12.3.2.1 भाव व्यंजना
12.3.2.2 रस व्यंजना
12.3.3 'राम की शक्ति पूजा' का संदेश
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 कठिन शब्द
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

जीवन द्रष्टा अनेक हुए हैं, जीवन से निराश होकर मृत्यु को आमंत्रण देनेवालों की भी कमी नहीं है लेकिन मृत्यु से पंजा लड़ाकर, जीवन के अनेक कष्टों के सामने डटकर खड़े रहनेवालों की कमी तो है। इसी कारण से ऐसे मनुष्यों को 'मृत्युंजय' कहा जाता है। निराला ऐसे ही 'मृत्युंजयी कवि' कहलाते है। भरे-पूरे परिवार में जन्में निराला का जीवन बचपन से ही संघर्षमय रहा। उनके जीवन का यह संघर्ष उनकी रचनाओं में भी दिखाई पड़ता है। निराला का जन्म ऐसे घर में हुआ था जहाँ लोग राम और कृष्ण के उपासक थे। सामाजिक बंधनों और नियमों को महत्व प्रदान किया जाता था और किसी भी प्रकार के विद्रोहों से यह परिवार बहुत दूर रहता था। लेकिन 'निराला' में बचपन से ही जिज्ञासा, विद्रोह और नवीन के प्रति आकर्षण के कोई कमी नहीं थी। सन् 1920 तक रवीन्द्रनाथ ठाकुर केवल बंगाल में ही नहीं समूचे भारत में महाकवि और विश्व कवि के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। बंग-भंग आंदोलन का रवीन्द्रनाथ पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। वे नए राष्ट्रीय आंदोलन के समर्थक थे और चाहते थे कि सभी साहित्यकार नए राष्ट्रीय आंदोलन को आगे बढ़ाए। 'निराला' पर रवीन्द्रनाथ के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सहयोग से 'समन्वय' का संपादकत्व प्राप्त

करने के बाद निराला ने राम कृष्ण परमहंस की 'भाव-साधना' और विवेकानंद के व्यावहारिक अद्वैतवाद का गहन अध्ययन किया था। एक और रवीन्द्रनाथ की राष्ट्रीय विचारधारा तो दूसरी ओर परमहंस और विवेकानंद की दार्शनिकता का प्रभाव सब कुछ मिलाकर निराला का व्यक्तित्व अपने आप में अनोखा बन चुका था। डॉ. धनंजय वर्मा जी का निराला के व्यक्तित्व के बारे मे कहना था कि, 'प्रतिभा, पांडित्य, तर्क-शक्ति और संगीत के साथ सुदृढ़, सबल और ऊंचा सुंदर शरीर जैसा विवेकानंद का था उससे काम निराला का नहीं। स्वामी जी अपने शैशवावस्था में जीवन के स्वच्छन्द, अविराम प्रवाह के हिमायती थे और निराला का तो यह जन्म -जात स्वभाव रहा है'।

साहित्यकार के रूप में भी निराला मस्त मौला और फक्कड़ थे। साहित्य उनकी आजीविका का साधन भी थी लेकिन उन्होंने अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साहित्य साधन की गुणवत्ता के साथ समझौता नहीं किया। उन्होंने इस विषय में स्वयं ही लिखा है, 'साहित्य मेरे जीवन के उद्देश्य है, जीने का नहीं। यह सच है कि मैं जीता भी अपने साहित्य से हूँ, किन्तु वह मेरे जीवन का साधन मात्र नहीं। जो मैं नहीं लिखना चाहता, वह चाहे भूखों मार जाऊँ, नहीं लिखूँगा और जो मैं लिखना चाहता, वह लाखों रुपए के बदले में भी उसे न लिखने की बात न सोचूँगा'। साहित्यकार के रूप में उनकी सबसे पहली विशेषता है- उनका निर्माणकौशल। किसी भी रोमांटिक कवि में विषय वस्तु पर ऐसा दृढ़ नियंत्रण न मिलेगा, जैसा निराला में देखने को मिलता है। चाहे छोटा गीत हो, चाहे मुक्तक, या फिर 'राम की शक्तिपूजा' जैसी नाटकीय कविता, उनका विषय निर्वाह देखते ही बनता है। 'जुही की कली में' जुही के स्नेह-स्वप्नमग्न होने से लेकर 'खिली खेल रंग, प्यारे संग' की परिणति का पूरा चित्र है। साहित्यकार के रूप में उनकी दूसरी विशेषता है- उनकी चित्रमयता। उनकी भाषा भले ही जहाँ-तहाँ कठिन हो लेकिन जहां वे चीते आँकते हैं वहाँ उनकी रूपरेखा बहुत ही स्पष्ट और सौन्दर्य आकर्षक बनने लग जाता है। इन चित्रों में प्रकृति के दृश्य, नारी-पुरूष की भंगिमाएं, मत आदि के प्रतीक सभी अपनी रूपमयता से पाठक को मुग्ध करने में सक्षम है। साहित्यकार के रूप में उनकी तीसरी विशेषता है- न्यूनतम रूप सामग्री का उपयोग। निराला ने अपनी रचनाओं में कहीं भी बात को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहा। गद्य हो चाहे पद्य उनकी शब्द योजना हमेशा गठी हुई रही। निराला ने कल्पना और यथार्थ दोनों का सहारा लिया लेकिन विषय को अकारण जटिल नहीं बनने दिया। निराला ने साहित्यकार के रूप में हिन्दी भाषी जनता को जिस प्रकार से सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा यह उनका युगांतकारी योगदान ही है। निराला के रचनाकाल के समय में दूसरी भाषाओं के लोगों से अक्सर यह सुनने को मिलता था 'हिन्दी में क्या है'? निराला ने इस मनोवृत्ति के विरुद्ध संघर्ष किया। उन्होंने नवीन शैलियों की सृष्टि की। जहाँ उन्होंने 'जुही की कली' में 'मुक्त छन्द' को अपनाया वहीं 'गीतिका' में ऐसे गीतों को लिखा जहाँ पाठक को परटेक शब्द के साथ धीरे-धीरे आगे बढ़ना होता है। 'राम की शक्ति पूजा' ऐसी ही एक रचना है।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत कविता को आपके पाठ्यक्रम में इसलिए रखा गया है ताकि आप यह समझ सके कि -

- 'राम की शक्ति पूजा' निराला की उत्कृष्ट रचना क्यों हैं?
- क्यों अपराजेयता का भाव हमेशा रहना चाहिए?
- मानवता शाश्वत धर्म है, अन्याय का विरोध होना चाहिए यह भी आप समझ सके।

12.3 मूल पाठ : राम की शक्ति पूजा

'राम की शक्ति पूजा' केवल एक कविता नहीं है बल्कि निराला के व्यक्तित्व से सराबोर उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण रचना है। निराला जी ने अपने जीवन में जो दो-तीन प्रबंधात्मक और महाकाव्य से पूर्ण रचनाएं रचीं, उनमें से 'राम की शक्ति पूजा' सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृति है। सन् 1936 में रची गई इस कविता का विषय राम-रावण-युद्ध की पृष्ठभूमि है। कवि ने प्रस्तुत प्रस्तुत कविता में सहज मनोविज्ञान का सहारा लेकर इस पौराणिक और ऐतिहासिक युद्ध के नायक राम को आधुनिक मानवीय पर्यावरण में बड़ी कुशलता से स्थापित किया है। किसी भी युग को संदेश देने की अद्‌भुत क्षमता भी प्रस्तुत कविता में है। प्रस्तुत इकाई में आपको 'राम की शक्ति पूजा' की 64 पंक्तियों का अध्ययन करना है। इन पंक्तियों में आपको निराला की भाषा शैली के औदात्य रूप को देखने का अवसर मिलेगा।

12.3.1 अध्येय कविता

1. रवि हुआ अस्त : ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
   रह गया राम-रावण का अपराजेय समर
   आज का, तीक्ष्ण-शर-विधृत-क्षिप्र-कर, वेग-प्रखर,
   शतशेलसम्वरणशील, नील नभ गर्जिज्त-स्वर,
   प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह-भेद-कौशल-समूह, -
   राक्षस-विरुद्ध प्रत्यूह,-क्रुद्ध-कपि-विषम-हूह,
   विच्छुरितवह्नि-राजीवनयन-हत लक्ष्य-बाण,
   लोहितलोचन-रावण-मदमोचन-महियान,
   राघव-लाघव-रावण-वारण-गत-युग्म-प्रहर,
   उद्धत-लंकापति मर्दित-कपि-दल-बल-विस्तर,
   अनिमेषराम-विश्वजिददिव्य-शर-भंग-भाव,-
   विद्धांग-बद्ध-कोदंड-मुष्टि-खर-रुधिरस्राव,

रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल वानर-दल-बल,-
मूर्छित सुग्रीवांगद-भीषण-गवाक्ष-गय-नल,-
वारित-सौमित्र-भल्लपति-अगणित-मल्ल-रोध,
गर्ज़ित-प्रल्याबद्धि-क्षुब्ध-हनुमतकेवल-प्रबोध,
उद्गीरित-वह्नि-भीम-पर्वत-कपि-चतुःप्रहर,-
जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।

2. लौटे युग-दल। राक्षस-पतदल पृथ्वी टलमल,
बिंध महोल्लास से बार-बार आकाश विकल।
वानर-वाहिनी खिन्न, लख निज-पति-चरण-चिन्ह
चल रही शिविर की ओर स्थविर-दल ज्यों विभिन्न;
प्रशमित है वातावरण, नमित-मुख सांध्य कमल
लक्ष्मण चिंता-पल, पीछे वानर-वीर सकल;
रघुनायक आगे अवनी पर नवनीत-चरण,
श्लथ धनु-गुण है, कटिबन्ध स्त्रस्त तूणीर-धरण,
दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर, विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकारं,
चमकतीं दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।

3. आए सब शिविर, सानु पर पर्वत के, मंथर
सुग्रीव, विभीषण, जांबवान आदिक वानर,
सेनापति दल-विशेष के, अंगद, हनुमान,
नल, नील, गवाक्ष, प्रात के रण का समाधान
करने के लिए, फेर वानर- दल आश्रय-स्थल।
बैठे रघु-कुल-मणि श्वेत शिला पर; निर्मल जल
ले आये कर- पद – क्षालनार्थ पटु हनूमान;
अन्य वीर सर के गये तीर संध्या-विधान-
वंदना ईश की करने को, लौटे सत्वर,
सब घेर राम को बैठे आज्ञा को तत्पर;
पीछे लक्ष्मण, सामने विभीषण, भल्लधीर,
सुग्रीव, प्रांत पर पाद-पद्म के महावीर;
यूथपति अन्य जो, यथास्थान, हो निर्निमेष
देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश।

4. है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार;
खो रहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन-चार;
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अंबुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान-मग्न; केवल जलती मशाल।
स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता जग जीवन में रावण-जय-भय;
जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपु-दम्य-श्रांत,-
एक भी, अयुत-लक्ष में रहा जो दुराक्रांत,
कल लड़ने को हो रहा विकल बार-बार
असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार-हार।
ऐसे क्षण अंधकार घन में जैसे विद्युत
जागो पृथ्वी-तनया-कुमारिका-छबि, अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का,-प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का-नयनों से गोपन-प्रिय संभाषण,-
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन,-
काँपते हुए किसलय,-झरते पराग-समुदय,-
गाते खग-नव-जीवन-परिचय,तरु मलय-वलय,-
ज्योतिःप्रपात स्वर्गीय,ज्ञात छबि प्रथम स्वीय,
जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कंपन तुरीय।

निर्देश - इन पंक्तियों का सस्वर वचन कीजिए।
इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

विस्तृत व्याख्या

रवि हुआ अस्त: ज्योति के पत्र पर लिखा अमर------------------------ जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।

शब्दार्थ : ज्योति के पत्र पर - दिन के हृदय पर, अपराजेय समर- अनिर्णीत युद्ध, तीक्ष्णशर विधृत- धनुष पर चढ़ाए तेज बाण, राजीवनयन-कमल के समान आँखें, रावणमद-मोचन-रावण के घमंड का नाश, अनिमेष-एकटक, भीम-भयानक, रुधिर स्राव-खून बहना।

संदर्भ- वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था। उनके बचपन का नाम सूर्यकुमार था। उनके पिता का नाम पं. रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह किया था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुआ था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के थे जब उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित निराला का बचपन पिता के कठोर अनुशासन में बीतने लगा। निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिन्दी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। अप्सरा, जूही की कली, सरोज-स्मृति, गीत गाने दो मुझे, कुकुरमुत्ता, नए-पत्ते, मरण-दृश्य, अपराजिता आदि है। निराला की मृत्यु सन् 1661 में हुई।

प्रसंग----ये पंक्तियाँ कविवर निराला की प्रबंधात्मक रचना 'राम की शक्ति पूजा' के आरंभ से ली गई है। प्रस्तुत पंक्तियों में राम-रावण-युद्ध को पृष्ठभूमि के रूप में चित्रण करते हुए कह रहे हैं----

व्याख्या-----दिन भर के भयानक युद्ध के बाद शाम हो गई। सूरज अस्त हो गया। अस्त होते दिन के हृदय पर जैसे आज के राम रावण का युद्ध जो कि किसी परिणाम के बीना ही समाप्त हुआ लेकिन वह इतिहास बनकर रह गया। आगे युद्ध की भयावहता का वर्णन का हुए कवि कहते है - राम - रावण दोनों पक्षों के योद्धा बड़ी तेजी से धनुषों पर बाण चढ़ाकर उन्हें शत्रु पक्ष पर चला रहे थे। उनकी गति में अत्यधिक तीव्रता थी। सैंकड़ों भालों को भी रोक पाने की सामर्थ्य उन वाणों में मौजूद थी। दोनों और से शत्रुओं के व्यूह और युद्ध कौशल को नष्ट करने का प्रयास किया जा रहा था। भयानक स्वरों में गरजते क्रुद्ध वानर सेना राक्षस सेना पर निरंतर आक्रमण कर रहे थे। अपने वाणों को अप्रभावित होता देखकर कमल-नयन राम की आँखें आग उगलने लग थीं। वे रक्त नयनों से आगे बढ़कर रावण के अहंकार को नष्ट कर देना चाहते थे। पर आगे बढ़कर आक्रमण करते राम के प्रयत्नों को रावण बढ़ी चतुराई से नष्ट कर देता था। इस प्रकार निरंतर युद्ध होता रहा। दो पहर बीत गए। दुस्साहसी रावण बढ़ी तीव्रता से वानर सेना की शक्ति को नष्ट कर रहा था। राम विश्वविजेता होने के बाद भी असमर्थ आँखों से सब कुछ देख रहें थे। रावण के तीखे वाण प्रहार से राम का शरीर बिंध गया था। वे रक्त से सने हुए हाथों से अपने धनुष वान को पकड़े हुए थे। आज रावण का युद्ध इतना कौशलपूर्ण था कि राम अपने को चोटों से बचा नहीं पा रहें थे। राम के चोटों को देखकर वानर सेना अत्यधिक व्याकुल हो उठी। प्रमुख सेनानायक - सुग्रीव, अंगद, गवाक्ष, गय, नल-नील, आदि सभी कठिन प्रहारों से बेहोश हो गए

थे। युद्ध क्षेत्र में मचनेवाला शोर प्रलय - सागर का स्मरण कर रहा था। केव महावीर हनुमान ही उस शोर-शराबे में सचेत थे। उन्हे देखकर लगता था जैसे विराट ज्वालामुखी पर्वत से आग की ज्वालाएं निकल्कर सभी को निगल जाना चाहती हो। इस प्रकार महावीर निरंतर चारों पहरों तक रावण के साथ युद्ध करते रहे। उनका युद्ध सशंकित सीता के हृदय में आशा का संचार करता रहा। सीता को यह विश्वास होने लगा कि हनुमान के प्रयास से ही उसे रावण की कैद से मुक्त मिल सकेगी।

विशेषता ----- कवि ने समास शैली में युद्ध के दृश्य का बड़ा ही सजीव और मार्मिक चित्रण किया है। युद्ध के सजीब स्वाभाविक वर्णन होने के कारण यहाँ 'स्वाभावोक्ति' अलंकार है। भाषा-शैली में ओज गुण का औदात्य स्पष्ट है। 'हनुमत् केवल प्रबोध' वाक्य से कवि की हनुमान के प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति व्यक्त होती है।

बोध प्रश्न

- दिन के हृदय में क्या लिखा रह गया?
- कौन-कौन बेहोश हो गए थे?
- सीता के में किसे देखकर विश्वास था?
- प्रस्तुत पंक्तियों में काउंस अलंकार है?

> लौटें युग-दल। राक्षस – पतदल पृथ्वी टलमल, ----------- चमकतीं दूर ताराएं
> ज्यों हो कहीं पार।

शब्दार्थ : युग दल - दोनों पक्षों की सेनाएं, टलमल - कंपन, महोल्लास - महान प्रसन्नता, वाहिनी - सेना, लख - देखकर, श्लथ - ढीला, नवनीत-चरण - माखन के समान कोमल चरण, धनु-गुण - धनुष की डोरी, नैशान्धकार - रात का अंधेरा।

संदर्भ : वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था। उनके बचपन का नाम सूर्यकुमार था। उनके पिता का नाम पं. रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह किया था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुआ था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के थे जब उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित निराला का बचपन पिता के कठोर अनुशासन में बीतने लगा। निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिन्दी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी

को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। अप्सरा, जूही की कली, सरोज-स्मृति, गीत गाने दो मुझे, कुकुरमुत्ता, नए-पत्ते, मरण-दृश्य, अपराजिता आदि है। निराला की मृत्यु सन् 1661 में हुई।

प्रसंग : आज का दिन बोहोत खराब गया। राम की सेना पराजित होने के बाद दुखी मन और शिथिल शरीर के साथ विश्राम शिविर में आ पहुंचे है। वहाँ का वातावरण कैसा था यही इन पंक्तियों का वर्णित विषय है।

व्याख्या : अंत में दिन ढलने पर युद्ध बंध हो गया। राम-रावण दोनों के सेना-समूह लौट पड़े। आज की अपनी विजय के दंभ के कारण चलते हुए राक्षस अपने भारी पगों से पृथ्वी को कंपा रहे थे। उनके विजय हर्ष के कोलाहल से आकाश भी जैसे आज व्याकुल हो रहा था। इधर वानर-सेना अपनी पराजय के कारण खिन्न थी। अपने स्वामी राम के शिथिल चरण चिन्हों को देखती वानर-सेना अपने शिविर की और बिखरी-बिखरी-सी इस प्रकार चल रही थी जैसे संसार से विरक्त बौद्ध-भिक्षुओं का दल बिखरा-बिखरा-सा चल रहा हो। सारा वातावरण एकदम शांत था। झुके मुखवालें कमल संध्या के समय मुरझाकर झुक जानेवाले कमलों के समान मुँह लटकाए लक्ष्मण के पीछे सारी वानर-सेना चल रही थी। उनके आगे माखन जैसे कोमल पग टेकते राम चल रहे थे। उनके धनुष की डोरी इस समय ढीली पढ़ रही थी। तरकश को धारण करने वाला कमरबंध भी एकदम ढीला-ढीला हो गया था। उनकी जटाओं का दृढ़ मुकुट भी जैसे अस्त-व्यस्त होकर उससे निकलकर बालों की लटें उनके मुख पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थीं। इस प्रकार मुख, पीठ और बाहों पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थी। इस प्रकार मुख, पीठ और बाँहों पर फैल रही लटों के कारण राम इस समय ऐसे प्रतीत हो रहें थे जैसे किसी कठोर पर्वत पर रात्री का अंधकार उतर आया हो। उस अंधकार में राम की उदास आँखें ऐसे चमक रही थी जैसे तारें दूर से झिलमिलातें हुए दिखाई दे रहे हो। भाव यह है की अस्त-व्यस्त और खिन्न होने पर भी राम के नयनों में भी अभी एक आशा की चमक बाकी थी। वे सब लोग चलते हुए पहाड़ की चोटी पर बसे अपने शिविर में आए। सुग्रीव, बिभीषण, जांबवान आदि वानर, विशेष दलों के सेनापति, अंगध हनुमान

विशेषता ------- पराजित लौटें राम के व्यक्तित्व के चित्रण कवि ने मार्मिक ढंग से किया है। संध्या का वातावरण मनोद्वन्द्व के सर्वथा अनुकूल है। दुर्गम पर्वत पर रात के अंधकार का उतरना एक श्रेष्ठ , विराट अनुभूति को जगानेवाला है। सभी कुछ मनोविज्ञान सम्मत है।

बोध प्रश्न

- सारा वातावरण कैसा था?

- आकाश क्यूँ व्याकुल हो रहा था?
- राम की आँखें किसके समान चमक रही थी?
- राम के नयनों का चमकना किस बात का प्रतीक था?

> आए सब शिविर,सानु पर पर्वत के, मंथर ---------- देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश।

शब्दार्थ ---- सानु - चोटी, रघु-कुल-मणि - रघुवंश के श्रेष्ट राम, श्वेत-शीला - सफेद पत्थर , क्षालनार्थ- धोने के लिए, पटु - चतुर, सर के तीर - सरोवर के किनारे पर, सत्वर - शीघ्र, भल्ल्धीर-धैर्यशील जांबवान, प्रांत पर - एक तरफ, समीप ही, पाद- पद्म - चरण कमाल, यूथपति - सेना-नायक,

संदर्भ ----- वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था। उनके बचपन का नाम सूर्यकुमार था। उनके पिता का नाम पं. रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह किया था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुआ था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के थे जब उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित निराला का बचपन पिता के कठोर अनुशासन में बीतने लगा। निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिन्दी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। अप्सरा, जूही की कली, सरोज-स्मृति, गीत गाने दो मुझे, कुकुरमुत्ता, नए-पत्ते, मरण-दृश्य, अपराजिता आदि है। निराला की मृत्यु सन् 1661 में हुई।

प्रसंग ----- पर्वत के शिखर पर बसे शिविर के बाहर अपने समस्त प्रखर सेनानायकों आदि के साथ, कल के युद्ध के बारे में विचार-विमर्श के लिए राम बैठे, इस प्रसंग का वर्णन करते हुए कवि निराला कह रहे है -

व्याख्या ------ रघुवंश के श्रेष्ठ राम एक श्वेत पत्थर आसन पर बैठ गए। उसी क्षण स्वभाव के चतुर हनुमान उनके हाथ-पाँव धोने के लिए स्वच्छ पानी ले आए। बाकी के सभी वीर योद्धा संध्याकालीन पूजन-पाठ आदि करने के लिए पासवाले सरोवर के किनारे पर चले गए। वे लोग अपने संध्या-कर्मों से जल्दी ही निवृत्त होकर वापस लौट आए। राम की आज्ञा को तत्परता से सुनने के लिए सभी लोग उन्हें घेरकर बैठ गए। लक्ष्मण राम के पीछे बैठे थे। विभीषण मित्र-भाव

के सामने बैठा था औ धैर्यवान जांबवान भी उनके साथ ही बैठा था। राम के एक तरफ सुग्रीव थे और चरण-कमलों के पास महावीर हनुमान विराजमान थे। बाकी के सभी सेनानायक अपने-अपने उचित और योग्य स्थानों पर बैठ कर रात के नीले कमल के समान विकसित होकर सबके हृदय को जीत लेनेवाले राम के श्याम-मुख को देख रहे थे।

विशेषता ------- कवि ने पौराणिक भक्ति-चेतना और राजनीति से संबंधित अनुशासनों को ध्यान में रखकर सबके बैठने के उचित स्थानों की व्यवस्था की है। 'पाद-पद्म के महावीर' पद में दास्य भक्ति भाव को स्थापित किया है। विभीषण को राम का मात्र शरणागत न दिखाकर उनका मित्र दर्शाया गया है।

बोध प्रश्न

- रघुवंश के श्रेष्ठ राम कहा बैठे थे?
- हनुमान का स्वभाव कैसा था?
- हनुमान कहा बैठे थे?
- राम के मुख की तुलना किसके साथ की गई है?

है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार; ---- जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कंपन तुरीय।

शब्दार्थ ------ अमानिश - अमावस्या की रात, घन - गहरा, स्तब्ध - जड़, पवन-चार - हवा का बहना, अप्रतिहत - आबाद भाव से, भूधर - पर्वत, पृथ्वी-तनया-कुमारिका-छवि - पृथ्वी की बेटी कुमारी सीता की छवि, अयुत - दस हज़ार, कमनीय - सुंदर, तुरीय - एक समाधि की अवस्था।

संदर्भ ----- वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था। उनके बचपन का नाम सूर्यकुमार था। उनके पिता का नाम पं. रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह किया था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुआ था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के थे जब उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित निराला का बचपन पिता के कठोर अनुशासन में बीतने लगा। निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिन्दी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ. बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में

रत्नावली का'। अप्सरा, जूही की कली, सरोज-स्मृति, गीत गाने दो मुझे, कुकुरमुत्ता, नए-पत्ते, मरण-दृश्य, अपराजिता आदि है। निराला की मृत्यु सन् 1661 में हुई।

प्रसंग ----- अगले दिन का युद्ध कैसे होगा इस पर विचार विमर्श करने के लिए सभा बैठी है, रात का प्राकृतिक दृश्य मनोरम है। इसके साथ ही साथ रावण से विजय पराजय के द्वन्द्व में उलझे राम के मन में सीता से प्रथम-मिलन का दृश्य उभर आया है।

व्याख्या ----- अमावस्या की गहरी रात है लगता है कि जैसे आकाश गहरा अंधकार उगल रहा है। उस अंधेरे के कारण कौन सी दिशा किधर है इसका भी ज्ञान नहीं हो पा रहा है। वायु भी इस समय लगता है कि एकदम शांत हो गई है। हिन्द महासागर गर्जना कर रहा है। राम योगी के समान ध्यानमग्न होकर विशाल पर्वत पर बैठे हुए हैं। राम का मन जो कभी किसी शत्रु से नहीं डरा आज व्याकुल है। न जाने क्यों राम का हृदय पराजित होने के डर से आतंकित हो रहा था। उसी क्षण जैसे अंधेरे में सहसा बिजली की चमक उजागर हो उठती है। राम के मन-नयन में कुमारी सीता की प्रथम-मिलन की छवि सहसा जाग उठी। राम उसे एकटक नयनों से अनवरत देखते रहें। उन्हें राजा जनक का उपवन स्मरण हो आया कि जिसकी लताओं के झुरमुट में राम और सीता का प्रथम स्नेहिल मिलन हुआ था। पहली बार दोनों की पलकें एक-दूसरे की पलकों पर उठकर झुक गई थीं। उपवन के पक्षी जैसे नवजीवन का परिचय पाकर विभोर से होकर गाने लगे थे। चंदन के वृक्षों के झुरमुट झूम उठे थे। प्रातःकालीन सूर्य की सुंदर ज्योति को देखकर लगता था कि जैसे आकाश से प्रकाश का झरना झरने लगा हो। उस सुंदर वातावरण में ही राम और सीता ने पहली बार अपने-अपने सौन्दर्य का ज्ञान प्राप्त किया था। इस प्रथम दर्शन-मिलन के प्रभाव से रोमांचित सीता के नयनों में एक प्रकार का भाव अंगराई लेने लगा था। उस भाव का आनंद योग की समाधि से कम नहीं था अर्थात राम और सीता एक दूसरे में तल्लीन हो गए थे।

विशेषता ----- कवि ने राम को यह ब्रह्म न मान कर मानवीय गुणों से सुशोभित दिखाया है। यहाँ राम के माध्यम से कवि की अपनी प्रिया-विरह की वेदना को भी रुपाकार मिल सका है, इस दृष्टि से कवि का व्यक्तित्व भी हमारे सामने आया है।

बोध प्रश्न

- आकाश क्या उगल रहा था?
- कौन गर्जना कर रहा था?
- राम को क्या स्मरण हो आया?
- राम-सीता पहली बार कहाँ मिले थे?

12.3.2 राम की शक्ति पूजा: भाव – रस विश्लेषण

काव्य सृजन के दो महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं- भाव तथा रस। छायावादी कवि निराला के व्यक्तित्व की झलक उनकी सभी रचनाओं में दिखाई पड़ती है। पंत ने निराला के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए कहा था, 'प्रसाद का शैव-व्यक्तित्व हिमालय के शुभ्र शिखर-स था तो निराला का शक्ति की झंझा से उत्ताल, दुर्लभ्य तरंगों में आंदोलित व्यक्तित्व एक विशाल समुद्र-सा, जिसके उद्याम फेनिल ज्वारों के ऊपर सूर्य का आलोक जाज्वल्य आलोक रंग-विरंगी ज्वालाओं में सुलग कर, दृष्टि को चमत्कृत कर देता है। निराला छायावाद- युग के पुरुष-प्रकाश के स्तम्भ हैं। वह अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व में अद्वितीय हैं'। पंत का यह वक्तव्य 'राम की शक्ति पूजा' के संदर्भ में बिल्कुल सही सिद्ध होती है। निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' में जिस प्रकार का भाव और रस विधान किया हैं, उसमें उनके व्यक्तित्व की झलक तो लगातार दिखाई पड़ती है। आइए छात्रों! हम आगे बढ़ें और 'राम की शक्ति पूजा' के भाव और रस विधान को विस्तार से समझे-

12.3.2.1 भाव व्यंजना

निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' की रचना केवल राम भक्ति को प्रचारित करने के लिए नहीं किया और न ही राम के चरित्र की उदात्तता को दर्शाने के लिए रचा इसके विपरीत उन्होंने तत्कालीन समाज को सचेत करने के लिए प्रस्तुत रचना को रचा। राम को अपने आप को धिक्कार कर यह कहना -

'धिक् जीवन जो पाता ही आया हाँ विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सद्य ही किया शोध'।

केवल राम का स्वयं को धिक्कार नहीं है बल्कि उस समाज को धिक्कार है जहाँ अन्याय, नये को लगातार हराने की क्षमता रखता है। ऐसे समाज में रहनेवाले मनुष्यों के मन में संशय भी भावना का अन्य तो स्वाभाविक ही है। राम के मन में आनेवाला संशय केवल उनका संशय नहीं है बल्कि वह तो युगीन संशय है जिसको कवि ने ऐसे अभिव्यक्त किया है-

'स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता जग-जीवन में रावण-जय-भय'।

फिर भी मनुष्य चिरंतन बुराई को हराकर अच्छाई को जिताने का ही प्रयास करता है। राम ऐसे ही मनुष्यों का प्रतीक है। कवि की निम्न पंक्तियाँ इसी बात का संकेत देती है-----

'वह एक और मन रहा राम का जो न थका,
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय
कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय'।

रावण के नाश में सभी का सहयोग वास्तव में अधर्म के प्रति धर्म के विजय के लिए राम को मिलनेवाला जातीय भावना का सहयोग है। कवि ने 'राम की शक्ति पूजा' में कवि ने कोमल भावनाओं को भी महत्व प्रदान किया है। कवि ने छायावादी काव्य-चेतना के आधार पर ही नारी को प्रेरक शक्ति के रूप में चित्रित किया है। तभी तो भावना में भी सीता के दर्शन करके राम की आँखें और होंठ मुस्करा उठते हैं-

'फूटी स्मिति सीता-ध्यान-लीन राम के अधर
फिर विश्व-विजय भावना हृदय में आई भर'।

'राम की शक्ति पूजा' की भाव व्यंजना की प्रशंसा करते हुए कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है, 'सूक्ष्म-जटिल कलाकारिता तथा संकल्प-शक्ति की द्योतक, अपनी अबाध शिल्प-शक्ति के अदम्य वेग तथा पौरुष-सौन्दर्य-क्षमता के कारण वह हिन्दी में एक अभूतपूर्व लंबी कविता है'। पंत की विचारधारा को बिल्कुल सही कहा जा सकता है।

12.3.2.2 रस व्यंजना

'राम की शक्ति पूजा' का प्रधान रस वीर रस है। प्रणत वीर रस के साथ-साथ काव्य में रौद्र, श्रृंगार, वात्सल्य, शांत जैसे रसों को भी प्रमुखता से स्थान मिला है। काव्य का आरंभ वीर रस के साथ हुआ है लेकिन अंत शांत रस के साथ हुआ है। वीर रस को प्रस्तुत करने के लिए जिस रोमांच की आवश्यकता होती है उसका ध्यान कवि ने प्रारंभ से लेकर अंत तक किया है-

'प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह,-भेद-कौशल-समूह,
राक्षस-विरुद्ध प्रत्यूह,-क्रुद्ध कपि-विषम-हूह,
लोहितलोचन-रावण-मदमोचन-महियान...'।

कवि ने रस के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। 'जनक-वाटिका' के लताओं के बीच राम-सीता का प्रथम मिलन होता है। विशुद्ध श्रृंगार रस अभिव्यक्ति का अवसर बन जाता है कवि निराला ने भी इस परिस्थिति के साथ पूर्णतया न्याय किया है। निम्न पंक्तियाँ इस विषय का उदाहरण है-

'जागी पृथ्वी-तनय-कुमारिका-छवि, अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का, प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का-नयनों से गोपन-प्रिय संभाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन....'

कवि ने वात्सल्य रस की बहुत सुंदर अभिव्यंजना 'राम की शक्ति पूजा' में की है। हनुमान के क्रोध और रौद्र रूप को देखर शिव भी डर जाते हैं तब वे पार्वती को कहते हैं कि वे हनुमान को

बल से नहीं बल्कि बुद्धि से पराजित करें। तब पार्वती हनुमान की माता अंजना का रूप धरकर हनुमान से कहती हैं-

'बोली माता-तुमने रवि को जब लिया निगल
तब नहीं बोध था तुम्हें; रहे बालक केवल,
यह वही भाव कर रहा तुम्हें व्याकुल रह-रह,
यह लज्जा की है बात कि मन कहती सह-सह'।

डॉ. रामविलास शर्मा ने 'राम की शक्ति पूजा' की रस व्यंजना का विश्लेषण करते हुए लिखा है, 'राम की शक्ति पूजा में दो कविताओं का सार-तत्व है- तुलसीदास और सरोज स्मृति का और इनके अलावा उसमें नई सामग्री है- एक पराजित मन और दूसरे अपराजित मन के अस्तित्व की अनुभूति'। स्पष्ट है कि इस अनुभूति में ही काव्य की भावाभिव्यक्ति और रस-व्यंजना की दृष्टि से पूर्ण सफलता और सार्थकता है।

बोध प्रश्न

- राम किसे धिक्कार रहे थे?
- निराला ने छायावादी काव्यधारा के आधार पर नारी को किस रूप में प्रस्तुत किया है?
- 'राम की शक्ति पूजा' का प्रधान रस क्या है?

12.3.3 'राम की शक्ति पूजा' का संदेश

सन् 1936 में निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' की रचना की। 'राम की शक्ति पूजा' का मूल कथानक पौराणिक मान्यताओं पर आधारित है। कुछ लोग यह मानते हैं कि इसके कथानक का मूल स्रोत बंगाल में होनेवाली शक्ति पूजा को मानते है तो कुछ लोग मानते हैं कि इस काव्य का सृजन 'देवी भागवत पुराण' या शिव महिमा स्त्रोत्र के आधार पर किया है। लेकिन अब विभिन्न शोधों के द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि इस रचना के कथानक का मूल आधार बांग्ला के पंडित कृतिवास ओझा रचित रामायण है। 'राम की शक्ति पूजा' कविवर महाप्राण निराला की महकाव्यात्मक औदात्य से संयत सर्जना है। महकाव्यात्मक औदात्य से परिपूर्ण रचनाओं में जहाँ भाषा-शैली, छन्द-विधान और विशिष्ट अलंकारों का महत्व होता है वहीं ऐसी रचनाओं में व्याप्त संदेश का भी अपना एक अलग महत्व होता है। ऐसे काव्यों में सार्वदेशिक और सार्वकालिक संदेश रहते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में भी यही सारे गुण व्याप्त है। कवि ने इतिहास, पुराण, प्रत्यक्ष अनुभव और कल्पना के औदात्य का समावेश करके ही प्रस्तुत काव्य की वस्तु-योजना की है और उसे अपनी अनुभूतियों के मिश्रण से पूर्णतया विकसित भी किया है। कवि की चेतना अप्रत्यक्ष रूप से महाकवि तुलसीदास की चेतना से भी प्रभावित हैं। कथानक के विकास के लिए कवि ने अनेक स्थानों पर मनोविज्ञान का सहारा लिया है और अपनी मौलिकता के सहारे अपनी रचना को नया रूप भी प्रदान किया है। परंपरा की दृष्टि से विभीषण राम का

शरणागत और मित्र है, पर प्रस्तुत काव्य में विभीषण मित्रता के बंधन में बंधा राम का मित्र, सहायक, और परामर्शदाता भी है। कवि ने मानवता को एक शाश्वत संदेश देने के लिए विष्णु का अवतार माने जाने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम राम को सहज मानवता के धरातल पर उतारा है। उसे सहज मानवीय सुख-दुख की भावना से परिपूर्ण किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में कहीं-कहीं अलौकिक घटनाओं को भले ही स्थान मिल है लेकिन उसमें सहज मानवीयता की भावना अत्यधिक मुखरित रूप में दिखाई पड़ती है। जैसे अपने युग में कवि निराला स्वयं वैयक्तिक धरातल पर अपने अभावों को पराजित करने के लिए संघर्षरत थे, उनका सम-सामयिक युग स्वतंत्रता-प्राप्ति के लक्ष्य को पाने के लिए अनवरत युद्ध और संघर्ष में तल्लीन था, उसी प्रकार 'राम की शक्ति पूजा' के राम रावण के साथ लगातार अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए, सीता की मुक्ति के लिए अनवरत युद्ध में लगे हुए थे। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी आशा, कल्पना, उत्साह आदि भावनाएं ही मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता है। राम को कठिन परिस्थितियों में भी आशावान होकर रावण को हराने की योजना बनाते हुए दिखाकर कवि निराला ने भारतीयों के मन में अपनी खोई प्रतिष्ठा को फिर से पाने की इच्छा जगाते हुए दिखाया है। उन्होंने सीता को बंदिनी भारत मन के प्रतीक, राम को उसे स्वतंत्र करानेवाले नेता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। यह भी दर्शाया है कि केवल स्वतंत्रता प्राप्त कर लेना काफी नहीं है उसकी रक्षा भी आवश्यक है। कवि ने राम की संघर्षरत चेतना के साथ युग की संघर्षमयी चेतना और अपनी व्यक्तिगत संघर्ष की चेतना को निम्न पंक्तियों के द्वारा उजागरित किया है-

'रघुकुल-गौरव, लघु हुए जा रहे तुम इस क्षण,
तुम फेर रहे हो पीठ हो रहा जब जय रण!
कितना श्रम हुआ व्यर्थ, आया जब मिलन-समय,
तुम खींच रहे हो हस्त जानकी से निर्दय'!

कवि को यह भी ठीक नहीं लगा कि आसुरी-शस्त्रों शक्तियों से सम्पन्न विदेशी शासन का सामना सत्याग्रह आंदोलन जैसे निरीह शस्त्रों से किया जाए। रावण के माया के सामने राम के बाणों को कवि ने निम्न रूप में व्यर्थ होते हुए दिखाया है-

'शत-शुद्धि-बोध-सुक्षमातिसूक्ष्म मन का विवेक,
जिनमें है क्षात्र-धर्म का घृत पूर्णाभिषेक,
जो हुए प्रजापतियों के संयम से रक्षित,
वे शर हो गए आज रण श्रीहत, खंडित'।

शरों का खंडित होना वास्तव में गाँधीवादी सिद्धांतों की पराजय ही है। पर कवि न तो राम को पराजित होते हुए दिखाना चाहते थे और न ही वे देश को पराधीन होते हुए देख सकते थे। शक्ति का उत्तर शक्ति से ही दिया जा सकता है। जीवन शक्ति का खेल है, यह बात राम को निम्न पंक्तियों के द्वारा राम को समझ आता है-

'रावण अधर्मरत भी अपना; मैं हुआ अपर,
यह रहा शक्ति का खेल समर, शंकर, शंकर'।

यहाँ इस तथ्य को ध्यान में रखना भी आवश्यक है कि कवि ने ऊपर की पंक्तियों के द्वारा यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वास्तविक शक्ति पाने के लिए सामान्य स्वार्थ, पाशविक प्रवृत्तियों, से मुक्ति पाने का प्रयास अनवरत करना चाहिए। अपनी शक्ति का ज्ञान मनुष्य को तभी हो सकता है जब वह अपनी कुंठाओं और निराशाओं से मुक्त हो पाता है, साथ ही साथ विघ्न-बाधा उपस्थित होने पर बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने के लिए भी मनुष्य को प्रस्तुत रहना चाहिए। राम को ही देखिए- देवी द्वारा कमल चुरा लेने की स्थिति में राम अपनी आँख का बलिदान देने के लिए भी प्रस्तुत दिखाई पड़ते हैं। जो व्यक्ति मरण नहीं जनता, वह किसी को मार भी नहीं सकता। राम के आँख बलिदान की तत्परता का चित्रण त्याग और बलिदान की इसी भावना का संदेश देता है।

इस दृष्टि से कवि यहाँ पर राष्ट्र को संदेश दे रहें हैं कि यदि अपने अस्तित्व, अपनी स्वतंत्रता, अपनी शुभ संस्कृति के मूल्यों की रक्षा चाहते हो तो सभी प्रकार के सदगुणों को अपने भीतर संचित करो, तभी अंतिम विजय तुम्हारी होगी। किसी भी युग में शक्ति साधना का संचय निरंतर किए बिना अपने जीवन, समाज और राष्ट्र के मूल्यों की रक्षा नहीं हो सकती।

बोध प्रश्न

- 'राम की शक्ति पूजा' किस रचना से प्रभावित किया है?
- शरों का खंडित होना किस विचारधारा के पराजय का प्रतीक है?
- राम क्या बलिदान करने को भी प्रस्तुत थे?

12.4 पाठ सार

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत इकाई में आपने 'राम की शक्ति पूजा' की 64 पंक्तियों का अध्ययन किया। इस रचना को कवि निराला ने सन् 1936 में रचा था। कवि ने सहज मनोविज्ञान का सहारा लेकर इस पौराणिक और ऐतिहासिक युद्ध के राम को आधुनिक मानवीय पर्यावरण बड़ी कुशलता से प्रदान किया है। वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का जन्म हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। निराला जब केवल 3 वर्ष के थे उसी समय उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित पिता के कठोर अनुशासन में निराला का बचपन बीता। पिता से भाले ही निराला को कठोर अनुशासन मिला लेकिन पिता ने उनकी शिक्षा-दीक्षा की अवहेलना नहीं की। निराला ने भले ही 9 वीं कक्षा तक पढ़ाई की लेकिन शिक्षा के अलावा उन्हे संगीत, कुश्ती, घूड़सवारी आदि का बहुत अच्छा ज्ञान था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष

की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिन्दी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। पर दुखद बात यह है की निराला केवल 21 साल के ही थे जब एक पुत्र और पुत्री उपहार स्वरूप देकर इंफ्लुएंजा के बीमारी से उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई। इसके बाद से निराला का असली संघर्ष शुरू हुआ जो जीवन भर चलता रहा। निराला ऐसे साहित्यकारों में आते है जिनकी आजीविका का साधन साहित्य रचना ही था। लेकिन फिर भी लाभ कमाने के लिए उन्होंने कभी साहित्य रचना का काम नहीं किया। उनके साहित्य में रवीन्द्रनाथ ठाकुर, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद आदि के विचारों के प्रभाव को देखा जा सकता है। निराला पुरानी मान्यताओं पर विश्वास रखते थे लेकिन छाया वादी कवि होने के बाद भी उन्होंने नवीन प्रयोगों को कभी अस्वीकार नहीं किया। कहीं 'जूँही की कली' तो कहीं 'कुकुरमुत्ता' को उन्होंने अपनी रचनाओं का विषय बनाया। ऐसा करनेवाले वे हिन्दी साहित्य के प्रथम विद्रोही कवि कहलाये। 'राम की शक्ति पूजा' एक ऐसी ही रचना है। प्रस्तुत रचना में विद्रोही उन्होंने राम को केवल ईश्वर के रूप में नहीं दिखाया बल्कि राम के मानवीय गुणों, मानसिक द्वन्द्व आदि का बहुत मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया। पहली पंक्ति से ही देखिए कवि कह रहे हैं -

आज का दिन बिना किसी हार-जीत के समाप्त हो गया। सूर्य अस्त हुआ पर अस्त होते-होते दिन के हृदय में राम-रावण का अनिर्णीत अमर युद्ध उसने स्वर्णिम अक्षरों में लिख दिया। राम-रावण के बीच भयंकर युद्ध हुआ। भयानक स्वरों में गरजते हुए वानर-सेना, राक्षस-सेना पर लगातार आक्रमण कर रहे थे। दो पहर बीत गए। दुःसाहसी रावण बड़ी तीव्रता से वानर-सेना को नष्ट कर रहा था। एक समय ऐसा भी आया जब सुग्रीव, अंगद, विभीषण आदि सब बेहोश हो गए लेकिन महावीर हनुमान निरंतर चारों पहर रावण के साथ युद्ध करते रहें। सीता के मन में हनुमान की वीरता को देखकर ही यह आशा बंधी हुई थी कि रावण की कैद से उन्हें मुक्ति मिल ही जाएगी। युद्ध समाप्त होने के बाद जब सर वातावरण शांत हो गया तब दोनों सेनाएं अपने-अपने शिविर में लौट आयें। सबका मन मुरझाया हुआ था। राम के तरकश को बाँधनेवाला कमरबंध भी ढीला पड़ गया था। उनकी जटाओं का दृढ़ मुकुट भी जैसे अस्त-व्यस्त होकर उससे निकलकर बालों की लटें उनके मुख पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थी। इस प्रकार मुख, पीठ और बाँहों पर फैल रही लटों के कारण राम इस समय ऐसे प्रतीत हो रहे थे कि जैसे किसी कठीन पर्वत पर रात्री का अंधकार उतर आया हो। रघुवंश के श्रेष्ठ राम श्वेत आसन पर बैठ गए। चतुर हनुमान उनके पाओ धोने के लिए स्वच्छ पानी ले आए। लक्ष्मण राम के पीछे बैठे थे। विभीषण मित्र-भाव से सामने बैठे थे और धैर्यवान जांबवान भी उनके सामने ही बैठे ही बैठे थे। बाकी के सभी सेनानायक अपने-अपने उचित और योग्य स्थानों पर बैठ कर रात के नीले कमल

की सुंदरता को भी जीत लेनेवाले राम के श्याम-मुख को देख रहे थे। अमावस्या की गहरी काली रात में आकाश अंधकार उगल रहा था। उस अंधेरे के कारण कौन सी दिशा किधर है इसका भी ज्ञान नहीं हो पा रहा था। वायु भी शांत हो गई थी। विशाल हिंद महासागर लगातार गर्जना कर रहा था। राम पर्वत पर योगी के समान बैठे हुए थे। उस अंधकार को भेदती केवल एक ही मशाल जल रही थी। राम जिसने अनेक शत्रुओं को बिना किसी भय के पराजित किया था। परंतु आज उनका मन भी विचलित था। मानसिक द्वन्द्व के इस समय अचानक राम के मन-नयन में कुमारी सीता की प्रथम-मिलन की छवि सहसा जाग उठी। उन्हें राजा जनक का उपवन स्मरण हो आया जहाँ लताओं के बीच में राम और सीता एक दूसरे से मिले थे। पहली बार दोनों की पलकें उठकर फिर गिर गई थी क्योंकि उनके मन में लज्जा का भाव जन्म लेने लगा था। उस सुंदर वातावरण में ही राम और सीता ने अपने-अपने सौन्दर्य का ज्ञान प्राप्त किया था। सीता की रोमांचित आँखों ने जिस आनंद का अनुभव किया वह किसी योग समाधि के आनंद से कम नहीं था।

तो देखा विद्यार्थियो! 'राम की शक्ति पूजा' का मूल-कथानक पौराणिक मान्यताओं पर आधारित है लेकिन यहाँ राम के ब्रह्म रूप से अधिक उनके मानवीय रूप को प्रधानता कवि निराला ने प्रदान किया है। कुछ लोग यह मानते हैं कि इसके कथानक का मूल स्रोत बंगाल में होनेवाली शक्ति पूजा को मानते है तो कुछ लोग मानते हैं कि इस काव्य का सृजन 'देवी भागवत पुराण' या शिव महिमा स्त्रोत्र के आधार पर किया है। लेकिन अब विभिन्न शोधों के द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि इस रचना के कथानक का मूल आधार बांग्ला के पंडित कृतिवास ओझा रचित रामायण है। 'राम की शक्ति पूजा' कविवर महाप्राण निराला की महकाव्यात्मक औदात्य से संयत सर्जना है। महकाव्यात्मक औदात्य से परिपूर्ण रचनाओं में जहाँ भाषा-शैली, छन्द-विधान और विशिष्ट अलंकारों का महत्व होता है वहीं ऐसी रचनाओं में व्याप्त संदेश का भी अपना एक अलग महत्व होता है। ऐसे काव्यों में सार्वदेशिक और सार्वकालिक संदेश रहते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में भी यही सारे गुण व्याप्त है। कवि ने इतिहास, पुराण, प्रत्यक्ष अनुभव और कल्पना के औदात्य का समावेश करके ही प्रस्तुत काव्य की वस्तु-योजना की है और उसे अपनी अनुभूतियों के मिश्रण से पूर्णतया विकसित भी किया है। कवि की चेतना अप्रत्यक्ष रूप से महाकवि तुलसीदास की चेतना से भी प्रभावित हैं। कथानक के विकास के लिए कवि ने अनेक स्थानों पर मनोविज्ञान का सहारा लिया है और अपनी मौलिकता के सहारे अपनी रचना को नया रूप भी प्रदान किया है। परंपरा की दृष्टि से विभीषण राम का शरणागत और मित्र है, पर प्रस्तुत काव्य में विभीषण मित्रता के बंधन में बंधा राम का मित्र, सहायक, और परामर्शदाता भी है। कवि ने मानवता को एक शाश्वत संदेश देने के लिए विष्णु का अवतार माने जाने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम राम को सहज मानवता के धरातल पर उतारा है। उसे सहज मानवीय सुख-दुख की भावना से परिपूर्ण किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में कहीं-कहीं अलौकिक घटनाओं को भले ही स्थान मिल है लेकिन उसमें सहज मानवीयता की भावना अत्यधिक मुखरित रूप में

दिखाई पड़ती है। जैसे अपने युग में कवि निराला स्वयं वैयक्तिक धरातल पर अपने अभावों को पराजित करने के लिए संघर्षरत थे, उनका सम-सामयिक युग स्वतंत्रता-प्राप्ति के लक्ष्य को पाने के लिए अनवरत युद्ध और संघर्ष में तल्लीन था, उसी प्रकार 'राम की शक्ति पूजा' के राम रावण के साथ लगातार अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए, सीता की मुक्ति के लिए अनवरत युद्ध में लगे हुए थे। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी आशा, कल्पना, उत्साह आदि भावनाएं ही मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता है। राम को कठिन परिस्थितियों में भी आशावान होकर रावण को हराने की योजना बनाते हुए दिखाकर कवि निराला ने भारतीयों के मन में अपनी खोई प्रतिष्ठा को फिर से पाने की इच्छा जगाते हुए दिखाया है। उन्होंने सीता को बंदिनी भारत मन के प्रतीक, राम को उसे स्वतंत्र करानेवाले नेता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। यह भी दर्शाया है कि केवल स्वतंत्रता प्राप्त कर लेना काफी नहीं है उसकी रक्षा भी आवश्यक है।काव्य सृजन के दो महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं- भाव तथा रस। छायावादी कवि निराला के व्यक्तित्व की झलक उनकी सभी रचनाओं में दिखाई पड़ती है। पंत ने निराला के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए कहा था, 'प्रसाद का शैव- व्यक्तित्व हिमालय के शुभ्र शिखर-स था तो निराला का शक्ति की झंझा से उत्ताल, दुर्लभ्य तरंगों में आंदोलित व्यक्तित्व एक विशाल समुद्र-सा, जिसके उद्याम फेनिल ज्वारों के ऊपर सूर्य का आलोक जाज्वल्य आलोक रंग-विरंगी ज्वालाओं में सुलग कर, दृष्टि को चमत्कृत कर देता है। निराला छायावाद- युग के पुरुष-प्रकाश के स्तम्भ हैं। वह अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व में अद्वितीय हैं'। पंत का यह वक्तव्य 'राम की शक्ति पूजा' के संदर्भ में बिल्कुल सही सिद्ध होती है। निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' में जिस प्रकार का भाव और रस विधान किया हैं, उसमें उनके व्यक्तित्व की झलक तो लगातार दिखाई पड़ती है। 'राम की शक्ति पूजा' की भाव व्यंजना की प्रशंसा करते हुए कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है, 'सूक्ष्म-जटिल कलाकारिता तथा संकल्प-शक्ति की द्योतक, अपनी अबाध शिल्प-शक्ति के अदम्य वेग तथा पौरुष-सौन्दर्य-क्षमता के कारण वह हिन्दी में एक अभूतपूर्व लंबी कविता है'।

रस-व्यंजना की दृष्टि से 'राम की शक्ति पूजा' में रौद्र, श्रृंगार, वात्सल्य और शांत रसों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। राम के मानसिक द्वन्द्व के सहारे कवि ने अपने मानसिक द्वन्द्व को भी निश्चय ही अभिव्यंजित किया है। इस ओर इंगित करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा 'राग-विराग' की भूमिका में लिखते हैं, 'रावण, शक्ति, अंधकार ये सब मिलकर राम को पराजित कर देते हैं। शक्ति की साधन राम को ही करना है और वह साधन सफल होती है। निस्संदेह निराला ने कल्पना के सहारे अपने विजयी होने की आकांक्षा पूरी की है'।

यहाँ इस तथ्य को ध्यान में रखना भी आवश्यक है कि कवि ने प्रस्तुत रचना के द्वारा यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वास्तविक शक्ति पाने के लिए सामान्य स्वार्थ, पाशविक प्रवृत्तियों, से मुक्ति पाने का प्रयास अनवरत करना चाहिए। अपनी शक्ति का ज्ञान मनुष्य को तभी हो सकता है जब वह अपनी कुंठाओं और निराशाओं से मुक्त हो पाता है, साथ ही साथ विघ्न-बाधा

उपस्थित होने पर बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने के लिए भी मनुष्य को प्रस्तुत रहना चाहिए। राम को ही देखिए- देवी द्वारा कमल चुरा लेने की स्थिति में राम अपनी आँख का बलिदान देने के लिए भी प्रस्तुत दिखाई पड़ते हैं। जो व्यक्ति मरण नहीं जनता, वह किसी को मार भी नहीं सकता। राम के आँख बलिदान की तत्परता का चित्रण त्याग और बलिदान की इसी भावना का संदेश देता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि निराला की 'राम की शक्ति पूजा' को आप पूर्णतया समझ सकें हैं।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

प्रस्तुत इकाई के सहारे अब आप-

1. निराला के जीवन से परिचित हैं।
2. आपने राम-रावण युद्ध की वर्णना को समझ लिया है।
3. 'राम की शक्ति पूजा' में कैसे निराला का व्यक्तित्व भी समाहित है यह भी आप जान गए हैं।

12.6 कठिन शब्द

1. अच्युत- राम
2. नमित-झुके हुए
3. प्रत्यूह- प्रतिपक्षियों की घेराबंदी
4. प्रशमित-एकदम शांत
5. बिन्धाँग- बिंधे हुए शरीर के अंग
6. मल्ल-रोध- योद्धाओं की बाधा
7. समाधान- विचार-विमर्श
8. स्वीय-अपनी

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

(अ)

दीर्घ प्रश्न (500 शब्द)

1. निराला का जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. 'राम की शक्ति पूजा' में किस परकर के युद्ध के वर्णन है इस पर प्रकाश डालिए।
3. राम की शक्ति पूजा काव्य की विशेषताओ पर प्रकाश डालिए।

(आ)

लघु प्रश्न उत्तर (200 शब्द)

संदर्भ सहित व्याख्या

1. रवि हुआ अस्त: ज्योति के पत्र पर लिखा अमर ---------------------------- जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।
2. लौटें युग-दल। राक्षस – पतदल पृथ्वी टलमल, ----------- चमकतीं दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।
3. आए सब शिविर,सानु पर पर्वत के, मंथर ---------- देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश।

(इ)

1. सही विकल्प चुनें

(क) निराला का जन्म किस सन् में हुआ?

1. 1887 2. 1993 3. 1554 4. 1886

(ख) निराला के पिता का नाम क्या था?

1. पं. रामसहाय त्रिपाठी 2. पं. मनोहर लाल 3. पं. सूरज लाल 4. इनमें से कोई नहीं

(ग) सानु शब्द का अर्थ क्या है?

1. किताब 2. चोटी 3. मोती 4. रोटी

रिक्त स्थान की पूर्ति करें

1. निराला की मृत्यु सन् ----------- में हुई?
2. निराला की पत्नी का नाम----------था।
3. निराला के पिता सेना में -------------------थे।
4. निराला की पत्नी की मृत्यु ---------------------- नामक बीमारी से हुई।

सुमेल कीजिए

1. हनुमान ------------------- जनक उपवन
2. चरण-कमल -------------- भक्त
3. अमानिशा --------------- राम
4. राम-सीता ---------------- अमावस्या

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. राग – विराग, सूर्यकांत त्रिपाठी ‘निराला’, संपादक - रामविलास शर्मा

इकाई 13 : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय

रुपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मूल पाठ : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय
13.3.1 सुमित्रानंदन पंत का जीवन परिचय
13.3.2 सुमित्रानंदन पंत की रचना यात्रा
13.3.3 सुमित्रानंदन पंत की कविताओं (1936 तक) का परिचय
13.3.4 हिंदी साहित्य में सुमित्रानंदन पंत का स्थान एवं महत्व
13.4 पाठ सार
13.5 पाठ की उपलब्धियाँ
13.6 शब्द संपदा
13.7 परीक्षार्थ प्रश्न
13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ भारतेंदु युग (1868-1900ई.) से हुआ। इसे हिंदी साहित्य का पुनर्जागरण-काल कहा गया। इसके बाद द्विवेदी युग आया जिसे जागरण-सुधार काल नाम दिया गया। इस युग की कविताओं में विषय की विविधता तो रही पर उसकी प्रस्तुति में इतिवृत्तात्मकता और नैतिकता प्रधान हो गई जिससे कविता के सूक्ष्म तत्व का ह्रास हुआ। इस क्षतिपूर्ति के लिए व्यक्ति की अंतःअनुभूति, उसके राग, उसकी सौंदर्य लिप्सा, उसके प्रणय भाव और वैश्विक प्रेम जैसी सूक्ष्म अनुभूतियों को अपनी कल्पना शक्ति से कवियों ने शब्दबद्ध किया। उनकी यही लयात्मक शब्दबद्धता छायावादी कविता कहलाई जिसे विद्वानों ने स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह कहा है। "स्थूल शब्द बड़ा व्यापक है। इसकी परिधि में सभी प्रकार के बाह्य रूप-रंग, घड़ियाँ आदि सन्निहित हैं। और इसके प्रति विद्रोह का अर्थ है उपयोगितावाद के प्रति भावुकता का विद्रोह, नैतिक रूढ़ियों के प्रति मानसिक स्वातंत्र्य का विद्रोह और काव्य के बंधनों के प्रति स्वच्छंद कल्पना और टेकनीक का विद्रोह।" (प्रो.नगेन्द्र)

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वातंत्र्य चेतना, विविधता, भावुकता, कल्पना और विद्रोह इत्यादि तत्व छायावादी कविता में प्रमुख रहे हैं। साथ ही अंतश्चेतना से साक्षात्कार करना कवियों का मुख्य भाव रहा है। इस कविता की एक अनन्य विशिष्टता है मनुष्य के साथ प्रकृति का तादात्म्य बिठाना। छायावाद के बृहतत्रयी (प्रसाद, निराला, पंत) और कवि चतुष्ट्य (बृहतत्रयी के साथ महादेवी वर्मा) में यह विशिष्टता सर्वाधिक सुमित्रानंदन पंत में देखने को मिलती है। इन्हें 'प्रकृति के सुकुमार कवि' के रूप में जाना जाता है।

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों! इस इकाई में आप हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के अंतर्गत छायावादी काव्यधारा के एक प्रमुख कवि सुमित्रानंदन पंत के बारे में पढेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप –

- सुमित्रानंदन पंत के व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
- उनके कृतित्व का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- 1936 तक की उनकी समग्र काव्यकृतियों को विस्तार से समझ सकेंगे।
- उनकी साहित्यिक चेतना के विकास क्रम एवं कविताओं में व्यवहृत कला पक्ष (भाषा-शैली) के बारे में जान सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय

13.3.1 सुमित्रानंदन पंत का जीवन परिचय

सुमित्रानंदन पंत (1900-1977) का जन्म अल्मोड़ा जिला के कौसानी गाँव में हुआ था। अल्मोड़ा पहले उत्तरप्रदेश का हिस्सा था। 2001 में जब उत्तराखंड राज्य बना तब यह इसके हिस्से में आ गया। इन्हें जन्म देने के छः घंटे बाद ही इनकी माँ स्वर्ग सिधार गई। माँ के स्नेह से वंचित इस शिशु का पालन-पोषण पिता और प्रकृति के संरक्षण में हुआ। इनकी माँ का नाम 'सरस्वती' और पिता का नाम 'गंगादत्त पंत' था। इनके घर का वातावरण धार्मिक था जिसका इनके जीवन पर भी प्रभाव पड़ा। प्रकृति से इनका लगाव अधिक गहरा था। इस दुधमुहें बालक ने माँ के स्नेहास्पर्श की अनुभूति अपनी दादी और फूफी के साथ ही प्रकृति की गोद में भी पाई। इस निस्संग राग और संग से ही इस बालक का व्यक्तित्व निर्मित हुआ। कवि पंत और उनके विराट कवित्व की मुख्य प्रेरक शक्ति यह प्रकृति है। नगेन्द्र पंत का रूपचित्र खींचते हुए लिखते हैं, "गौर वर्ण, मांसल-सा शरीर, घुंघराले रेशमी बाल और गंभीर मंथन आकृति वाला यह नवयुवक कवि एक विशेष कवित्वपूर्ण व्यक्तित्व रखता है जिसका प्रभाव देखने वाले पर अनिर्वच और स्थायी होता है। पंतजी स्वभाव से ही संकोचशील और मितभाषी हैं। उनकी आँखों में एक स्निग्ध स्वच्छता है जो उनकी मननशील निर्मल आत्मा का परिचय देती है।" पं. शांतिप्रिय द्विवेदी ने उनकी उन विशेषताओं का उल्लेख किया है जो उन्हें 'चिर मोह के प्रबल बंधन लगे', द्रष्टव्य है - संगीतमय सुमधुर स्वर, निर्विकार दृष्टि निमेष, विनम्र, निश्छल वार्तालाप इत्यादि। एक पूर्ण मनुष्य के रूप में पंत सदा आत्मविश्वास से पूर्ण और अभिमानशून्य रहे। सभी के प्रति विनम्रता और आदर का भाव रखना भी उनकी एक विशिष्टता है। संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी भाषा का इन्होंने स्वतंत्र रूप से अध्ययन किया। इस अध्ययन का आधार उन भाषाओँ की काव्यशालाएँ भी रहीं। विधिवत विद्यालय की भी शिक्षा इन्होंने ली पर प्रकृति की पाठशाला में स्वाध्याय और चिंतन से अधिक सीखा। औपचारिक शिक्षा के साथ संगीत की शिक्षा भी इन्होंने पाई। अपने एकांतप्रेमी और जनभीरु व्यक्तित्व का उल्लेख करते हुए स्वयं पंत लिखते हैं, "प्रकृति के साहचर्य

ने जहाँ एक ओर मुझे सौंदर्य, स्वप्न और कल्पनाजीवी बनाया वहां दूसरी ओर जनभीरु भी बना दिया। यही कारण है कि जन समूहों से अब भी मैं दूर भागता हूँ, और मेरे आलोचकों का यह कहना कुछ अंश तक ठीक ही है कि मेरी कल्पना लोगों के सामने आने में लजाती है।" उनका विपुल साहित्य संसार इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने अपनी जन भीरुता का त्याग किया।

1919 में पंत प्रयाग आए विद्याध्ययन के लिए और 1929 तक वहीँ रहे। इस अवधि में उनहोंने पाश्चात्य साहित्यकारों का गहन अध्ययन किया। इसी अवधि में उन्होंने शेली, कीट्स और टेनिसन जैसे कवियों को पढ़ा। कालिदास कृत रघुवंश के साथ ही रवीन्द्रनाथ टैगोर और सरोजिनी नायडू के गीतों का विशेष अध्ययन इन्होंने किया। मैथिलीशरण गुप्त की भारत भारती, जयद्रथ वध इत्यादि इनकी प्रिय रचनाएँ हैं। लेखन और पाठन का क्रम संग-संग चलता रहा।

बोध प्रश्न

- सुमित्रानंदन के व्यक्तित्व की विशिष्टता क्या है?
- सुमित्रानंदन पंत ने अपने अध्ययनकाल में किन विद्वानों की रचनाओं का अध्ययन किया?

13.3.2 सुमित्रानंदन पंत की रचना यात्रा

हिंदी साहित्य में किशोरावस्था से ही पंत रचना करने लगे। रचना करने की प्रेरणा उन्हें प्रकृति से मिली। उनके शब्दों में, "कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली है, जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कूर्माचल प्रदेश को है।" अल्मोड़ा की खूबसूरत-मनमोहक वादियों में कविकंठ से मधुमय गान सहसा फूट पड़ा। इनकी आरंभिक रचनाएँ गिरजा का घंटा, कागज के फूल और सिगरेट का धुआं है। इनमें क्रमशः उन्होंने जिन भावों को प्रकट किया है वे हैं- '1) प्रभु ही पापमुक्त करता है। यह गिरजे का घंटा हम नींद में सोए बेखबर लोगों को जगाकर; उस गिरजाघर में जाने के लिए प्रेरित करता है। 2) कागज के फूल कृत्रिम हैं। इनका रूप निखर हुआ लगता है पर ये मधु, सुगंध और कोमल स्पर्श आदि गुणों से शून्य हैं। भौंरा इनकी ओर किस आशा से आएगा। प्रेम मिलन के लिए स्वभाविकता अनिवार्य है। कृत्रिमता हृदय को स्पंदित नहीं कर सकता है। 3) 'धुआं' को कवि ने स्वतंत्रता का प्रेमी और पुजारी माना है। वह उस हृदय में भी नहीं रहना चाहता जहाँ ईश्वर का निवास है। वह उड़ जाता है।' बहुत छोटी उम्र में इन्होंने एक उपन्यास लिखा 'हार' (1916-17)। इसका प्रकाशन उस समय नहीं करवाया। यह उपन्यास 1960 में प्रकाशित हुआ। इसी वर्ष उनकी आत्मकथा 'साठ वर्ष : एक रेखांकन' भी प्रकाशित हुआ। गद्य साहित्य के अंतर्गत उनकी 'पाँच कहानियाँ' 1936 में प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त आलोचना के क्षेत्र में भी उनका योगदान रहा। इस क्षेत्र की उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं- गद्यपथ (1953), शिल्प और दर्शन (1961) तथा छायावाद : पुनर्मूल्यांकन (1965)इत्यादि। काव्य के क्षेत्र में उन्होंने विपुल लेखन किया। उनकी कुछ प्रमुख काव्यकृतियों का नामोल्लेख यहाँ किया जा रहा है, देखें- वीणा (1927), ग्रंथि (1929), पल्लव (1926), गुंजन (1932), ज्योत्सना (1934), युगांत (1936), युगवाणी (1939), ग्राम्या (1940), स्वर्णकिरण (1947), स्वर्णधूलि

(1947), मधु ज्वाल, उमर खैय्याम का भावानुवाद, खादी के फूल (1948), युगपथ (1949), उत्तरा (1949), रजत शिखर (1952), शिल्पी, अतिमा (1955), सौवर्ण (1956), वाणी (1958), कला और बूढा चाँद (1959), लोकायतन (1964), सत्यकाम (1975) इत्यादि। पंत का पहला महाकाव्य 'लोकायतन' है। इसके बाद भी लगातार कई काव्य संग्रह आए, जैसे- किरण वीणा, पुरुषोत्तम राम, गीत हंस, पौ फटने से पहले, पतझर, एकभाव क्रांति, शंख ध्वनि (1971), शशि की तरी, समाधिता, आस्था, संक्रांति, सत्यकाम और गीत-अगीत (1977)। पंत की काव्यकला का चरमोत्कर्ष पल्लव में ही देखने को मिलता है। अलौकिकता से लौकिकता की ओर बढ़े। इन्होंने 1938 में 'रूपाभ' पत्रिका का संपादन भी किया। इनकी कृति चिदंबरा के लिए इन्हें 1969 में भारतीय ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया। इससे पूर्व 1961 में उन्हें भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण की उपाधि से नवाजा गया था।

बोध प्रश्न

- सुमित्रानंदन पंत की आरंभिक रचनाओं का परिचय दें।
- पंत की साहित्यिक रूचि के विकास पर प्रकाश डालिए।

13.3.3 सुमित्रानंदन पंत की कविताओं (1936 तक) का परिचय

वीणा (1927) : वीणा काव्य संग्रह की कविताओं का रचनाकाल 1918-20 का है। अधिकांश कविताएँ 1918-19 की ही हैं। बहुत कम कविताएँ 1920 की हैं। इस युवा कवि का 'माँ' के प्रति अनुराग भरा गान है 'वीणा'। यह माँ कभी परमात्मा बन जाती है तो कभी प्रियतम है। यह 'माँ' वीणावादिनी है जिन्हें कवि अपनी कृति वीणा समर्पित करते हैं, देखें- "यह तो तुतली बोली में है/ एक बालिका का अधिकार;/ यह अति अस्फुट, ध्वन्यात्मक है,/ बिना व्याकरण, बिना विचार!/ इस बोली में कौन सुनेगा/ इसकी वीणा को निस्सार?/ ताल लय रहित मेरी वीणा/ वीणा वादिनी, कर स्वीकार!"(पंत:1918, उत्सर्ग)। कवि ने अपनी वीणा को अत्यंत साधारण और समस्त गुणहीन कहा है। यह कवि की विनम्रता है। अपनी गुणहीन रचना को उन्होंने माँ सरस्वती को अर्पित किया है। इसमें एक सामान्य मनोविज्ञान भी है कि माँ अपनी संतान को बिना गुण-दोष का आंकलन किए स्वीकार करती है। विद्या और कला की विराट देवी सरस्वती को अपना बाल प्रयास अर्पण करने से पूर्व कवि उनका गुणगान करते हैं। इस कविता की जो 'बालिका' है वह कवि स्वयं हैं। यह अपने कंठ से निरंतर माँ का गुणगान करना चाहती है। दिव्यता का दिव्य गान उसकी पूर्णता में कर सकने में मर्त्य मनुष्य किस हद तक सक्षम हो सकता है! अपने सुत की व्याकुलता को समझ और उसकी आत्मिक शुचिता को जानकर माँ ने उसे आश्वस्त किया कि वह उसे अपने गीत, ताल-छंद सब बतला देंगी, देखें- "बोली थी—मैं बतलाऊँगी/ तुझको अपने गीत पुनीत/ नूपुर ध्वनि कर श्रुति सुखकर!/ ....जीवन भर भी माँ! मैं पूरे/ गा न सकूँगी तेरे गीत/ अपनी वाणी में स्वर भर!" (पंत:1919, वीणा)। कविता के इस अंश की अग्रिम पंक्तियाँ कवि की कल्पना हैं। विराट सत्ता सत्य है। उसकी अनुभूति की जा सकती है। उसके साक्षात्कार की चरम अनुभूति कठिन साधना खोजती है। रामकृष्ण परमहंस की सी साधना। यहाँ कवि ने दिखाया है कि माँ से साक्षात सहज संभव है और वह अपने संतान की

विकलता को हरने के लिए सदा आतुर रहती है। उसके स्वरूप की विराटता का ज्ञान होते ही कवि को अपनी सीमा का भी ज्ञान हो जाता है। 'वीणा' के माध्यम से कवि ने सृष्टि के असीम और अमर्त्य सौंदर्य एवं गुण का प्रेममय प्रार्थनागान किया है। वह बालिका इन गीतों को गा-गाकर खेलती थी। उसके बालमन में जब चिंता व्यापी कि मेरे सारे गीत जब खत्म हो जाएँगे तब मैं क्या गाकर खेलूँगी? तब माँ ने उसे अपने विद्या-वैभव को सिखलाने का वचन दिया। उसकी इस चिंता को हरने के लिए माँ ने यह वचन दिया। माँ कितनी स्नेही होती है और बच्चे कितने निश्छल! विराटता निश्छलता के समीप सहज ही वास करती है। माँ के प्रति उनके प्रार्थना गीतों में प्रकृति का बहुत सुंदर चित्र छाया है। उस प्रकृति का एक अंग बनकर शोभित होने की कवि कामना करते हैं। "नव वसंत का विकसित वन,/ मधुमय मन मृदु सुरभित तन/ एक कुसुम कलिका उस तन की/ मुझको भी कहलाने दो, "। प्राकृतिक आपदा और मानवजन्य आपदा का भी संक्षिप्त चित्रण किया गया है।

दुनिया में अंधकार छाया है। यहाँ जो दीखता है वह नहीं होता है। जो केवल सीधा देखना जानता है वह इस मायाजाल में उलझ ही जाता है। इस 'तिमिर त्रास' को हरने के लिए 'माँ की उस आभा' को कवि पाना चाहता है जिसका उनके हृदय में स्वतः निवास है। भौतिक जीवन में जिस माँ का खालीपन कवि ने महसूस किया है उसी को अपनी साहित्य साधना और आध्यात्मिक चेतना में भरने का प्रयास उनकी कविताओं में दिखाई देता है। सबको सबकुछ देने का आग्रह करते हुए कवि माँ का सानिध्य पाना चाहते हैं। कविता को उन्होंने अपनी प्रेयसी कहकर संबोधित किया है। वे वेदना को भी अपने गीतों से जीवन देना चाहते हैं। उसे जिलाना चाहते हैं। एक दार्शनिकता का पुट भी यहाँ मिलता है। कभी-कभी निराशाएँ उन्हें घेरती हैं पर तुरंत ही वे सचेत होकर आशा के गीत गाने लगते हैं। विशिष्ट, सामान्य से विशिष्ट क्यों? इस समस्या का चित्र खींचा गया है। साथ ही निदान भी कर दिया गया कि विशिष्टता का वह विशिष्ट सम्मान सामान्य जन की उनके प्रति भक्ति का सूचक है। इस संग्रह के गीत द्वैतरहित प्रेम की भावना का पोषण करते हैं। एक भिक्षुक को भिक्षा भी प्रेम से देना है। वीणा की कविताओं में प्रसाद गुण की प्रधानता है। छंद, अलंकार और शब्द विन्यास की योजना प्रभावी है। प्राकृतिक उपमानों की झड़ी लगी हुई है।

ग्रंथि (1929) : प्रेमकाव्य 'ग्रंथि' 1920 के जनवरी महीने में लिखी गई। यह मनुष्यलोक की विशुद्ध प्रेम गाथा है। यह स्वयं कवि के प्रेम और विरह की कहानी है। अपनी प्रेमकथा और जीवन व्यथा को उन्होंने कविता की पंक्तियों में व्यक्त भी किया है। उनके प्रेम की कथा बहुत छोटी है। एक बार संध्या के समय नाव से कहीं जाते हुए; कवि की नाव डूब गई थी। वे किसी तरह किनारे लग गए थे। जब उनकी आँख खुली तो उन्होंने अपने सिर को किसी पर्वतीय सुंदरी की जाँघ पर रखा पाया। वे अपनी स्थिति समझ पाते उससे पहले ही उनका नयन मिलाप उस कन्या से हो चुका था। नयनों का यह प्रथम स्पर्श उन्हें प्रेमानुभूति करा गई। वे दोनों ही प्रेम बंधन में बांध गए। यह प्रेम सात फेरों के गठबंधन तक नहीं पहुँच सका। इसके पीछे कुछ सामाजिक कारण रहे होंगे। समाज को उनका साथ स्वीकार नहीं हुआ। उस सुंदरी का किसी और के साथ विवाह संपन्न

हो गया। इस कृति में यह उल्लेख है कि अपनी प्रेमिका के विवाह के दिन कवि बहुत व्याकुल थे। कवि का यह प्रेम, आजीवन के विरह में परिणत हो गया था। कवि का यह विरह हिंदी साहित्य के लिए वरदान बना और हिंदी के साहित्य भंडार में प्रेमगीत का आविर्भाव हुआ। यदि अपने को विरह की ग्रंथि में वे समेटे रहते तो उनका ही अस्तित्व नहीं बचता! फिर दुनिया उनसे क्या पाता! बिना रुके लगातार आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा भी यहाँ है। विद्वानों ने इस पर संस्कृत काव्य की आलंकारिक प्रणाली का प्रभाव देखा है। शृंगार रस के अंतर्गत संचारी भाव और वियोग शृंगार का भावमय चित्रण किया गया है।

प्रेम: बस, बिना सोचे, हृदय को छीनकर/ सौंप देते हो अपरिचित हाथ में!

विरह: उठ किसी निर्जन विपिन में बैठकर। अश्रुओं की बाढ़ में अपनी बिकी/ भग्न भावी को डुबा दे आँख सी!

परिहास: "तीसरी बोली,'बहुत दिन से'/ बंधे हृदय में संयम गोपन से पला/ प्रेम संप्रति फूटना चाहता है।"

प्रणय: "जब प्रणय का प्रथम परिचय मूकता।/ दे चुकी थी हृदय को तब यत्न से।

आशा: "अमृत आशा! चिर दुःख की सहचरी/ नित नई मिति सी मनोरम रूप सी।"

अश्रु: "ओस जल से सजल मेरे अश्रु हैं/ पलक दल में दूब के बिखरे पड़े!"

वेदना: "वेदना! – कैसा करुण उद्गार है!/ वेदना ही है अखिल ब्रह्मांड यह।"

उन्माद: "आह, उस सर्वोच्च पद की कल्पना/ विश्व का कैसा उपल उन्माद है।"

व्यंग्य: "सुहृदवर! कंगाल, कृश कंकाल सा,/ भैरवी से भी सुरीला है अहा।"

कंगाल घर-बार हीन होता है। प्रेमवंचित लोगों को भी कवि ने इसी श्रेणी में रखा है। चित्रभाषा का प्रयोग आदि से अंत तक देखने को मिलता है। "गर्व सा गिर उच्च निर्झर स्रोत से/ स्वप्न सुख मेरा शिलामय हृदय में/ घोष भीषण कर रहा है वज्र सा,/ वात सा, भूकंप सा, उत्पात सा!/ तारकों के अचल पुलकों से विपुल/ मौन विस्मय छीन कर मेरा पतन/ निर्निमेष विलोकता है विश्व की/ भीरुता को चंद्रमा की ज्योति में!" यहाँ अपनी भावनाओं को प्रकट करते हुए, उससे मेल खाते प्रकृति का चित्र खींचा गया है। इससे कविता का कथ्य प्रभावी हुआ है। समाज की जिन रूढ़ मान्यताओं के सम्मुख व्यक्ति की सु-आशा को तिलांजलि दी जाती है; वह वास्तव में 'विश्व की भीरुता' है। यह विश्व कवि के अनुसार विधाता की मनोहर भूल है। संसार की ऐसी मधुर दुर्बलताएँ उसकी लीला में सहायक होती हैं। मनुष्य यदि अपनी रोजमर्रा पर ध्यान दे तो उसे खुद नहीं पता रहता है कि वास्तव में उसे क्या चाहिए! वह किन चीजों के पीछे किसलिए भाग रहा है! अपनी भावनाओं को रूप देते हुए प्रकृति के साथ उसका तादातम्य बिठाते हुए; बहुत सी गूढ़ बातों की ओर इशारा किया गया है। तीन सखियों के वार्तालाप से इस प्रेमकाव्य का आरंभ होता है। तीसरी सखी अपने प्रणय की स्मृतियों को सुनाती है। प्रियतम को खोजती उस सखी के प्रणय गान पर मुग्ध होकर पहली सखी उसे प्रेम का मर्म बतलाती है जिसे सुनकर

तीसरी सखी कह उठती है तुमने मेरी सरस कथा को धूल में मिला दिया। तब आते हैं, 'अब इधर' कहते हुए कवि अपने आत्मकथ्य के साथ। आखिर में इन्होंने 'प्रेमवंचित' का विश्लेषण किया गया है।

वीणा की भांति इसमें सीधे-सहज तरीके से भावों को व्यंजित न करते हुए, उनकी वक्र व्यंजना की गई है। विविध भावों को दर्शाने के लिए उपमाओं का चित्रमय प्रयोग बहुलता में किया गया है। श्लेष, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय और विरोधाभास इत्यादि अलंकारों का भी प्रयोग किया गया है।

पल्लव (1926) : 'ग्रंथि', 'उच्छ्वास' और 'आँसू' स्वतंत्र और स्वयं में पूर्ण प्रेमकाव्य हैं। 'पल्लव' के आरंभ में 'उच्छ्वास' और 'आँसू' को संकलित किया गया है। इन प्रेम कविताओं का आधार संग्रह की पहली कविता का शीर्षक 'पल्लव' ही है। इसमें 'पल्लव' की सार्थकता पर प्रकाश डाला गया है। "हृदय के प्रणय कुञ्ज में लीन/ मूक कोकिल की मादक गान/ बहा जब तन, मन, बंधन-हीन/ मधुरता से अपनी अनजान;/ खिल उठी रोओं सी तत्काल/ पल्लवों की यह पुलकित-डाल!" नए पल्लव का आना वसंत के आगमन का सूचक है। वसंत में प्रकृति का शृंगार ये नव पल्लव, नव कोंपल, नए फूल- ये सब मिलकर करते हैं। यह शृंगार जब कोयल की सुरीली मदहोश करने वाली आवाज को सुनता है तब झूम उठता है। कोयल की कूक के साथ सारी प्रकृति झूम उठती है। पर कोयल अपनी मधुर आवाज के गुण को नहीं जानती है। वह नहीं जानती कि उसकी आवाज के जादू से ही इन पल्लवों का रोम-रोम हर्षित हो रहा है। ये पल्लव कवि की स्वतः स्फूर्त कविताएँ हैं जो जग-जीवन में नया संचार करने आई हैं। कवि प्रकृति से प्रेम करता है। इसीलिए उसे सरलता प्रिय है। इसीसे उसे बचपन प्रिय है। भोले और निष्पाप बचपन को उन्होंने अपनी 'शिशु' कविता के माध्यम से दिखाया है। कवि का प्रेम भी तो निष्पाप था और उसकी प्रेयसी भोली, जो आज भी उनकी यादों में रहती है। "सरल-शैशव की सुखद-सुधि-सी वही/ बालिका मेरी मनोरम मित्र थी।" कवि का हृदय प्रेम के टूटने के दंश से व्यथित है। अपनी वेदना में उसे यह संसार सभी निरपराधों के लिए एक जेल की तरह लगता है। मनुष्य अपनी दुनिया में एक कैदी है। उसे अपना जीवन अपनी पसंद से जीने की भी स्वतंत्रता नहीं है। "अभी पल्लवित हुआ था स्नेह,/ लाज का भी न गया था राग;/ पड़ा पाला-सा हा! संदेह/ कर दिया वह नव राग विराग।" (उच्छ्वास)। पुनः उनकी वेदना फूटती है और वे कह उठते हैं, "आह, यह मेरा गीला-गान!/ वर्ण-वर्ण है उर का कंपन,/ शब्द-शब्द है सुधि का दंशन;/ चरण-चरण है आह/ कथा है कण-कण करुण अथाह;/ बूंद में है बाडव का दाह।" (आँसू)। एक-एक शब्द वेदना का साकार रूप बन सम्मुख खड़े हैं। और भी बहुत सी कविताएँ हैं। प्रकृति चित्रण भी विशिष्ट है। बादल, झरना, फूल, हिलोरें मारती लहरें, तारें, उल्लू, झींगुर, पपीहा, पत्ते, कांटे, अंधकार, अवसाद, वसंत - इन सबका अनेकानेक शब्दमय चित्र यहाँ सुलभ है। इसके साथ दार्शनिक चिंतन, रहस्यवाद, ब्रह्म, माया और जीवन का सार जैसे गंभीर विषय भी हैं। जीवन का गान क्या है? यह सुख के आरंभ और अंत का ही गान है। इसकी चर्चा अगली इकाई में विस्तार से की जाएगी।

गुंजन (1932) : इस काव्यसंग्रह को पंत अपने प्राणों का उन्मन गुंजन कहते हैं। इसमें उन्होंने जीवन गान संबंधी कविताओं को संकलित किया है। संसार में सुख-दुःख, फूल-शूल, मिलन-विरह सबकुछ है। किसके हृदय में क्या है यह देखने की कोशिश में वे पाते हैं कि सबका जीवन सुख-दुःख का मिलाजुला रूप है। सुख से दुःख को अपनाने की कला जिसको आती है वही सुखमय जीवन जी पाता है। आत्मा, जीवन और सुख-दुःख जैसे भावों का दार्शनिक विवेचन किया गया है। इनकी अंतरंगता को खोजते हुए भी प्रकृति नहीं छूटती। भावी पत्नी के प्रति शीर्षक कविता में कवि की स्त्री के प्रति भावनाएँ उजागर हुई हैं। आज रहने दो गृह काज में भी उन्होंने 'प्राण' शब्द से पत्नी को संबोधित किया है। मधुबन, विहग, चाँदनी, तारा, अप्सरा और नौका विहार को संबोधित करते हुए गीत भी हैं। तप, आत्मसंयम और सुख-दुःख के प्रति तटस्थता वाला जीवन दर्शन यहाँ दिखाई देता है। कवि सौंदर्यसाधक एवं सौंदर्याभिलाषी हैं। इसीसे वे जीवन की सुंदरता की कल्पना करते हैं, "मेरा प्रतिपल सुंदर हो/ प्रतिदिन सुखकर सुंदर हो/ यह पल-पल का लघु जीवन/ सुंदर सुखकर, शुचितर हो!" यह1926-31 के मध्य का मधु संचय है। जीवन में सुख हो, सुंदरता हो और पवित्रता हो। जीवन विकृतिहीन और प्रेममय हो।

ज्योत्सना (1934) : यह काव्य नाटिका है। इसमें पांच अंक हैं। संध्या और छाया की परस्पर बातचीत के माध्यम से यह सूचना प्रसारित होती है कि इंद्र धरती पर सुव्यवस्था कायम करने के लिए ज्योत्सना को शासन की शक्ति थमाता है। ज्योत्सना, पवन और सुरभि तीनों पृथ्वी पर हैं। पृथ्वी का आधुनिक काल अपने चरम पर है। चारो ओर शक्ति का बोलबाला है। धर्म, नीति और सदाचार दुबके पड़े हुए हैं। अंधविश्वास और रूढ़ियों के अंधानुकरण से मानव जीवन का सौंदर्य मंद पड़ गया है। उनके चेतनाविहीन जीवन में नव चैतन्य का संचार करने के लिए ज्योत्सना कला का मार्ग ढूढ़ती है। यह कला काव्य और संगीत है जो मानव के मन में स्वप्न और कल्पना के सहारे प्रवेश पाते हैं। ठीक वैसे जैसे पवन और सुरभि मानव काया में प्रवेश पा सकते हैं। इसी से कवि ने पवन और सुरभि को स्वप्न और कल्पना का रूपक बनाया है। इनके प्रयास से ही संसार आभा को पा सकता है और उसकी जड़ चेतना मिट सकती है। मनुष्य के भीतर आलोकित उसकी नव भावनाएँ उसके अंतःकरण के साथ बाह्य वातावरण को भी प्रकाशित कर सकता है। विश्वबंधुत्व के स्वप्न को साकार करने के लिए मानव समाज के तमाम सद्‌गुणों की कवि ने मानव मन में प्रतिष्ठा की है। समानता, प्रेम, दया, भक्ति, करुणा, शक्ति, दया, निष्काम कर्म इत्यादि सद्‌गुणों के छा जाने से तमाम कुवृत्तियां और दुर्गुण अंधकार में खो जाते हैं। अब सारी धरा पर प्रकाश-ही-प्रकाश है।

नाटकीयता का तत्व कम होने से भी यह एक सफल काव्य नाटिका के रूप में हिंदी साहित्य में समादृत है। इसका सिद्धांत संपन्न भावना चित्र मनुष्यता का पक्षधर है। इस पर शेली के नाटकों का प्रभाव देखा गया है। मानव जीवन के विकास बिंदुओ को एक क्रम में देखने की चेष्टा यहाँ दिखाई देती है साथ ही 'मानव मंगल' के साथ समस्त भूमंडल की एकात्मकता की कामना भी।

युगांत (1936) : इस संग्रह की कविताओं को कवि ने स्वयं अपना नया प्रयास कहा है जो पल्लव से एकदम अलग है। इसका विषय और प्रतिपादन शैली पल्लव से अलग है। इसीसे इसका नाम भी सार्थक लगता है कि यह एक युग के अंत का सूचक है। पल्लव जिसे छायावाद की उत्कृष्ट कृति माना गया; उससे नितांत भिन्न रूप में युगांत की रचनाओं को रचा गया। हर परिवर्तन या नयापन कुछ समय गतिमान रहने के बाद कुछ रुढियों में जकड़ जाता है जिससे स्थिरता पैदा होती है। स्थिरता अंत का पर्याय है। नया जीवन आता रहे, संसार चलता रहे इसलिए कवि कोयल से अग्निकण बरसाने को कहते हैं। वे अग्निकण पुरानी रूढ़ियों का अंत करेंगें और नया मानवपन संसार में लाएँगे। "गा कोकिल बरसा पावक कण/ नष्ट-भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन,/ ध्वंस-भ्रंश जग के जड़ बंधन!/ पावक पग धर आवे नूतन,/ हो पल्लवित नवल मानवपन!"

इस संसार में नए वसंत का प्रभात लाना चाहता है। यह वसंत केवल मानव जीवन में नहीं प्रकृति का भी स्वर्गिक शृंगार करे। "कलि के पलकों में मिलन स्वप्न,/ अलि के अंतर में प्रिय गान/ लेकर आया, प्रेमी वसंत-/ आकुल जड़-चेतन स्नेह-प्राण!" प्रकृति चित्रण भी यहाँ भरपूर किया गया है। इसमें और पूर्व के प्रकृति चित्रण की भिन्नता यह है कि पहले प्रकृति का चित्रण करते हुए कवि उसे अपनी भावनाओं का व्यंजक बनाता था पर इस बार प्रकृति का प्रयोग कर वे मानव जीवन में भाव भर रहे हैं; उसे प्रेरित कर रहे हैं। इस प्रेरित करने के भाव को उस युग की आवश्यकता के अनुरूप देख सकते हैं। प्रकृति का हर अंग, हर कण सुंदरतम है पर मानव का जीवन मलिन है। यह देखकर कवि पूछते हैं, "क्यों म्लान तुम्हारे कुंज, कुसुम, आतप, खग?/ जो एक असीम अखंड मधुर व्यापकता/ खो गई तुम्हारी वह जीवन सार्थकता!/ लगती विश्री औ' विकृत आज मानव कृति/ एकत्व शून्य है विश्व मानवी-संस्कृति!" पशु-पक्षी संग-संग गुंजार कर रहे हैं। सारा संसार ऐसे खिला है मानो सौ दलों वाला कमल हो पर मनुष्य श्रीहीन और तेजहीन हो गया है। अपने संस्कारों से च्युत वह प्रभाहीन और स्वघाती हो गया है। इस मानव की खोई हुई एकता को वापस लाना इन कविताओं का एक ध्येय रहा है। मानव जीवन की विकृतियों के कारणों की खोज भी की गई है। प्रथम मिलन और प्रेम की भी कुछ कविताएँ हैं। मुख्य स्वर मानवतावाद ही रहा है। जीवन की दुर्दशा पर कवि का क्षोभ उनकी ताज कविता में भी प्रकट हुआ है, "मानव! ऐसी भी क्या विरक्ति जीवन के प्रति?/ आत्मा का अपमान प्रेत औ छाया से रति!!"तितली और संध्या का संक्षिप्त शब्द चित्र बनाते हुए कवि ने एक लंबी कविता लिखी है 'बापू के प्रति'। इसमें देश और समाज के हित में बापू के द्वारा किए गए कार्यों का कवित्वपूर्ण उल्लेख है। असहयोग आंदोलन के दौरान एक बार कवि ने महात्मा गांधी का व्याख्यान सुना था। ये उनसे अवश्य प्रभावित हुए थे, तभी बापू के लिए लिख सके, "तुम रक्तहीन तुम मांसहीन/ हे अस्थिशेष तुम अस्थिहीन।" पंत ने बापू का विराट महामानव की तरह चित्र खींचा है।

बोध प्रश्न

- 'वीणा' की रचनाओं में कवि ने क्या भाव भरे हैं?
- कवि के प्रेमकाव्य ग्रंथि पर प्रकाश डालिए।
- 1936 तक की पंत की रचनाओं का रचनाकाल बताइए।

13.3.4 हिंदी साहित्य में सुमित्रानंदन पंत का स्थान एवं महत्व

हिंदी साहित्य में पंत का रचना काल छायावाद से आरंभ होकर नई कविता तक छाया रहा। युग की आवश्यकता और चेतना के अनुरूप इनके साहित्य का स्वर भी परिवर्तित होता रह। अपनी बेजोड़ कल्पना के लिए उनके समृद्ध शब्द ज्ञान के लिए उनके सहयोगी उन्हें 'मशीनरी ऑफ़ वर्ड्स' कहते थे। काव्य के क्षेत्र में उन्होंने भाषा में कोमलता डाली। ब्रजभाषा से सीधे खड़ी बोली हिंदी में कविता करना साहित्य के मानकों पर उचित था। ब्रज की जिस मिठास का आदी साहित्य समाज रहा उसकी खड़ी बोली में तब कमी महसूस हुई। इस कमी को पाटने के लिए और काव्य भाषा को लालित्यपूर्ण रखने की सोच के साथ ही कवियों ने कई प्रयोग किए। शब्द और भाषा पर किए गए पंत के प्रयोगों का भी मूल आशय यही रहा। भले इससे शब्द का आडंबर बढ़ा हो पर ध्येय आडंबर को जन्म देना नहीं था। खड़ी बोली के काव्यात्मक प्रयोग में लालित्य और मिठास बरक़रार रखना ही अभीष्ट था। राहुल सांकृत्यायन के शब्दों में, "एक सच्चे पारखी की तरह पंत ने त्रिकाल से मौजूदा शब्दों को सेर छटांक में नहीं, रत्ती और परमाणुओं के भार में तौलकर उनके मोल को बड़ी बारीकी से आँका, और उसे किसी यूनानी प्रस्तर-शिल्पी की भांति अपनी छेनी और हथौड़े के बहुत कोमल और दृढ़ हाथों से काटा-छांटा, उसे सुंदर भावों के प्रगट करने का माध्यम बनाया। शब्दों के सुंदर निर्माण और विन्यास में पंत अद्वितीय हैं।" हिंदी में सुंदर शब्दों का निर्माण और प्रयोग, पंत की मौलिक देन है। ऐसा शब्द विन्यास उनके समकालीनों में भी देखने को नहीं मिला। भाषा के रुढ स्वरूप को गतिमान किया। इसके लिए भाषा की लाक्षणिक शक्ति का विकसित होना जरुरी था। इस समस्या की पूर्ति के लिए पश्चिम के अलंकारों (विशेषण विपर्यय, मानवीकरण, ध्वनि चित्रण) को अपनाया गया। अलंकारों को भी लाक्षणिक रूप में प्रयोग किया जाने लगा। अन्योक्ति और समासोक्ति; दृष्टांत से अधिक प्रिय हो गए। साहित्य रचना में मानसिक स्वतंत्रता का वरण किया। छंद और अलंकार के प्रेमी होते हुए भी स्वच्छंद छंद में काव्य रचना का प्रयास भी उल्लेखनीय है। हिंदी में मुक्त शैली के प्रणयनकर्ताओं में से पंत भी एक हैं। "पंतजी ने हिंदी के कोमल छंदों को चुनकर संगीत और गति का पूर्ण ध्यान रखते हुए भावानुकूल परिवर्तन करते हुए इस कला को विकसित किया। लय और ताल के आधार पर निराला जी ने स्वच्छंद छंद की सृष्टि की।" आचार्य शुक्ल ने लाक्षणिकता के प्रयोग में घनानंद के बाद पंत को ही सिद्धहस्त माना है।

बोध प्रश्न

- हिंदी भाषा को पंत की देन पर राहुल सांकृत्यायन के विचार को स्पष्ट कीजिए।
- पंत ने पश्चिम के किन अलंकारों को अपनाया? स्पष्ट करें।

13.4 पाठ सार

पहाड़ी वादियों के अनन्य अनुरागी पंत का व्यक्तित्व धीर-गंभीर था। उनकी वेश-भूषा कुछ अनूठी थी जिससे लोग उनका अनुकरण करना चाहते थे। उनके लंबे बालों ने लोगों को अधिक आकर्षित किया। 'महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ

और महर्षि अरविंद'- इन सबका प्रभाव उनके जीवन पर पड़ा। उनकी व्यक्तित्व रचना में घर के धार्मिक वातावरण का भी अच्छा प्रभाव रहा। रचनात्मकता की प्रेरणा उन्हें प्रकृति की सुंदरता के सानिध्य में प्राप्त हुआ। गांधीजी का भाषण सुनने के बाद उन्होंने कॉलेज भी छोड़ दिया, भले यह संकोचवश किया। उनकी आरंभिक रचनाएँ उस समय की हस्तलिखित सुधाकर, मर्यादा और अल्मोड़ा अखबार इत्यादि में छपी थी। अब यह अप्राप्य होगी। उनकी प्रथम प्रकाशित कृति जो अब भी मिलती है; वह है, 'वीणा'। यह प्रार्थनापरक होते हुए भी भावना प्रधान है। इस संग्रह की 'प्रथम रश्मि', 'अंधकार', 'चेतक' ,'माँ' इत्यादि कविताएँ अपना ध्यान खींचती हैं। 'चेतक' कविता में ओज गुण है। प्रथम रश्मि एक जागृति गान है। प्राकृतिक बिंबों से अपने भाव जगत को प्रकट करने में दक्ष कवि इस प्रकृति के हर कण के अंतः को जानने और समझने की दृष्टि रखता है। वह उसकी बाहरी सुंदरता पर ही नहीं रीझता उसके अंतर्मन की पकड़ रखता है। वीणा की भाषा सांकेतिक और लाक्षणिक है। ग्रंथि गीतिकाव्य है। प्रणय इसका केंद्रीय भाव है। एक अविवाहित युवक ने प्रणय के गूढ़ रहस्यों को इसमें खोलकर रख दिया है। अपनी प्रेयसी से बिछोह की ग्रंथि जो कवि के हृदय में बंधी हुई है; उसका 'आह गान' है यह गीतिकाव्य। विरहजन्य दुःख से ही कविता का वरदान मिलता है। इसमें कवि की आत्मकथा और उसकी वेदना के स्वर हैं। इसमें अलंकारों का सायास प्रयोग किया गया है। नगेंद्र के शब्दों में 'पल्लव का अल्हड़ कवि अब एक साथ बड़ा संयत और गंभीर हो गया है।' इस संग्रह की 'तप रे मधुर-मधुर मन' को ऊँची कविता कहा है। पल्लव में प्रकृति चित्रण और कल्पना तत्व का समन्वय है। भाव, चिंतन और रहस्य को भी कवि ने गूंथा है। पर पहली नजर में केवल प्रकृति ही नजर आती है। 'गुंजन' कवि के जीवन का मधुसंचय है। ज्योत्सना काव्यनाटिका है। यह लोकमंगल के आदर्श से प्रेरित है। पूरे धरा को विकृतियों से मुक्त करके धरती पर स्वर्ग स्थापित करने का प्रयास इसमें दृष्टिगोचर हुआ है। 'युगांत' में मानवतावाद का स्वर तीव्र हुआ है और कवि ने अपना मूड यहाँ से बदलना आरंभ किया। छायावाद के अंत के साथ जिस नए काव्ययुग और युग के अनुकूल भाषा को गढ़ने और साहित्य रचने की ओर कवि एक बार फिर प्रवृत्त हुआ; युगांत को उसकी पृष्ठभूमि माना जा सकता है।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से आप निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त कर सकते हैं -

1. काव्यभाषा के रूप में हिंदी को प्रतिष्ठित करने में प्रयासशील रहे। कविता की भाषा के साथ छंद और अलंकारों पर भी कई प्रयोग किए।

2. अपनी कविताओं के लय-तान, सुर और सरसता को बनाए रखने के लिए उन्होंने व्याकरण की लीक से हटकर प्रयोग किया और अपने प्रयोगों का उल्लेख अपनी कृतियों के प्रवेश भाग में स्वतः कर दिया।

3. पंत ने ऐसे प्रेमगीतों का सृजन किया जिनमें मनःतत्व प्रधान है। मनुष्य लोक का होते हुए भी इनमें कामुकता को प्रश्रय नहीं मिला है। प्रेम की दिव्यता का गान कवि ने गाया है। ग्रंथि, उच्छवास और आँसू इसके उदाहरण हैं।

4. वीणा के विशुद्ध प्रार्थनागीतों में भी कवि की दार्शनिकता झलकती है। गुंजन में सुख-दुःख के प्रति तटस्थता का भाव दिखाया गया है। उनमें सामंजस्य बनाना ही जीवन है। कवि के जीवन में दुःख का भार अधिक रहा जिसका उल्लेख 'ग्रंथि' में किया गया है।

5. कविहृदय में प्रकृति के साथ स्त्री के प्रति भी असीम अनुराग है। माँ, सखा, प्रेयसी, पत्नी और अप्सरा के रूप में स्त्री इनकी कविताओं में चित्रित है; जिनके प्रति कवि की अत्यंत कोमल भावनाओं का दर्शन होता है।

13.6 शब्द संपदा

1. च्युत = गिरा हुआ
2. तिमिर = अँधेरा
3. त्रास = डर, कष्ट
4. भीरुता = कायरता
5. विशेषण विपर्यय = विशेषण का उचित स्थान पर प्रयोग न करके किसी अमूर्त भाव की अभिव्यक्ति के लिए उसका अलग प्रयोग करना

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पंत के व्यक्तित्व पर चर्चा कीजिए।
2. पंत की रचना यात्रा पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. हिंदी साहित्य को पंत की देन और साहित्य में उनका स्थान क्या है?
4. वीणा से पल्लव तक की रचनाओं में आप कवि की अनुभूति या रचना प्रक्रिया में क्या बदलाव पाते हैं, रेखांकित कीजिए।

खंड (ब)

(अ) लघु श्रेणी के प्रश्न
निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. पंत को रचना की प्रेरणा कहाँ से मिली?
2. 'गुंजन' काव्य संग्रह पर प्रकाश डालिए।
3. 'युगांत' का विवेचन-विश्लेषण कीजिए।
4. पंत की रचनाओं की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I सही विकल्प चुनिए

1. पंत का जन्म कब हुआ था? ( )

    (अ) 1800 (आ) 1900 (इ) 1977 (ई) 1902

2. पंत को ज्ञानपीठ पुरस्कार कब मिला? ( )

    (अ) 1969 (आ) 1959 (इ) 1926 (ई) 1960

3. उन्हें किस कृति पर ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला? ( )

    (अ) वीणा (आ) गुंजन (इ) चिदंबरा (ई) पल्लव

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. ज्योत्सना ....है। इसमें ....अंक हैं।
2. पंत की आरंभिक रचनाएँ हस्तलिखित सुधाकर, ...और .... अख़बार में छपती थी।
3. वर्ष .... में पंत को भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण सम्मान दिया गया।
4. पल्लव का ....कवि अब एक साथ बड़ा .... और .... हो गया है।

III सुमेल कीजिए

i) गुंजन	(अ) 1927
ii) युगांत	(आ) 1929
iii) वीणा	(इ) 1936
iv) ग्रंथि	(ई) 1932

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. सुमित्रानंदन पंत, प्रो.नगेन्द्र
2. आधुनिक कवि(भाग-2), देव पुरस्कार ग्रंथावली
3. सुमित्रानंदन पंत, रामरतन भटनागर
4. साठ वर्ष : एक रेखांकन, सुमित्रानंदन पंत
5. सुमित्रानंदन पंत, शचीरानी गुर्टू

इकाई 14 : पल्लव की आलोचना

रुपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 मूल पाठ : पल्लव की आलोचना
(क) पल्लव का सामान्य परिचय
(ख) पल्लव पर विभिन्न विद्वानों के दृष्टिकोण
(ग) पल्लव में वर्णित मुख्य विषय
(घ) पल्लव का कला पक्ष
14.4 पाठ सार
14.5 पाठ की उपलब्धियाँ
14.6 शब्द संपदा
14.7 परीक्षार्थ प्रश्न
14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

'पल्लव' (1926) सुमित्रानंदन पंत की काव्यकृति है। इसमें 1918 से 1925 तक की हर वर्ष की दो-तीन कविताओं को संकलित किया गया है। इनमें से अधिकांश कविताएँ 'सरस्वती' एवं 'श्री शारदा' पत्रिका में पहले ही प्रकाशित हो चुकी थीं। 'पल्लव' के आरंभ में कविता की भाषा के रूप में खड़ी बोली हिंदी की समर्थता एवं अपनी कविता तथा काव्यकला के बाह्य अंग पर कवि ने 'प्रवेश' के अंतर्गत अपने विचार रखे हैं। कवि का यह आत्मकथ्य 'प्रवेश' पल्लव की लंबी भूमिका है। पल्लव को पढ़ने से पूर्व इसे पढ़ना आवश्यक है। इससे कवि का पाठ एवं उसकी दृष्टि दोनों को ही समझना आसन होगा। इस 'प्रवेश' से पूर्व कविता की चार पंक्तियां लिखी गई हैं जिनसे पल्लव की रचना के पीछे कवि का सहज उद्देश्य प्रकट हो रहा है, वे पंक्तियाँ इस प्रकार हैं- "जीर्ण-जग के पतझड़ में प्रात/ सजाती जो मधुऋतु की डाल,/ उसी का स्नेह-स्पर्श अज्ञात/ खिलावे मेरे पल्लव-बाल!" 'पल्लव' के रूप में एक अज्ञात स्नेह-स्पर्श का प्रस्फुटन हुआ है।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों! खड़ी बोली के आधुनिक कवि सुमित्रानंदन पंत का परिचय आप पिछली इकाई में प्राप्त कर चुके हैं। इस इकाई में आप उनकी काव्यकृति 'पल्लव' का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप –

- पल्लव का विवेचन-विश्लेषण कर सकेंगे।

- पल्लव में चित्रित प्राकृतिक सौंदर्य को स्पष्ट कर सकेंगे।
- पंत के काव्य में स्त्री चित्रण,प्रणय भाव एवं प्रेम को स्पष्ट कर सकेंगे।
- पंत की जीवन के प्रति दृष्टिकोण से परिचित हो सकेंगे।
- पल्लव की कविताओं के कला पक्ष को स्पष्ट कर सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : पल्लव की आलोचना

(क) पल्लव का सामान्य परिचय

पल्लव कवि पंत की आरंभिक रचनाओं का प्रौढ़तम संग्रह है। प्रेम कविता 'आँसू' और 'उच्छ्वास' कविताएँ जो पहले स्वतंत्र रूप में प्रकाशित हुई थी, उन्हें भी इस संग्रह में संकलित किया गया है। 'पल्लव' केवल पल्लव है। पल्लव में केवल प्रकृति गान नहीं है इसमें प्रेम गान भी है। इसकी रचनाकाल की अवधि में पंत से प्रकृति की नैसर्गिक सुंदरता का साथ छूट गया था। वे अब उनकी स्मृतियों में निवास कर रहीं थी। पल्लव पर अपना मत प्रकट करते हुए पंत लिखते हैं, "पल्लव की अधिकांश रचनाएँ प्रयाग में लिखी गई हैं। 1921 के असहयोग आंदोलन के साथ ही हमारे देश की बाहरी परिस्थितियों ने भी जैसे हिलना-डुलना सीखा है। युग-युग से जड़ीभूत उनकी वास्तविकता ने भी जैसे, हिलना-डुलना सीखा है। युग-युग से जड़ीभूत उनकी वास्तविकता में सक्रियता तथा जीवन के चिन्ह प्रकट होने लगे। उनके स्पंदन कंपन तथा जागरण के भीतर से एक नवीन वास्तविकता की रूपरेखाएँ मन को आकर्षित करने लगीं। मेरे मन के भीतर वे संस्कार धीरे-धीरे संचित होने लगे, पर पल्लव की रचनाओं में वे मुखरित नहीं हो सके। न उसके स्वर उस नवीन भावना को वाणी देने के लिए पर्याप्त तथा उपयुक्त प्रतीत हुए। 'पल्लव' की सीमाएँ छायावाद की अभिव्यंजना की सीमाएँ थीं, वह पिछली वास्तविकता के निर्जीव भार से आक्रांत उस भावना की पुकार थी, जो बाहर की ओर राह न पाकर 'भीतर' की ओर स्वप्न-सोपानों पर आरोहण करती हुई युग के अवसाद तथा विवशता को वाणी देने का प्रयत्न कर रही थी। और साथ ही काल्पनिक उड़ान द्वारा नवीन वास्तविकता की अनुभूति प्राप्त करने की चेष्टा कर रही थी।" यह कवि की आत्मस्फूर्ति का गान है जिसमें उनकी भावप्रवणता, कल्पनाप्रियता और कला के प्रति उनका मोह दिखाई देता है।

बोध प्रश्न

- पल्लव की रचना के पीछे कवि का उद्देश्य क्या रहा?
- पल्लव की रचनाकाल के दौरान देश की सामाजिक स्थिति और कवि की मनःस्थिति कैसी थी?

(ख) पल्लव पर विभिन्न विद्वानों के दृष्टिकोण

प्रकृति के प्रति दुर्निवार आकर्षण पंत में एकदम आरंभ से मिलता है। ...प्रकृति एक ओर, और मनुष्य दूसरी ओर इनके समीकरण की चिंता सुमित्रानंदन पंत को पहले है। पर यह

समीकरण क्रमशः बन नहीं पाता। प्रकृति-चित्रण और मानवीय नियति एक दूसरे से छूट जाते हैं; यह पंत की रचना-प्रक्रिया और समूचे छायावाद के लिए एक बड़ी काव्यात्मक दुर्घटना कही जा सकती है। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)

रवीन्द्र की 'उर्वशी' एक उदात्त कृति है, क्योंकि उसमें उनका अनुभव पुंजीभूत रूप में व्यक्त हो सका है। शेली की 'पश्चिम प्रभंजन' और कीट्स की 'नाइटिंगेल' भी ऐसी ही रचनाएँ हैं। वड्र्सवर्थ की 'कोयल' जैसी गीतियों में गठन की वैसी ही दृढ़ता है। पंत की 'परिवर्तन' जैसी कुछ रचनाओं में ही यह गठन पाई जाती है। (डॉ. देवराज)

पंत की प्रसिद्ध कल्पनापूर्ण कविता 'बादल' शेली की 'क्लाउड' कविता से प्रेरित है। शेली ने बादल का भयंकर रूप चित्रित किया है पर पंत ने उसका मनोहर रूप चित्रित किया है। (इंद्रनाथ मदान)

पंत की अधिकांश कविताओं पर बंगला साहित्य एवं रवीन्द्रनाथ के गीतों का प्रभाव है। परिवर्तन को छोड़कर पंतजी की अन्यान्य कविताएँ जो 'पल्लव' में आई हैं, जितनी मधुर हैं, उतनी ओजस्विनी नहीं। जान पड़ता है, बाल-रचनाएँ हैं। पंखुड़ियों को खोलने की चेष्टा की गई है। हिंदी की मधुरता के साथ इस समय विशेष ओज की जरूरत है। विश्व साहित्य के कवि समाज पर उसी तरह के कवि का प्रकाश पड़ सकता है, जो भावना के द्वारा मन को आकर्षक रीति से उन्नत-से-उन्नत विचार कला के मार्ग से चलकर दे सके। (निराला)

छायावाद की कविता की पहली दौड़ तो बंगभाषा की रहस्यात्मक कविताओं के सजीले और कोमल मार्ग पर हुई। पर उन कविताओं की बहुत कुछ गतिविधि अंग्रेजी वाक्य-खंडों के अनुवाद द्वारा संघटित देख, अंग्रेजी काव्यों से परिचित हिंदी कवि सीधे अंग्रेजी से ही तरह-तरह के लाक्षणिक प्रयोग लेकर उनके ज्यों के त्यों अनुवाद जगह-जगह अपनी रचनाओं में जोड़ने लगे। कनक प्रभात, विचारों में बच्चों की साँस, स्वर्ण समय, प्रथम मधुबाल, तारिकाओं की तान, स्वप्निल कांति ऐसे प्रयोग अजायबघर के जानवरों की तरह उनकी रचनाओं के भीतर इधर-उधर मिलने लगे। ...पंतजी अलबत प्रकृति के कमनीय रूपों की ओर कुछ रुककर हृदय रमाते पाए गए। छायावाद के भीतर माने जानेवाले सब कवियों में प्रकृति के साथ सीधा प्रेम संबंध पंतजी का ही दिखाई देता है। प्रकृति के अत्यंत रमणीय खंड के बीच उनके हृदय ने रूप रंग पकड़ा है। 'पल्लव', 'उच्छवास' और 'आँसू' में हम उस मनोरम खंड की प्रेमार्द्र स्मृति पाते हैं।... (रामचंद्रशुक्ल)

बोध प्रश्न

- छायावाद काल में कवियों की साहित्यिक मनःस्थिति क्या थी? भाषा और रचना के पीछे उनका रुझान किस तरह काम कर रहा था?
- पंत और उनकी रचनाओं पर विद्वानों ने क्या-क्या अभिमत दिया है?

(ग) पल्लव में वर्णित मुख्य विषय

'वीणा' और 'ग्रंथि' के बाद 'पल्लव' का प्रकाशन हुआ। साहित्यप्रेमियों ने अनुपम और उत्कृष्ट कलात्मक कृति कहते हुए इस कृति का स्वागत किया। कुछ विद्वानों के साथ स्वयं पंत ने भी इसकी सीमाओं का उल्लेख किया। पल्लव शिशुओं के पवित्र प्रेम और वन की पंछियों का गान हैं। कोई मनुज सोते-सोते ही मानो मुस्काता हो; इस पल्लव में उसकी स्वप्निल मुस्कान जाग रही है। इसमें वेदना है, प्रणय है, आँसू है, हास है, रात-दिन-सांझ है, मधुमास है और है नवोढ़ा की लज्जा। प्रकृति की रूप छवियों के साथ अनेकानेक भावों की मधुर प्रस्तुति है 'पल्लव'। जैसे कोमल पल्लव वैसे ही कोमल, मधुर और सुंदर 'पल्लव' के गीत।

प्रकृति चित्रण : प्रकृति की गोद में पले पंत का प्रकृति के संग जन्मजात संबंध है। प्रकृति के प्रति उनका यह अनुराग उनकी आरंभिक कविताओं में विशेष रूप से दिखाई देता है। काव्य संग्रह पल्लव की पहली कविता का शीर्षक भी 'पल्लव' है। अपने इस काव्य संग्रह का परिचय देने के लिए उन्होंने इसी कविता की पंक्तियों का प्रयोग किया है- "न पत्रों का मर्मर संगीत,/ न पुष्पों का रस, राग, पराग;"। पल्लव का अर्थ है 'नए हरे कोमल पत्ते'। 'हरा' हरियाली का द्योतक है। इससे विलग, इनके भीतर कोई रहस्य नहीं है। ये उतने ही हैं; जितने और जैसे दिखाई दे रहे हैं। प्रकृति के अपने बाह्य निरीक्षण का प्रकटीकरण यहाँ हुआ है। ये पल्लव कब खिलते हैं? हर बंधन से आजाद, प्रेममग्न किसी कोयल का मदहोश कर देने वाला गान सुनाई देता है तब ये पल्लव खिलते हैं! यहाँ विरोधाभास यह है कि वह कोयल मूक है फिर गाती भी है। भावार्थ यह कि पल्लव का खिलना प्रमुदित जीवन का पर्याय है। जीवन बिना किसी बंधन के जब सुकून भरा होगा तब ही वहाँ मादक गान या प्रेम-प्रणय की गुंजाइश होगी। प्रकृति का वसंत और नवोल्लास मानव जीवन में भी छाए।

'उच्छ्वास' प्रेमगीत में सावन और भादो में प्रकृति के बदलते चितवन का चित्र है। प्रेम में हारे हुए कवि का मन विचलित है। उसकी आह भरी साँसे जो उसके दुःख का प्रतिरूप है। उस दुःख की छाया में अपने आंसुओं को गूंथकर पूरे आकाश को बादल की तरह घेर लेने को उद्द्यत हैं। प्रेमी का आँसू केवल आँसू नहीं वह अनमोल है। वर्षा का चित्रण करते हुए कवि उससे अपना संताप और पूरे संसार का पाप हरने का अनुरोध करते हैं, देखें- "गरज, गगन के गान! गरज गंभीर-स्वरों में,/ भर अपना संदेश उरों में औ' अधरों में;/ बरस धरा में, बरस, सरित, गिरि, सर, सागर में,/ हर मेरा संताप, पाप जग का क्षणभर में।" (उच्छ्वास, सावन)

जल में ताप तो हरता ही है। पाप हरने की शक्ति भी उसके पास है। अल्मोड़ा की प्राकृतिक सुषमा से कवि की घनिष्ठता रही है। वैसे ही पर्वतीय प्रदेश की घाटी का एक सुंदर चित्र, देखें- "मेखलाकार पर्वत अपार/ अपने सहस्र दृग सुमन फाड़,/ अवलोक रहा है बार-बार/ नीचे जल में निज महाकार!/ -जिसके चरणों में पला ताल/ दर्पण-सा फैला है विशाल!!" विशाल पर्वतों की परछाई उनके नीचे बहते हुए जलराशि में पड़ रही है। इसकी कल्पना करते हुए यहाँ कहा गया है मानो ये पर्वत बार-बार अपनी हजारों आँखों से उस ताल रूपी आईने में अपने

विशाल आकार को देख रहा है। प्रकृति को जड़ नहीं; चेतन रूप में चित्रित किया गया है। केवल जल, फूल, तारे, चांदनी रात, संध्या, सागर और वसंत की सुंदरता को ही नहीं निहारते कवि; वे उनसे कुछ सीखने की इच्छा भी रखते हैं। जैसे, भौरें से उसका मीठा गान सीखना चाहते हैं। इसके लिए वे उसे मधुप कुमारी कह कर संबोधित करते हैं। संबोधन में भी एक अपनापन और आदर है। "सिखा दो ना हे मधुप-कुमारि!/ मुझे भी अपने मीठे गान"(मधुकरी)। 'मोह' कविता में कवि कहते हैं, "वृक्षों की छाया, जल की तरंगों, इन्द्रधनुष के रंगों को, कोयल के बोल मधुकर की वीणा, कोमल कली और फूलों तथा सुधारश्मि युक्त जल –इन सबको छोड़कर मैं कैसे केवल तुम्हारे लिए छोड़ दूँ!" इसे उनके प्रकृति प्रेम एवं उनके संकोच दोनों ही रूपों में विद्वानों ने देखा है।

स्त्री चित्रण और प्रेम : 'पल्लव' में स्त्री को सौंदर्य, स्नेह और तृप्ति की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया गया है। अपनी 'नारी रूप' शीर्षक कविता में कवि ने स्त्री के लिए 'देवि', 'माँ', 'सहचरी' और 'प्राण' जैसे संबोधनों का प्रयोग किया है। बचपन की सरलता और भोलेपन से वे स्त्री का साम्य बिठाते हैं। प्रेम इन्हीं तत्वों से उपजता है और हृदय सरलता की ओर ही बिना प्रयास खिंचा चला जाता है, देखें- "शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय;/ बालिका ही थी वह भी-/ सरलपन ही था उसका मन,/ निरालापन था आभूषण/।" कवि भी प्रेमसूत्र में बंधे पर यह प्रेम असफल रहा। कवि का हृदय विदीर्ण है यह देखकर कि गंगाजल जैसे पवित्र प्रेम को समाज ने 'पापाचार' कहा और अस्वीकार कर दिया। प्रेयसी की जगह कवि के जीवन में कोई न ले सका। अपने हृदय में बसी उस प्रेयसी की स्मृति को कवि नित अपनी मानसिक पूजा देते हैं। उसका शृंगार करते हैं। अपने आँखों के कपाट में बंद उसकी छवि का ध्यान करते हैं। "विधुर उर के मृदु-भावों से/ तुम्हारा कर नित नव-शृंगार/ पूजता हूँ मैं तुम्हें कुमारि!/ मूंद दुहरे दृग-द्वार!" (आंसू)। यह आत्मिक और सात्विक प्रेम न समाज से विद्रोह करता है न अपने प्रिय के प्रति मन में क्षोभ लाता है। वह अपने ही पवित्र भावों में रमा हुआ; कहता है, "करुण अतिशय उनका संशय/ छुड़ाते हैं जो जुड़े स्वभाव।"(आँसू)। प्रेयसी के प्रति उनकी उदात्त भावना का परिचय इससे भी मिलता है जब वे कहते हैं, "त्रिभुवन की भी तो श्री भर सकती नहीं/ प्रेयसी के शून्य, पावन-स्थान को।" तीनों लोकों की विधात्री शक्ति भी प्रेयसी का पवित्र जगह नहीं भर सकती। यहाँ विधात्री शक्ति को कम नहीं कहा जा रहा है बस प्रेम की पावनता की शक्ति और उसकी ऊँचाई दिखाई गई है। नारी रूप का चित्रण करते हुए कवि की सौंदर्य मुग्धता नजर आती है। सागर के जल, चांदनी और छाया जैसी प्राकृतिक छवियों में भी स्त्री की कल्पना की है। प्रकृति का पुजारी स्त्रीपूजा में भी मग्न लगता है। स्त्री के केश को उन्होंने उसका स्वर्गिक शृंगार कहा है। यही जानकार उन्होंने भी अपने बाल लंबे रखे हैं। ऐसी भावना वाली पंक्तियाँ 'नारी रूप' कविता के आरंभ में ही हैं। अपने बालों के लिए कवि की यह कल्पना उनकी स्त्री के प्रति पूज्य प्रेम भावना से प्रेरित जान पड़ती है। 'विनय' कविता स्त्री रूपी देवी का प्रार्थना गान है। इसमें कवि याचना भी करता है। स्त्री चित्रण में देह भावना बिल्कुल अनुपस्थित है। सखा के रूप में भी स्त्री का चित्रण किया है जैसे, 'वसंत श्री' कविता। इसमें कवि जानने को उत्सुक है कि वह कौन खेल रही

है? अपनी कई कविताओं में वे स्वयं बालिका के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। मादा भौंरे और चिड़ियों के लिए भी उन्होंने सुंदर शब्द गढ़ा है, जैसे- मधुप कुमारि, विहगबाला इत्यादि। 'वनबाला' 'वन्यदेवियाँ' और 'परियों' के साथ 'भिखारिणी' की छवि का भी प्रयोग किया है। "सखि! भिखारिणी-सी तुम पथ पर/ फैला कर अपना अंचल/ सूखे-पातों ही को पा क्या/ प्रमुदित रहती हो प्रतिपल? (छाया)। यह प्रयोग छाया को चित्रित करते हुए कवि ने किया है। कल्पना और स्वप्न के साथ यथार्थ का संयोजन भी कवि ने किया है। जल की लहरों में भी कवि ने स्त्री रूप देखा है। उसका दिव्य चित्रण किया है-"ओ अकूल की उज्जवल-हास!/ अरी अतल की पुलकित श्वास!/ महानंद की मधुर उमंग!/ चिर शाश्वत की अस्थिर लास!/ मेरे मन की विविध तरंग/ रंगिणी सब तेरे ही संग/ एक रूप में मिले अनंग।" (वीचि विलास)

प्रणय और वेदना : प्रेम विरही यह कवि सृष्टि के हर व्यापार में अपनी प्रियतमा को खोज रहा है। उसी को साकार देख रहा है। "देखता हूँ, जब पतला/ इंद्रधनुषी हल्का/ रेशमी घूंघट बादल का/ खोलती है कुमुद-कला;/ तुम्हारे ही मुख का तो ध्यान/ मुझे करता तब अंतर्धान;/ न जाने तुमसे मेरे प्राण/ चाहते क्या आदान!"(आंसू)। शाम का समय है। वर्षा के बाद आसमान में इंद्रधनुष छाता है। बादलों की धुँध छंट जाती है और चाँदनी का शुभ्र प्रकाश झिलमिल करने लगता है। इस छवि में प्रेयसी के रूप का ध्यान कर कवि अपने आप को भूल जाता है। अपने हृदय की विकलता का रहस्य वह समझ भी नहीं पा रहा है। वह प्रकृति की हर हलचल में अपनी प्रेयसी को क्यों देख रहा है? उसे या उसके प्राणों को उस सुकुमारी से भला क्या चाहिए? शरीर और आत्मा का मिलन यदि होते-होते रह जाए! तब कौन विकल न होगा! आकर्षण का विकल्प मिल सकता है पर प्रेम का क्या विकल्प है! विकलता का स्वीकार और आत्म का विस्तार, यही ना; जिस ओर कवि अपनी बाद की कविताओं में बढे भी हैं। पर अभी वे अपने संसार को इस दुःख में डूबा हुआ देख रहे हैं। "कहाँ है उत्कंठा का पार!!/ इसी वेदना में विलीन हो अब मेरा संसार!/ तुम्हें जो चाहो है अधिकार!/ टूट जा यहीं अब हृदय हार!!!" (उच्छवास)। प्रणय को कवि ने 'करुण' कहा है। कवि अपनी वास्तविक स्थिति पर हैरान भी है, "विरह है अथवा यह वरदान!/ कल्पना में है कसकती-वेदना,/ अश्रु में जीता, सिसकता गान है;/ शून्य आहों में सुरीले छंद हैं,/ मधुर लय का क्या कहीं अवसान है!"(आँसू)। यहीं कवि स्थापित करते हैं कि पहला कवि कोई वियोगी ही होगा। दुःख से जो मंजा हुआ है उसी की आह से हृदय को बाँध लेने वाली कविता निकल सकती है।

जीवन सत्य और मनोभाव : प्रकृति पर मानव जीवन का आरोपण करते हुए कवि भले उसके संतुलित समीकरण को अंत तक न ले जाते हों। पर बीच-बीच में कई जीवन सत्यों और मनोभावों के रहस्य से परिचय करा देते हैं। रोग और पाप का तो परिहार किया जा सकता है। परंतु संदेह जो अमूर्त है। उसका कुछ नहीं किया जा सकता। यह हृदय की कमजोरी है। इंसान का सबसे शक्तिशाली शत्रु यही है। द्रौपदी के रेशमी वस्त्र की भांति इसका कोई ओर-छोर नहीं है। संदेह आकाश में फैलनेवाला लता है जो स्वयं बिना ठौर का है पर मनुष्य को उल्लास विहीन, निर्बल कर देता है। इस संदेह रूपी 'पाले' ने ही कवि का अपनी प्रेयसी से मिलन नहीं होने दिया।

जिससे जीवन महज एक उच्छवास बनकर रह गया है। "अश्रुओं में रहता है हास,/ हास में अश्रुकणों का भास;/ श्वास में छिपा हुआ उच्छवास,/ और उच्छवासों में ही श्वास!" (उच्छवास, भादो)। ये संदेही लोग करुणता के पात्र हैं। जीवन क्या है? जीवन में मानव की भूमिका क्या है? जीवन बहुत सुंदर है। उसकी फुलवारी में सुंदर-सुंदर फूल हैं जो मन को आह्लादित करते हैं। अर्थात सुख और आनंद के बहुत साधन हैं यहाँ! पर जीवन का कर्म मार्ग बड़ा कठिन है और मानव का मन फूल-सा कोमल। इस जग की सुंदरता मानव से ही है। सुंदर मन वाले मानव से। अपने जीवन की तुलना मधुकर से करते हुए कवि कहते हैं, "मेरा मधुकर का-सा जीवन।/ कठिन कर्म है; कोमल है मन;/ विपुल मृदुल सुमनों से सुरभित/ विकसित है विस्तृत जग-उपवन!" मधुकर और फूल का साथ कुछ पलों के लिए ही होता है। 'मधुकर' विरहमग्न प्रिय का प्रतीक है। फिर अपने मन को सांत्वना देते हुए कवि कहते हैं, "सच नहीं होता सदा अनुमान है!/ कौन भेद सका अगम आकाश को?" इससे जीवन का सत्य भी व्यंजित होता है कि मनुष्य की अपनी सीमाएँ हैं। भविष्य पर उसका वश नहीं है। बस आज उसके हाथ में है। तभी कवि छाया की परसेवा की भावना को देखकर उससे सीखना चाहता है पर दुःख से दुखी होना। "पर-पीड़ा से पीड़ित होना/ मुझे सिखा दो, मद हीन।" (छाया)। दुःख को दूर करने का प्रयत्न उसे अनुभव करने के बाद ही आरंभ किया जा सकता है।

पौराणिक संदर्भ : 'अनंग' शीर्षक से एक लंबी कविता है। 'वीचि विलास' में भी इसका उल्लेख है। 'अनंग' कामदेव का पर्याय है। शिव ने जब कामदेव को भस्म कर दिया था तब रति बिलखती हुई उनके पास आई। रति को वरदान देते हुए शिव ने कामदेव को बिना शरीर के ही सबको प्रेरित करने की शक्ति दे दी। वाही अनंग है बाद में इसका जन्म कृष्ण कुल में हुआ और पुनः रतिसे मिलन भी। 'अनंग' ही इस संसार का आधार है, ऋतु परिवर्तन और नव जीवन तथा उल्लास सबकी सृष्टि की शक्ति इसमें है। यह प्रेम का प्रेरक देव है। संदेह के लिए "द्रौपदी का यह दुरंत दुकूल है!" कहा गया है। यह द्रुपद की पुत्री और पांडवों की पत्नी है। पांडवों और कौरवों के जुए के खेल में पांडवों ने इन्हें दांव पर लगाया और हार गए। बलात द्रौपदी को भवन से खींचकर राज दरबार में लाया गया। दु:शासन द्वारा उनका वस्त्रहरण करने की कोशिश की गई। यह वस्त्र बढ़ता ही रहा। द्रौपदी के सखा कृष्ण हैं। यह उनकी कृपा थी। 'छाया' कविता में छाया की तुलना दमयंती से की गई। 'नल और दमयंती' भारतीय प्रेम कहानी है। नल के बिछोह में दमयंती का मुख मलिन रहता है। छाया की म्लानता देख कवि उससे कहते हैं कि क्या तुम्हें भी दमयंती की भांति कोई नल छोड़ गया है। वामन डग, इंद्रजाल और इंद्रासन जैसे संदर्भ भी आए हैं। वृंदावन, व्रज और मथुरा का जिक्र भी आया है।

बोध प्रश्न

- पल्लव में वर्णित मुख्य विषयों पर प्रकाश डालिए।
- पल्लव शीर्षक की सार्थकता बताइए।
- पल्लव में आए पौराणिक संदर्भों का विवेचन करें।

(घ) पल्लव का कला पक्ष

काव्यभाषा: पल्लव की काव्यभाषा सरस, कोमल और माधुर्य गुण युक्त है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से यह वैविध्य भरा है। तद्भव और देशज शब्दों के साथ तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किया गया है। इनका भाषिक सह प्रयोग भी ध्यान खींचता है,जैसे- स्वर्णजाल, पावन-अंचल, सुरभित-हार, भग्न-उर, चिर-आख्यान, अभेद्य-पट, हिम-जल, शीतल-छाया इत्यादि। काया भाषा का प्रयोग भी यहाँ द्रष्टव्य है- "चूर्ण शिथिलता-सी अंगड़ाकर/ होने दो अपने में लीन।" इस तरह का प्रयोग बहुत कम है। ध्वनि सौंदर्य और चित्रात्मक काव्य भाषा की बहुलता है। इनकी विशेषता इनका सस्वर होना है। कविता की भाषा के संबंध में पंत का मानना है, "भाषा का और मुख्यतः कविता की भाषा का, प्राण राग है। राग ही के पंखों की अबाध उन्मुक्त उड़ान में लयमान होकर कविता सांत को अनंत से मिलाती है। राग ध्वनि-लोक निवासी शब्दों के हृदय में परस्पर स्नेह तथा ममता का संबंध स्थापित करता है।" एक उदाहरण: "तजकर तरल तरंगों को,/ इंद्र-धनुष के रंगों को/ तेरे भ्रू-भंगों से कैसे बिंधवा दूँ निज मृग-सा मन?/ भूल अभी से इस जग को।" इन रागबद्ध पंक्तियों के अंत में ओकार की ध्वनि आई है जो पंक्ति का सौंदर्य बढ़ाती है। अपने शब्दचयन की प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए पंत ने पल्लव की भूमिका में लिखा है, "भ्रू से क्रोध की वक्रता, 'भृकुटी' से कटाक्ष की चंचलता, 'भौंहों' से स्वाभाविक प्रसन्नता और आह्लाद का हृदय में अनुभव होता है।" शब्द चयन और प्रयोग में अर्थ के सूक्ष्म अंतर पर कवि सचेत रहे हैं। शब्दों का नवनिर्माण भी इन्होंने किया और काव्य की संगीतात्मकता की रक्षा के निमित्त जितना आवश्यक हुआ इन्होंने व्याकरण के नियमों को भी तोड़ा-मरोड़ा। शब्दों के नवनिर्माण में उपसर्ग, प्रत्यय, संधि और समास का उपयोग किया गया। भाव की तीव्रता को बढ़ाने के लिए विशेषण का प्रयोग तीनों रूपों में किया गया है, जैसे – सुंदर, सुंदरतर, सुंदरतम, करुण, करुणतर, करुणतम। आगे काव्य शैली का विवेचन किया जा रहा है।

काव्यरूप: 'पल्लव' प्रगीतकाव्य है जो पश्चिम से आयातित काव्यरूप है। इसे 'लिरिक' नाम से जाना जाता है। इसके प्रमुख तत्व हैं- गेयता, भावप्रवणता, आत्माभिव्यक्ति, भावान्विति और संक्षिप्तता। पल्लव के गीतों में गेयता है। आत्माभिव्यक्ति भी है। भावनाएँ कहीं प्रबल हैं और कहीं स्थिर। भावों की एकसूत्रता के निर्वाह का आरंभ हुआ है पर ये अपने चरम तक क्रम से विकसित होकर नहीं पहुँच सकी हैं। एक मुख्य भाव के बीच में कवि ने कई भावों को गुंथा है। उनकी यह चेष्टा सहज है। अपने भाव रूपी हृदय के गान को उन्होंने ज्यों-का-त्यों रख दिया। अपनी शब्दशक्ति से उसके बाह्य रूप को मन भर संवारा है।

रस : सौंदर्य और प्रकृति के पुजारी पंत का काव्य मधुरता भरा और सरस है। 'आँसू' और 'उच्छवास' में वियोग शृंगार के दर्शन होते हैं। कुछ अन्य गीतों में भी इसके साथ शांत और करुण रस का प्रयोग हुआ है। इन्होंने वीभत्स रस पर भी अपनी दृष्टि डाली है। उदाहरण: "अखिल यौवन के रंग उभार/ हड्डियों के हिलते कंकाल/ कचों के चिकने, काले व्याल/ केंचुली, कांस, सिवार,/ गूँजते हैं सबके दिन चार,/ सभी फिर हाहाकार!" (परिवर्तन)

अलंकार : अलंकार के संदर्भ में पंत का विचार है, "अलंकार भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। वे भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णता के आवश्यक उपादान हैं। वे वाणी के आचार, व्यवहार, रीति, नीति हैं। पृथक स्थितियों के पृथक स्वरूप, भिन्न अवस्थाओं के भिन्न चित्र हैं।" शब्दालंकार और अर्थालंकार का विपुल प्रयोग किया गया है। रूपक और उपमा आरंभ से अंत तक बहुतायत में हैं।

अनुप्रास: "कौन तुम अतुल, अरूप, अनाम?/ अये अभिनव अभिराम।" (शिशु)

पुनरुक्ति प्रकाश: "करा दो ना कुछ कुछ मधुपान।" (मधुकरी)

मानवीकरण: चला मीन दृग चारो ओर,/ गह-गह चंचल-अंचल छोड़,/ रुचिर-रुपहरे-पंख पसार/ अरी वारि की परी किशोर (वीचि विलास)

अप्रस्तुत विधान: गूढ़ कल्पना सी कवियों की/ अज्ञाता के विस्मय सी/ ऋषियों के गंभीर हृदय सी/ बच्चों के तुतले भय सी। (छाया)

छंद : पल्लव में मात्रिक छंदों का प्रयोग किया गया है। छंद के संबंध में पंत का विचार है, "छंद अपने नियंत्रण से राग को स्पंदन-कंपन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दों के रोड़ों में एक कोमल सजल कलरव भर, उन्हें सजीव बना देते हैं। वाणी की अनियमित साँसें नियंत्रित हो जाती, तालयुक्त हो जाती; उसके स्वर में प्राणायाम, रोओं में स्फूर्ति आ जाती, राग की असंबद्ध झंकारें एक वृत्त में बंध जाती, उनमें परिपूर्णता आ जाती है।" उनके अनुसार मुक्त काव्य के अंतर्गत छंदों की गति बदलने से पहले एक विश्राम लेना आवश्यक होता है। ऐसा करने से लय बाधित नहीं होता है जिससे रागात्मकता बनी रहती है, उदाहरण:"शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय;/ बालिका ही थी वह भी-/ सरलपन ही था उसका मन,/ निरालापन था आभूषण/।" इस छंद में 'बालिका ही थी वह भी' पंक्ति विश्राम है। "शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय" यह 27 मात्रा का सरसी छंद है। उसके बाद विश्राम है, "बालिका ही थी वह भी"। फिर 15 मात्रा का जयकरी छंद अंतिम दो पंक्तियों में है। 16 मात्रा और 14 मात्रा के छंदों का भी प्रयोग किया है। इसके अलावा भी हैं। उनकी कविताओं में जहाँ कल्पना उत्तेजित होने का भाव भरती है वहां रोला छंद का प्रयोग हुआ है। रोला सममात्रिक छंद है जिसके प्रत्येक चरण में 24 मात्रा होती है। 'परिवर्तन' कविता में रोला के अतिरिक्त 16 मात्रा का छंद आया है।

प्रतीक और बिंब: पल्लव में दृश्य बिंब, श्रव्य बिंब, स्पर्श बिंब और घ्राण बिंब का विपुल प्रयोग हुआ है। आस्वाद्य बिंब बहुत कम हैं। बिंबों के प्रयोग से भाषा की चित्रात्मकता बढ़ी है।

दृश्य और भाव बिंब: "श्रमित, तपित अवलोक पथिक/ रहती या यों दीन, मलीन?/ ऐ विटप की व्याकुल-प्रेयसी!/ विश्व वेदना में तल्लीन।/ दिनकर-कुल में दिव्य-जन्म पा/ बढ़कर नित तरुवर के संग,/ मुरझे पत्रों की साड़ी से/ ढँक कर अपने कोमल अंग;" (छाया)

दृश्य और श्रव्य बिंब: "गिरि का गौरव गाकर झर झर/ मद से नस नस उत्तेजित कर,/ मोती की लड़ियों से सुंदर/ झरते हैं झाग भरे निर्झर।/ गिरिवर के उर से उठ-उठ कर/ उच्चाकांक्षाओं से तरुवर/ हैं झाँक रहे नीरव नभ पर/ अनिमेष अटल कुछ चिंतापर" (उच्छवास)

दृश्य, स्मृति और भाव बिंब: मेरा पावस ऋतु-सा जीवन/ मानस-सा उमड़ा अपार मन;/ गहरे, धुँधले, धुले, साँवले/ मेघों से मेरे भरे नयन। आँसू

दृश्य, श्रव्य और भाव बिंब: भीरू-झींगुर-कुल की झनकार/ कंपा देती तंद्रा के तार;/ न जाने खद्योतों से कौन/ मुझे पथ दिखलाता तब मौन। (मौन निमंत्रण)

पंत ने बिबों का संश्लिष्ट प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार प्रतीकों का भी चयन वैविध्य भरा है, जैसे- आँसू के लिए 'नयन के बाल', यौवनकालके लिए 'मधुकाल', प्रेमी के लिए 'मधुप', 'विहगबाल','मधुकर', विषाद के लिए 'पतझड़', मानसिक आकुलता के लिए 'झंझा', मन में उठते भाव के लिए 'तरंग', सांसारिक सुख के लिए 'अरण्य चीत्कार' का चयन किया। उनकी सभी कविताएँ प्रतीकात्मक है। कहीं प्रेमी के लिए प्रतीक ग्रहण किया गया तो कहीं ब्रह्म के लिए।

बोध प्रश्न

- पल्लव की काव्यभाषा की चर्चा कीजिए।
- पंत की काव्य शैली पर प्रकाश डालिए।

14.4 पाठ सार

'पल्लव' संग्रह की कविताएँ भाव, कल्पना और चिंतन का मिश्रित रूप हैं। प्रकृति के साथ स्त्री, जीवन, प्रेम, प्रणय एवं विविध मनोभावों को अपनी कविता का विषय बनाया है। इन सबको कविता में ढालने के लिए प्रकृति से विविध उपमाओं को चुनकर; उसे अपनी कल्पना शक्ति से रुचिकर और ग्राह्य शब्दों में ढाला है। पंत की कल्पना प्रधान सौंदर्य दृष्टि हर जगह प्रमुख रही है। 'वीचि विलास' कविता में जलक्रीड़ा के आनंद की अनुभूति का वर्णन किया गया है। जल की लहरों के शोरऔर उसकी को संबोधित करते हुए कवि उससे उसे अपने हृदय में भर देने का विनय करते हैं। जलक्रीड़ा का आनंद बहुत ऊँचा है। स्वर्ग के सुख के समान इस आनंद से यह संसार अनभिज्ञ है। यथार्थ की दुनिया में विचरण करने वाले प्राणी कल्पनालोक का आनंद कहाँ ले पाते हैं! समयाभाव है! जल की ये चंचल लहरें कैसे चाँद के किरनों का झूला झूलती हैं। उस जल को किशोर परी का रूप देकर विविध उपमानों के संग कवि उसकी तुलना करता है, जैसे-बिना नाल के फेनिल फूल, छुईमुई, स्वर्ण-स्वप्न इत्यादि। इस कविता में प्रणय के लिए कपूर, 'कोमल' और 'क्रूर' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है। "निज अधरों पर कोमल,क्रूर/ शशि से दीपित प्रणय कपूर" यह जल की लहरों में कल्पित 'परी' के संदर्भ में है। 'मौन निमंत्रण' कविता में एक अज्ञात मौन प्रकृति की हर हलचल में कवि महसूस करता है और पाता है कि वह उसे बुला रही है। रात्रि, वर्षा, वसंत, सागर की लहरों का शब्दचित्र खींचा है। यह मौन कभी उसे फूल की सुगंध बनकर बुलाती है तो कभी वायु, और कभी जुगनू की टिमटिम रौशनी से। स्पष्ट है प्रकृति

के बदलाव उसके शृंगार की ओर कवि आकृष्ट होता है। उसे अपलक निहारता है। और उसे देखने में अपना सुख-दुःख भुला बैठता है। जो मौन उसे इस ओर प्रवृत्त करती है उससे वह अनजान है। एक अज्ञात रहस्य की खोज इस कविता में है। इसपर रहस्यवाद का प्रभाव कहा जा सकता है। 'अनजाने मौन' को कवि अपने सुख-दुःख का सहचर कहता है। इसी प्रकार 'स्वप्न' कविता 'सोया हुआ शिशु अपने अतीत की कौन सी सुधि खोजता है?' इसी भाव पर केंद्रित है। यहाँ भी दो सखियाँ इस अज्ञात रहस्यमय अतीत की चर्चा करती हैं जो स्वप्न में दिखाई देता है। एक सखी बोल उठती है, "स्वप्न जग है केवल स्वप्न असार/ अर्पित कर देती मारुत को/ वह अपने सौरभ का भार।" पंत की अन्य कल्पना प्रधान रचनाएँ हैं- 'विश्व वेणु', 'निर्झर गान', 'निर्झरी', 'नक्षत्र' इत्यादि। 'छाया' की अंतिम पंक्ति भी रहस्य भावना का परिचय देती है, देखें "फिर तुम तम में, मैं प्रियतम में/ हो जाएँ द्रुत अंतर्धान!" छाया अंधकार में विलीन हो जाए और कवि अपने प्रियतम में। यह प्रियतम कवि की प्रेयसी नहीं है यहाँ परमोच्च सत्ता की ओरइशारा है। छाया भी वृक्ष की प्रेयसी है, अंधकार की नहीं। वह विलीन अंधकार में होती है। संग्रह की अंतिम कविता छायाकाल है। इससे पहले 'परिवर्तन' कविता है जिसमें पुराने युग को स्वर्णकाल कहा गया है। जीवन के विविध चरण बालपन, यौवन और बुढ़ापे में मनुष्य की परिवर्तित जीवन शैली, उसके जीवन के सुख, आनंद और मृत्यु के साथ ज्ञान-लोकसेवा इत्यादि विषयों की संक्षिप्त चर्चा है। मनुष्य की जीवन शैली में परिवर्तन हो रहा है। उसकी सोच परिवर्तित हुई है और इससे समाज परिवर्तित हुआ है। समाज की सुख-शांति जो खो रही है उसका चित्रण कवि ने किया है, देखें- "रुधिर के हैं जगती के प्रात,/ चितानल के ये सायंकाल;/ शून्य-निःश्वासों के आकाश,/ आँसुओं के ये सिंधु विशाल;/ यहाँ सुख सरसों, शोक सुमेरु-/ अरे जग है जग का कंकाल!!/ वृथा रे, ये अरण्य चीत्कार,/ शांति-सुख, है उस पार"। वीभत्स यथार्थ का चित्रण करने में भी प्रकृति का साथ नहीं छूटा है। कवि जीवन के उस पार जहाँ शांति है, वहाँ जाने की बात करता है। जीवन से उसपार तो इस लोक का पार हुआ। जीवन का अर्थ सुख-दुःख और इसके सृजन,पालन और संहार की दार्शनिकता की भी झलक इस कविता में है। स्याही की बूंद, याचना, विश्वव्याप्ति, सोने का गान, बालापन, विश्वछवि, स्मृति इत्यादि कविताओं में भी कवि ने प्रकृति को आधार बनाते हुए जीवन को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने की कोशिश की है। बादल कहते हैं, "हम सागर के धवल-हास हैं/ जल के धूम गगन की धूल/ अनिल-फेन, उषा के पल्लव,/ वारि-वसन, वसुधा के मूल;"। विश्व-छवि कविता में गुलाब के फूलों से कवि अपने जीवन की समता देते हैं। गुलाव काँटों में खिलता है। वह वहां मुस्कुराता है। जग में सुगंध बिखेरता है। बहुत बार मनुष्य एक कांटा चुभने से रोने लगता है। अवसाद से घिर जाता है। कवि ने भी कांटे सहे हैं पर वे मुस्कुरा रहे हैं और अपनी लेखनी से मुस्कुराहट, आनंद और उत्कर्ष का पाठ पढ़ा रहे हैं।

विद्वानों ने पल्लव पर कई अंग्रेजी समीक्षकों और भारतीय विद्वानों का प्रभाव देखा है। भावग्रहण करने की छूट साहित्य में रहती है। तभी एक ही भाव पर केंद्रित कई तरह की रचनाओं का आस्वाद्य लेकर हम उसकी तुलना करने की ओर प्रवृत्त होते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी एक पंक्ति का उदाहरण दिया है जो पंत की पंक्ति के समान है, देखें- "सुमनदल चुन

चुन कर निशि भोर/ खोजना है अजान वह छोर।(पंत) ....so We are driven./ onward and upward in a wind of beauty.(Abercrombe). छायावाद और पंत की काव्यकला को समझने के लिए पल्लव उत्कृष्ट कृति है।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से आप निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त कर सकते हैं-

1. पल्लव की कविताओं में कल्पना प्रधान तत्व है। इसके साथ इसमें रहस्य और जिज्ञासा की भावना भी समन्वित हुई है। अपने हर प्रयास में उन्होंने मुख्य रूप से प्रकृति का ही चित्रण किया है।
2. पल्लव की भाषा प्रवाहमयी, चित्रात्मक, रससिक्त और आलंकारिक है। भाषा और भाव में मैत्री संबंध है। 'कला कला के लिए' सिद्धांत का उत्कृष्ट नमूना है पल्लव।
3. "छोड़ द्रुमों की मृदु छाया/ तोड़ प्रकृति से भी माया,/ बाले! तेरे बाल-जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन?/ भूल अभी से इस जग को"- 'मोह' कविता के इस प्रथम छंद को रामस्वरूप चतुर्वेदी ने छायावाद के रचनात्मक घोषणापत्र का आरंभिक अंश माना है।
4. पंत पर रवीन्द्रनाथ का प्रभाव सर्वाधिक दिखाई देता है। 'पंत और पल्लव' नामक अपनी कृति में इस प्रभाव को सोदाहरण निराला ने दिखाया है।
5. मानव के विविध भावों को प्राकृतिक बिंबों के साथ सुंदरता से अंकित करने की चेष्टा की गई है। मर्म को उन्होंने छुआ है पर उनकी व्यंजना मार्मिकता की ऊंचाई को नहीं छू पाई; कलात्मकता में ही लिपटी रही।

14.6 शब्द संपदा

1. अधर = नीचे का होंठ
2. उच्छ्वास = आह भरना
3. ताल = तालाब
4. द्रुम = वृक्ष
5. भग्न = टूटा हुआ
6. भावप्रवणता = भावुकता
7. सुमेरु = सर्वश्रेष्ठ, सबसे ऊँचा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न
निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पल्लव के माध्यम से प्रकृति चित्रण का वर्णन कीजिए।
2. पल्लव में निहित पंत की स्त्री भावना का उल्लेख कीजिए।
3. पल्लव में आए हुए जीवन सत्य एवं मनोभावों का वर्णन कीजिए।
4. पल्लव के कला पक्ष का विश्लेषण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न
निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. पल्लव की काव्यभाषा पर चर्चा कीजिए।
2. पल्लव की प्रतीक और बिंब योजना पर प्रकाश डालिए।
3. पल्लव में प्रयुक्त छंद और अलंकारों का विवेचन कीजिए।
4. पंत की कल्पनाशीलता पर अपना मत प्रकट कीजिए।

खंड (स)

I सही विकल्प चुनिए

1. पल्लव का रचनाकाल क्या है? ( )

   (अ) 1926 (आ) 1826 (इ) 1925 (ई) 1921

2. पल्लव का मुख्य तत्व क्या है? ( )

   (अ) प्रेम (आ) प्रणय (इ) कल्पना (ई) रहस्य

3. 'आँसू' कविता का मुख्य भाव क्या है? ( )

   (अ) प्रेम स्मृति (आ) सामाजिकों को कोसना (इ) रोना (ई) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. पल्लव में वर्ष ....से ....तक की रचनाएँ संकलित हैं।

2. पल्लव .... की रचना है।

3. ये रचनाएँ पहले ....और .... पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी थीं।

4. पंत की प्रसिद्ध कल्पनापूर्ण कविता बादल ....की ....से प्रभावित है।

III. सुमेल कीजिए

i)	रवींद्र	(अ) अवसाद
ii)	पतझड़	(आ) मधुकर
iii)	प्रिय	(इ) सांसारिक सुख
iv)	अरण्य चीत्कार	(ई) उर्वशी

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल

2. पल्लव, सुमित्रानंदन पंत

3. पंत और पल्लव, निराला

4. सुमित्रानंदन पंत, शचीरानी गुर्टु

5. पंत रचना संचयन, कुमार विमल